সঙ্গু ৩৭



सोंप्तिकपद्ये १

महाभारत

भाषा गाण्य-समेत संपादक श्रीपाद दामोदर सातवद्रेकर, स्त्राच्याय मंडल, श्रीध कि सातारा

छपकर तैष्यार है।

- १ आदिपर्व । पृष्ठ संख्या ११२५. मूल्य मा आ से ६) क
- र समापन । पृष्ठ संख्या ३५६. मूल्य म. सा. सेर) ह
- ३ वनपर्व । पृष्ठ संख्या १५३८ मूल्य मः आ से ८) है.
- 🐰 विराटपर्व । पृष्ठ संस्था २०६ मृत्यः मः आः से १॥) ह.
- प उच्ची गपूर्व पृष्ठ संख्या १५३ मृत्या मा ला. से ६) क
- द्व भीषमपूर्व । पृष्ठ संस्था ८०० मन्य मा आ से ४) क
- ७ द्वाणपूर्व युष्ठ लेख्या (३६४ मूल्य में आं) से आ) क
- ८ क्योप्त । पृष्ठ संख्या ६३७ म्. म० आ० से ३॥) हे

[९] महाभारतकी समालाचना

मंत्री स्वाध्याय मंडल, अधि, (जि. सातारा)



श्री - महर्षि - च्यास-प्रणीत

महाभारत।

(१०) सौप्तिक पर्व।

(भाषाभाष्य समेत)

सम्पादक और प्रकाशक श्रीपाद दामोदर सातवळेकर स्वाध्यायमण्डल, औंघ (जि० साताराः)

> संवत् १९८६, जन १८५१, सन १९५९,

दक्षतासे सुखपाप्ति।

शक्नोति जीवितुं दक्षो नालसः सुलमेधते । दृद्यन्ते जीवलोकेऽस्मिन्द्क्षाः प्रायो हितैषिणः ॥ सीरितकपर्व अ० २ । १५ ्र द अ स्वाप करते व जार स्वाप करते क्षेत्र क् '' दक्ष और उद्योगी पुरुष इस जगत् में सुखसे जीवित रहता है, और आरुसी मनु-व्यको कदापि सुख नहीं होता; क्यों कि इस जगत् में प्रायः दक्ष और उद्योगी पुरुपही हित साधन करते हुए दीखते हैं।"

भुद्रक तथा प्रकाश ६ -श्रीपाद दामोदर सातवळेकर, स्वाध्याय मंदक; भारतभुद्रणाख्य श्रींघ (जि. सातारा)



6965.D.

श्री महर्षिच्यासप्रणीतम् ।

म हा भा र त म्।

सौप्तिक पर्व।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
॥ श्रीवेद्व्यासाय नमः ॥
नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥ १ ॥
सञ्जय उवाच— ततस्ते सहिता वीराः प्रयाता दक्षिणामुखाः ।
उपास्तमनवेलायां शिविराभ्याशमागताः ॥ १ ॥
विमुच्य वाहांस्त्वारिता भीताः समभवंस्तदा ।
गहनं देशमासाय प्रच्छन्ना न्यविश्वन्त ते ॥ २ ॥
सेनानिवेशमभितो नातिदूरमवस्थिताः ।
निकृत्ता निशितैः शस्त्रैः समन्तात्श्वतविश्वताः ॥ ३ ॥
दीर्धमुद्धं च निःश्वस्य पाण्डवानेव चिन्तयन्।

स्वीत्तिक पर्वते प्रथम बस्याय । नारायण, नरोत्तम नर और देवी सरस्वतिको नमस्कार कर पश्चात जय इतिहास कहना चाहिये ॥

सञ्जय बोले, हे राजा घतराष्ट्र ! तव वे तीनों वीर दुर्योधनके पाससे दक्षिण-की ओरको चले, किर सन्ध्याके समय देरोंके पास आकर भयसे व्याकल होग- ये, फिर रथोंसे घोडे छोडकर छिपकर डेरोंके पास बैठे, उस समय ये तीनों वीर बाणोंके घानोंसे न्याकुल थे, घोडे थक गये, प्यासके मारे मुख सल रहे थे, राजाके मरनेसे कोघ और जोकसे न्याकुल थे, तब थोडे समय तक वहां बैठे। (२-३) अनन्तर पाण्डवीकी सेनाका भयानक

866666666666666666666666666666699339 श्रुत्वा च निनदं घोरं पाण्डवानां जयैषिणाम् ॥ ४ ॥ अनुसारभणाद्गीताः प्राङ्मुखाः प्राद्रवन्युनः । ते मुहूर्त्तात्ततो गत्वा आन्तवाहाः पिपासिताः ॥५॥ नामृष्यन्त महेष्वासाः क्रोघामर्थवञ्चं गताः। राज्ञो वधेन सन्तप्ता सुहूर्त्तं समवस्थिताः 11 & 11 धृतराष्ट्र उवाच-अश्रद्धेयमिदं कर्म कृतं भीमेन सञ्जय। यत्सनागायुतप्राणः पुत्रो मम निपातितः 11011 अवध्यः सर्वभूतानां चल्रसंहननो युवा । पाण्डवैः समरे पुत्रो निहतो मम सञ्जय 11611 न दिष्टमभ्यतिकान्तं शक्यं गावल्गणे नरैः। यत्समेख रणे पार्थैः पुत्रो मम निपातितः। 11911 अद्रिसारमयं नूनं हृद्यं मम सञ्जय । इतं पुत्रदातं भूत्वा यन्न दीर्णं सहस्रधा 11 80 11 कथं हि बृद्धमिथुनं हतपुत्रं भविष्यति । न ह्यहं पाण्डवेयस्य विषये वस्तुमुत्सहे 11 88 11 कर्ष राज्ञः पिता भृत्वा स्वयं राजा च सञ्जय ।

ज्ञब्द सुनकर उन्होंने जाना कि ये सब हमें मारनेको इधर ही चले आते हैं। तब भयसे व्याक्तल होकर ऊंचे और गर्म सांस लेते हुथे, पाण्डवोंका विचार करते हुये पूर्वकी और भागे। (४-६)

घृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! भीमसेन-ने युद्धमें हमारे पुत्रको मारडाला यह बात सुनकर हमें विश्वास नहीं होता. क्यों कि दश सहस्र हाथियोंके समान बछवाला तरुण दुर्योधन सीमसेनके हाथसे मारा गया, यह सुनकर हमें निश्वय नहीं होता,क्यों कि उसका श्वरीर वजने समान था और उसे कोई भी

नहीं मार सकता था। (७-८) हे गालवगण प्रत्र! पाण्डवोंने दुर्यो-धनको मारडाला यह सुनकर हमें निश्रय होता है कि कोई मनुष्य प्रारब्धको नहीं

नांघ सक्ता।(९)

हे सञ्जय ! सौ प्रत्रोंको भीमसे परा सुन करके मेरा हृदय फट नहीं गया। इससे जानता हूं कि यह पत्थरसे भी अधिक कठोर है, अब इम दोनों बढ़ों-की क्या दक्षा होगी ? मैं कदापि ग्रधि-ष्टिरके राज्यमें न रह सक्तंगा, हाय ! आप ही राजा और राजाका पिता हो-

प्रेच्याय १] १० सीविक्यर्व ।

प्रेच्च सुत्र प्रवर्तेयं पाण्डवेयस्य शासनात् ॥ १२ ॥
आज्ञाण्य एपिवीं सर्वी स्थित्वा सूर्विन सक्षय !
येन पुत्रशतं प्र्णमेकेन निहतं मम ॥ १३ ॥
कृतं सत्यं वचस्तस्य विदुरस्य महात्मनः ।
अकुर्वता वचस्तेन मम पुत्रेण सक्षय ॥ १४ ॥
कथमस्य भविष्यामि प्रेष्यभूतो दुरन्तकृत् ।
कथं भीमस्य वाक्यानि श्रोतुं श्रक्ष्यामि संजय ॥१५॥
अधमेंण हते तात पुजे दुर्योघने मम ।
कृतवर्मा कृपो द्रौणिः किमकुर्वत सक्षय ॥ १६ ॥
सक्षय उवाच— गत्वा तु नावका राजज्ञातिद्रमवस्थिताः ।
अपश्यन्त वनं घोरं नानाहुमलताष्ट्रतम् ॥ १७ ॥
ते सुहूर्त्तं तु विश्रम्य लच्धतायेष्ट्योच्तमेः ।
स्यीस्तमनवेलायां समासेतुं नानाप्रकृतम् ॥ १८ ॥
नानान्तर्गणेषुं नानाप्रक्षिणाणाष्ट्रतम् ॥ १८ ॥
नानात्रायोधः समाक्षीणं नानाप्रकृत्योच्तिमः ।
स्यीस्तमनवेलायां समासेतुं नानाप्रकृत्ये ॥ १८ ॥
नानात्रायोधः समाक्षीणं नानाप्रकृत्ये ॥ १८ ॥
स्यीस्तावत्वल्यं नीत्रोत्यल्यसमायुत्रम् ॥ १० ॥
किसे रहंगा १ हे सज्जय ! सव प्रक्वीको
अपनी आज्ञामं चलाकर राजोंके शिर्य
पर रहकर अब युधिष्टिरकी आज्ञामं कैसे
चलंगा १ १० –१२)
महात्मा विदुरको वात कुल न मानी
हसीसे यह आपनि आई ! हे सज्जय !
विसे से से पुत्रोको मारा उस
भागितेनके वच्नोंको में कैसे सह सक्तुः
वा १ हे सज्जय ! जव भोमसेनने हमारे
युत्र दुर्योधनको अधर्मसे मारहाला तव
कृत्याचां, अत्रत्रवामा और कृत्वयांने

प्रविद्य तद्वनं घोरं वीक्षमाणाः समंततः। शाखासहस्रसंछन्नं न्यग्रोधं दहशुस्ततः 11 38 11 उपेख तु तदा राजन् न्यग्रोधं ते महारथाः। दह्यार्द्धिपदां श्रेष्ठाः श्रेष्ठं तं वै वनस्पतिम् ॥ २२ ॥ तेऽवतीर्यं रथेभ्यश्च विप्रमुच्य च वाजिनः। उपस्पृक्य यथान्यायं संध्यामन्वासत प्रभो 11 23 11 ततोऽस्तं पर्वतश्रेष्टमनुप्राप्ते दिवाकरे । सर्वस्य जगतो घात्री शर्वरी समपद्यत 11 58 11 ग्रहनक्षत्रताराभिः संपूर्णाभिरलंकतम् । नभोंशुकामिवाभाति प्रेक्षणीयं समंततः 11 34 11 इच्छया ते प्रवल्गंति ये सत्वा रात्रिचारिणाः। दिवाचराश्च ये सत्वास्ते निद्रावदामागताः रात्रिंचराणां सत्वानां निर्घोषोऽसूत्सुदारुणः। ऋव्यादाश्च प्रमुदिता घोरा प्राप्ता च शर्वरी तिसन्रात्रिमुखे घोरे दुःखद्योकसमन्विताः। कुतवर्मा कृपो द्रौणिरूपोपविविद्युःसमम् तत्रोपविष्ठाः शोचन्तो न्यग्रोधस्य समीपतः । तमेवार्थमतिकान्तं क्रुरुपाण्डवयोः क्षयम् निद्रया च परीताङ्गा निषेदुर्धरणीतले।

ඹීරල්වේ ඉදින් ඉදින් ඉදින් මෙන් මෙන් මෙන් මෙන් මෙන් මෙන්න මෙ चलते वीरोंने उस वनमें एक उत्तम जल भरे,उत्तम नीले कमल और सहस्रों सफेद कमल आदि फूलोंसे भरा, एक तालाव देखा और उसीके तटपर अनेक शाखावाला एक वरगदका बुक्ष था, तब वे रथोंसे उतर घोडोंको रथसे खोलकर जलस्पर्ध करके विधि पूर्वक सन्ध्या करने लगे। तब भगवान् सूर्य भी अस्ताचलके शिखरपर पहुंच गए और

समय नक्षत्र और तारोंसे भरा आकाश ऐसा सुन्दर दीखने लगा, जैसे सफेद विन्दु सहित नीलावस; रात्रिमें घूमने-वाले जनतु घूमने लगे । और मयानक शब्द करने लगे, मांस खानेवाले जन्तु प्रसन्त होने लगे, दिनमें घूमनेवाले सब सो गये, उस भयानक घोर रात्रिके प्रथम पहरमें शोकसे व्याकुल तीनों वीर एक खानमें वैठकर विचार करने लगे, और उस ही करकल नाशके लोको

श्रमेण सुदृढं युक्ता विक्षता विविधैः शरैः 11 30 11 ततो निद्रावशं पाप्तौ कृपभोजौ महारथौ । सुखोचितावदुःखाहौं निषण्णौ घरणीतले 11 38 11 तौ तु सुप्तौ महाराज अमशोकसमन्वितौ । महाईशयनोपेतौ भूमावेव द्यानाथवत् 11 57 11 क्रोधामर्षवर्शं प्राप्तो द्रोणपुत्रस्तु भारत। न वै सा स जगामाथ निद्रां सर्प इव श्वसन् ॥ ३३ ॥ न लेभे स तु निद्रां वै दह्यमानो हि मन्यूना। वीक्षांचके महावशहस्तद्वनं घोरदर्शनम् 11 88 11 वीक्षमाणो बनोहेशं नानासत्वैर्निषेवितम् । अपर्यत महाबाहुन्धेग्रोधं वायसैर्युतम् 11 34 11 तत्र काकसहस्राणि तां निशां पर्यणामयन्। स्रखं स्वपंति कौरच्य पृथक् पृथगुपाश्रयाः 11 35 11 सुप्तेषु तेषु काकेषु विश्रव्धेषु समंततः। सोऽपइयत्सहसा यान्तमुळुकं घोरदर्शनम् 1 39 1 महास्वनं महाकायं हर्यक्षं बश्चपिंगलम्। सुदीर्घघोणानखरं सुपर्णमिव वेगितम् 11 36 11 सोऽथ शब्दं मृदुं कृत्वा लीयमान इवांडजः। न्यग्रोधस्य ततः ज्ञाखां प्रार्थयामास भारत ॥ ३९ ॥

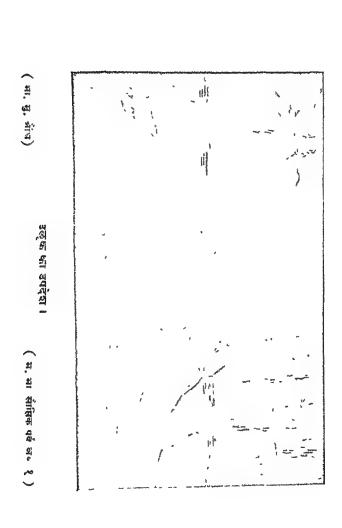
व्याकुल होगये। (२०-२९)

उस समय तीनों परिश्रम, घाव और निद्रासे व्याक्तल थे, इसलिये पृथ्वीमें लोट गये, तब सदासे सुख मोगनेवाले, दुःख मोगनेमें असमर्थ, शोकसे न्याकुल, उत्तम शय्यामें सोने योग्य महारथ कुपाचार्य और कृतवर्मा, अनाथके समा-न पृथ्वीहीमें सोगये; परन्तु क्रोध मरे अञ्चत्थामाको निद्रा न आई और सां-

क्रोधसे भरकर महावाहु, अस्वत्थामा उस अनेक जन्तुओंसे मरे घोर वनको देखने लगे । फिर उस बरगदके ऊपर को देखा। (३०-३५)

हे महाराज ! उस चरगद पर सहस्रों कौर्वे निःसन्देह सो रहे थे, उसी समय एक भयानक शब्दनाला बढे शरीर नहों और कड़ी आंखवाला और गरु डके समान वेगवाला उछ आया तब उसने चुप होकर उन सोते हुये कौओं-

पानिकारवे विश्व क्षित्र क्षेत्र काट दिया और काट दिया और किसीके पक्ष काट दिये, किसीके प्रेत काट दिये कार्य के पान्त कार्य पाण्डवाके नारास्त कार्य कार्य पाण्डवाके नारास्त कार्य के पान्त कार्य के पान्त कार्य के पान्त कार्य क



छद्मना च भवोत्सिद्धिः शत्रूणां च क्षयो महान् । ततः संशयितादर्थायोऽर्थो निःसंशयो भवेत् ॥ ४९ ॥ तं जना वह मन्धंते ये च शास्त्रविशारदाः। यचाप्यत्र भवेद्वाक्यं गहिंतं लोकनिन्दितम् ॥ ५० ॥ कर्तव्यं तन्मनुष्येण क्षत्रधर्मेण वर्तता। निन्दितानि च सर्वाणि क्रित्सतानि पदे पदे ॥ ५१ ॥ सोपधानि कतान्येव पाण्डवैरकतात्मभिः। अस्मिन्नर्थे पुरा गीताः श्र्यंते धर्मचिन्तकैः श्होका न्यायमवेक्षाद्भिस्तत्त्वार्थास्तत्त्वदार्शीभिः। परिश्रान्ते विदीर्णे वा भुञ्जाने वाऽपि शञ्जभिः ॥५३॥ प्रस्थाने वा प्रवेशे वा प्रहर्तेच्यं रिपोर्थेलम् । निदार्तमर्थरात्रे च तथा नष्टप्रणायकम् 11 68 11 भिन्नयोधं षलं यच द्विधायुक्तं च यद्भवेत्। इत्येवं निश्चयं चक्रे सुप्तानां निश्चि मारणे पाण्डूनां सहपाञ्चालैद्रींणपुत्रः प्रतापवान् । स ऋरां मतिमास्थाय विनिश्चित्य सुहर्मुहः 11 48 11 सही प्रावोधयत्ती तु मातुलं भोजमेव च।

मिन में का मिन के का पार्ट के जा है। मेरा काम सिद्ध हो सक्ता है, यद्यीप यह नियम है कि संशयवाले कामोंसे निःस-न्देहं काम करना अच्छा है, महात्माओं-ने यह भी कहा है, कि जगत्में नीच काम करनेसे निन्दा होती है, परन्त क्षत्रियधर्म करनेवालेको चरण चरणपर निन्दित और दुष्ट कर्म करने होते हैं, पाण्डवींने भी इस युद्धमें अनेक अधमें करे हैं, महात्माओंने भी ऐसा कहा है कि चाहे शत्र थका हो, चाहे भागता हो, चाहे भोजन करता हो, चाहे चला जाता हो, और चाहे वैठा हो, उसे अव

मारना चाहिये। जिस सेनाका खामी मर गया हो, जिसके दो दुकडे होगये हो, जो सेना सोती हो उसे रातमें मारना चाहिये। यही तप जान-महात्माओंका सिद्धान्त है। (४५--५५)

ऐसा विचारकर प्रतापवान अध्वत्थाः माने पाञ्चाल और पाण्डवोंके मारनेके लिये दृष्ट बुद्धि करी, फिर सोते दुए अपने मामा कृपाचार्य और कृतवर्माको जगाया, तब महाबलवान् कृपाचार्य

EAS SE SON DE SO

<u>₩</u> तौ प्रबुद्धौ महात्मानौ क्रपभोजौ महावलौ नोत्तरं प्रतिपचेतां तत्र युक्तं हियावृतौ । सुमुहर्त्तीमेव ध्यात्वा बाष्पविह्नलमत्रवीत् 119611 हतो दुर्योघनो राजा एकवीरो महावलः। यस्यार्थे वैरमसाभिरासक्तं पाण्डवैः सह एकाकी बहुभिः शुद्रैराहवे शुद्धविकमः। पातितो भीमसेनेन एकादशचमुपतिः 11 60 11 वृकोदरेण क्षुद्रेण सुदर्शसमिदं कृतम् । मुर्घाभिषिक्तस्य शिरः पादेन परिमृहता विनद्ति च पाञ्चालाः क्षेत्रलेति च हसंति च। धमंति शंखान् शतशो हृष्टा व्रंति च दुंदुभीन् ॥६२॥ वादित्रघोषस्तुमुलो विमिश्रः शंखनिःखनैः। अनिलेनेरितो घोरो दिशाः प्रयतीव ह अश्वानां हेषमाणानां गजानां चैव बृंहताम् । सिंहनादश्च शूराणां श्रूयते सुमहानयम् दिशं प्राचीं समाश्रिस हृष्टानां गच्छतां भृशम्। रथनेमिस्वनाश्चैव श्रूयन्ते लोमहर्षणाः पांडवैर्घात्तराष्ट्राणां यदिदं कदनं कृतम्। वयमेव त्रयः शिष्टा असिन्महति वैशसे 11 55 11

व्यत्थामाके वचनका कुछ उत्तर न दिया, तब थोडे समयतक विचारकर आंखोंमें आंध्र भरकर अञ्चत्थामा कहने लगे, महाबलवान् एक वीर राजा दुर्योधन मारे गये । इन्होंके लिये हम लोगोंसे और पाण्डवोंसे वैर हुआ था, धर्मात्मा एकले दुर्योधनको अनेक पापियोंने मि-लकर मार डाला, पापी श्रुद्र भीमसेनने ग्यारह अक्षौहिणीके खामी महाराजके शिरपर पैर घरा, यह बहुत ही अन्याय

किया।(५५-६१)

इस समय पाञ्चाल प्रसन्न होरहे हैं, इंस रहे हैं, शृङ्ख और नगारे बजा रहे हैं, ये देखो वायुसे उछलते हुए समुद्रके समान पाण्डवोंकी सेनाके बाजोंका शब्द होरहा है, देखों घोडे हींच रहे हैं, हा-थियोंका शब्द हो रहा है, ये इनके रथों-का शब्द सुनकर हमारे रोंवे खडे हुये जाते हैं, पाण्डवोंने जो कीरवांका नाश

CORFECTION OF CONTRACT CONTRAC

केचित्रागशतप्राणाः केचित्सर्वास्त्रकोविदाः। निहताः पाण्डवेयैस्ते मन्ये कालस्य पर्ययम् ॥ ६७ ॥ एवमेतेन भाव्यं हि नूनं कार्येण तत्वतः। यथा श्वस्येदशी निष्ठा कृतकार्येऽपि दुष्करे . भवतोऽस्तु यदि प्रज्ञा न मोहादपनीयते । व्यापनेऽसिन्महत्यर्थे यन्ना श्रेयस्तदुच्यताम् ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संदितायां वैयासिक्यां सौक्षिके वर्वीण

है। णिमंद्रवायां प्रथमोऽच्यायः ॥ १ ॥

श्रुतं ते वचनं सर्वं यद्यदुक्तं त्वया विभो। ममापि तु वचः किंचिच्छृणुष्वाच महासुज आवद्धा मानुपाः सर्वे नियद्धाः कर्मणोर्द्धयोः। दैवे पुरुषकारे च परं ताभ्यां न विद्यते न हि दैवेन सिध्यंति कार्याण्येकेन सत्तम। न चापि कर्मणैकेन द्वाभ्यां सिद्धिस्तु योगतः ॥ ३॥ ताभ्यामुभाभ्यां सर्वार्था निबद्धा अधमोत्तमाः। प्रवृत्ताश्चैव दृश्यन्ते निवृत्ताश्चैव सर्वशः 11811

के विन्न निहत एवमेते यथा र भवतो व्यापत्ते क्षेमहा क्षेमहा क्षेमहा के हो से चार मार्प प्रकृतो ते समापि आवद्ध देवे पुरा मार्प प्रकृताः ही बचे हैं, जो वीर मारे किसीको सौ हाथीका के हे सव चल्ला किरोज जानता था; कि इस फल होगा, निश्चय ही व चहुत कठिन हे, आप ह समयमें क्या करना चाहिरे करनेसे हमारा कल्याण किहिये ? (६२-६९) सोतिक पर्वमें पहिला जन्या सोतिक पर्वमें प्रकृत सोतिक पर्वमें प्रकृत सुर्वमें सुर्वम स ही बचे हैं, जो वीर मारे गये उनमेंसे किसीको सौ हाधीका बल था, और कोई सब शस्त्र विद्यांके जाननेवाले थे. देखो समय चडा कठिन है। कोई यह नहीं जानता था; कि इस कामका यह फल होगा, निश्चय ही कर्मीकी गाति बहुत कठिन है, आप इस आपत्तिके समयमें क्या करना चाहिये, और क्या कल्याण होगा सो

सोप्तिक पवंभें पहिला अध्याय समाम । सीक्षिक पर्वमें दूसरा अध्याय । कृपाचार्य बोलं, तमने जो कहा सो हमने सब सुना, अबं कुछ हमारे भी वचन सुनो, हे महाबाहो ! सब मनुष्य प्रारब्ध और उद्योगमें बन्धे हैं, केवल प्रारब्धहीसे सब काम सिद्ध नहीं होते, और केवल उद्योगहीसे सब काम सिद्ध नहीं होते, अर्थात् प्रारब्ध और उद्योग इन दोनों ही से काम सिद्ध होते हैं: जगतुमें तीन प्रकारके काम होते हैं, एक उत्तम,दूसरा मध्यम, और तीसरा अधम और तीनों ही काम विना प्रारम्ध सिद्ध नहीं होते। कहीं जो एक काम यहासे सिद्ध होता है, और कहीं वहीं काम उस ही यत्नसे नष्ट होता दीखता है, देखो

पर्जन्यः पर्वते वर्षन्किन्न साध्यते फलम् । कृष्टे क्षेत्रे तथा वर्षन्किन्न साधयते फलम् 11 4 11 उत्थानं चापि दैवस्य हानुत्थानं च दैवतम्। इपर्थ भवति सर्वत्र पूर्वस्तत्र विनिश्चयः 18 11 सुबृष्टे च यथा देवे सम्यक् क्षेत्रे च कर्षिते । बीजं महागुणं भूयात्तथा सिद्धिहिं मानुषी 11 0 11 तयोदेंचं विनिश्चित स्वयं चैव प्रवर्तते। प्राज्ञाः पुरुषकारे तु वर्तते दास्पमाश्रिताः 11 6 11 ताभ्यां सर्वे हि कार्यार्था मतुष्याणां नरर्षभ । विचेष्टंतः सा दर्यन्ते निवृत्तास्तु तथैव च 11911 कृतः पुरुषकारश्च सोऽपि दैवेन सिध्यति । तथाऽस्य कर्मणः कर्त्तुरिमिनिवर्तते फलम् 11 09 11 उत्थानं च मनुष्याणां दक्षाणां दैववर्जितम् । अफलं इर्यते लोके सम्धगप्युपपादितम् 11 88 11 तत्रालसा मनुष्याणां ये भवन्त्यमनस्विनः। उत्थानं ते विगर्हति प्राज्ञानां तन्न रोचते 11 88 11 प्रायशो हि कृतं कर्म नाफलं दर्यते भुवि । अकृत्वा च पुनर्दुः खं कर्म पर्यन्महाफलम् 11 23 11

जब जुते हुये खेतमें भेघ वर्षता है, तब कैसा उत्तम फल होता है, जोर वही भेघ जब श्वेतपर वर्षता है, तो क्या फल होता है ? परन्तु दो शीति हैं कहीं प्रारच्य उद्योगकी सहायता करता है, और कहीं उद्योग प्रारच्यकी सहायता करता है, पण्डितोंने पहिलेको सुख्य माना हैं, जैसे उत्तम जल वर्षनेसे बीजके गुण बढते हैं, ऐसे ही प्रारच्यकी सहायतासे कर्म करनेसे सिद्धी होती है। (१-७)

पण्डित लोग प्रारम्भको विचार कर

उद्योगमें प्रवृत्त होते हैं, महापुरुष होने-पर भी यदि प्रारम्भ छोड़कर उद्योग करना चौह, तो वह न्पर्थ होजाता है। अब पण्डित और मुखोंमें केवल इतना ही मेद दीखता है, कि मुख आलखके पश्च होकर उद्योग करता ही नहीं चाहते परन्तु पण्डित उद्योग करते हैं और प्रारम्बको मुख्य मानते हैं, जगत्में कि-ये हुये कर्मका फल अवस्य ही मिलता है, परन्तु उत्तम कर्मके विना किये पथा-चाप रहता है यदि कोई विना उद्योग

चेष्टामक्तर्वन् लभते यदि किंचियद्दच्छया। यो वा न रूभते कृत्वा दुर्दशौँ ताबुभावि ॥ १४॥ शकोति जीवितुं दक्षो नालसः सुखमेघते । हर्यंते जीवलोकेऽस्मिन्दक्षाः प्रायो हितैषिणः ॥१५॥ यदि दक्षः समारंभात् कर्मणो नाइन्ते फलम् । नास्य वाच्यं भवेत्किंचिछ्रब्धव्यं वाऽधिगच्छति ॥१६॥ अकृत्वा कर्म यो लोके फलं विंदति धिष्ठितः। स तु वक्तव्यतां याति द्वेष्यो भवति भूयशः॥१७॥ एवमेतदनाहत्य वर्तते यस्त्वतोऽन्यथा। स करोलात्मनोनर्धानेप बुद्धिमतां नयः हीनं पुरुषकारेण यदि दैवेन वा पुनः। कारणाभ्यामधैताभ्यामुत्थानमफ्लं भवेत् हीनं प्रस्पकारेण कर्म त्विह न सिध्यति। दैवतेभ्यो नमस्कृत्य यस्त्वर्धान्सम्यगीहते दक्षो दाक्षिण्यसंपन्नो न स मोघैर्विहन्यते।

किये प्रारब्धसे कुछ फल प्राप्त करे और जो परिश्रम करनेपर भी फल न पाथे, तो इन दोनोंकी निन्दा करनी

उद्योगी जगतमें सुखसे जीता है, और आलसीको सुख नहीं होता, क्यों कि जगत्में प्रायः, उद्योगी ही सुखी दीखते हैं, यदि परिश्रमी परिश्रम कर-नेपर भी कुछ फल न पावे, तो उसे पछताना नहीं पडता, अथवा परिश्रमका फल ही होजाता है, जो आलसी विना कर्म किये फल पाते हैं, लोग उसके वि-पयमें अनेक प्रकारकी बात कहते हैं, और बहुत मनुष्य उससे द्वेष भी करते

हें।(१५–१७)

इसलिये बुद्धिमानोंने यह निश्चय कि: या है, कि इन दोनों विषयोंको छोडकर जो भिन्न प्रकार कार्य करता है,वह अपने लिये अनर्थ बनाता है। यदि मनुष्य केवल प्रारब्ध या कर्महीको छोडकर कोई कर्मकी सिद्धि करना चाहे तो सि. द्धी नहीं होती, अर्थात दोनोंहीसे कर्म करनेसे सिद्ध होता है, जो मनुष्य उद्योगको छोडकर सिद्धी चाहता है, उसका फल सिद्ध नहीं होता; जो उद्यो-गी मनुष्य देवतींको नमस्कार करके अत्यन्त विचार पूर्वक उद्योग करता है.

सम्यगीहा प्रनीरयं यो बृद्धानुपसेवते 11 28 11 आपृच्छति च यच्छ्रेय। करोति च हितं वचः। उत्थायोत्थाय हि सदा प्रष्टच्या वृद्धसंमताः ॥ २२ ॥ ते सम योगे परं मुलं तन्सुला सिद्धिरूच्यते। बृद्धानां वचनं श्रुत्वा योऽभ्युत्थानं प्रयोजयेत् ॥ २३ ॥ उत्थानस्य फलं सम्यक् तदा स लभतेऽचिरात्। रागात्कोषाद्भयान्नोभाचोऽर्थानीहति मानवः ॥ २४ ॥ अनीकाश्चावमानी च स जीवं अज्ञयते श्रियः। सोऽषं दुर्योधनेनार्थी लुब्धेनादीर्घदर्शिना असमर्थः समारब्धो मुहत्वादविर्वितितः। हितबुद्धीननाइत्य संमंत्र्यासाधुभिः सह ॥ २६ ॥ वार्यमाणोऽकरोद्वैरं पाण्डवैर्गुणवत्तरैः। पूर्वमप्यातिद्वःशीलो न धैर्यं कर्तुमहीत 11 29 11 तपत्यर्थे विपने हि मित्राणां न कृतं वचः। अनुवर्तामहे यतु तं वयं पापपूरुपम् 11 38 11 अस्मानप्यनयस्तस्मात्प्राप्तोऽयं दारुणो महात् । अनेन तु ममाद्यापि व्यसनेनोपतापिता 11 79 11

अर्थात् उसका कार्य अनेक विध होनेपर सिद्ध होता ही है, अत्यन्त विचारका अर्थ यह है कि वृदोंकी सेवा करना, उनकी सम्मति बुझनी और उनहींके कहे हुए वचनोंको करना मनुष्यको उचित है, प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर ब्ढोंके पास जाय, क्यों कि ब्रढोंकी सम्मति सुखका मूल है; और उसी स-म्मतिसे कार्यसिद्धीं भी होती है, जो मनु ध्य ऐसा करता है उसकी कार्यसिद्धि अवस्य होती है। (१८-२४)

जो मूर्खे लोम, मोह, क्रीध और

भयके वश होकर कोई कार्य करना चा-हता है, उस मूर्खकी लक्षी जीव ही नष्ट होजाती है, सो अद्रद्शी, लोभी और मुर्ख दुर्योधनने कल्याण करनेवा-लोंके वचनोंका निरादर करके मूर्वीकी सम्मतीसे मुर्खतामें भरकर अनेक वार रोकनेपर भी विना विचारे महात्मा पांण्डवोंसे वैर किया था, परन्तु वह इस कार्यके करनेमें समर्थ न था, यह पहि॰ लेहीसे दुष्टचित्र था, किसीके वचन नहीं मानता था, अब हम भी उस ही पापी-

वृद्धिश्चित्रयते किंचित् स्वं श्रेयो नाववुध्यते ।

मुद्यता तु मनुष्येण प्रष्टच्याः सुहृदो जनाः ॥ ३० ॥

तत्रास्य वृद्धिर्विनयस्तत्र श्रेयश्च पर्यति ।

तत्रास्य वृद्धिर्विनयस्तत्र श्रेयश्च पर्यति ।

तत्रास्य मूलं कार्याणां वृद्ध्या निश्चित्य वै वृद्धाः ॥ ३१ ॥

तेऽत्र पृष्टा यथात्र्युस्तत्कर्तव्यं तथा भवेत् ।

ते वयं धृतराष्ट्रं च गान्धारीं च समेख ह ॥ ३२ ॥

उपपृच्छामहे गत्वा विदुरं च महामातिम् ।

ते पृष्टास्तु वदेयुर्घच्ल्रेयो नः समनंतरम् ॥ ३३ ॥

तदस्माभिः पुनः कार्यमिति मे नैष्ठिकी मितिः ।

अनारंभान्तु कार्याणां नार्थः संपद्यते कचित् ॥ ३४ ॥

कृते पुरुषकारे तु येषां कार्यं न सिद्ध्यति ।

देवेनोपहतास्ते तु नात्र कार्या विचारणा ॥ ३५ ॥ [१०४] इति श्रीवहाभारते शतसाहरूकां संहितायां वैवासिक्यां साक्षिकं पर्वणि

द्वीणिकृपसंवादे दितीयोऽध्यायः॥ २ ॥

संजय उनाच — कृपस्य वचनं श्रुत्वा घर्मार्थसहितं श्रुभम् । अभ्वत्थामा महाराज दुःखशोकसमन्वितः ॥ १॥

भी महाअवमी और पापी होगये। मैं यही
विचार रहा हूं और हसीसे मेरी बुद्धी
इस समय नष्ट होगई है, क्या करना
चाहिये यह कुछ नहीं जान पडता
और यह भी नियम है कि जब मलुष्यकी बुद्धि नष्ट होजाय तब उसे अपने
मित्रोंसे सम्मति पूंछनी चाहिये, क्यों
कि ऐसे समयमें वे ही उसका कल्याण
कर सकते हैं, पण्डितों ने ऐसा कहा है,
कि उस समय यथार्थ मित्र जैसा कहै
वैसाही करना उचित है। इस छिये
हमारी बुद्धिमें ऐसा आता है, कि यहाँसे चलकर महाराज घृतराष्ट्र, यान्धारी

और महात्मा विदुरसे यह बचान्त कहैं, किर वे लोग जैसा कहेंगे, वैसाही करनेमें हमारा कल्याण होगा, क्यों कि विना उद्योग किये कहीं फल प्राप्त नहीं होता। यदि उद्योग करनेपर कार्य सि-दि नहीं और उसे ही प्रारम्भ कहते हैं। (२५—३५) [१०४]

सादितक पर्वमें दूसरा अध्याय समात । सादितक पर्वमें तीसरा अध्याय !

सञ्जय बोले, हे महाराज ! कृपान् चार्यके अर्थ और घमेंसे भरे उत्तम व-चन सुनकर जलती हुई अप्रिके समान

द्श्यमानस्तु शोकेन प्रदीप्तेनाग्निना यथा। क्रं मनस्ततः कृत्वा ताबुभी पराभाषत 11 7 11 पुरुषे पुरुषे बुद्धियाँ या भवति शोभना । तुष्पंति च पृथक् सर्वे प्रज्ञया ते स्वया स्वया ॥ ३ ॥ सर्वो हि मन्यते लोक आत्मानं बुद्धिमत्तरम् । सर्वस्यात्मा बहुमता सर्वोऽऽत्मानं प्रशंसति सर्वस्य हि स्वका प्रज्ञा साधुवादे प्रतिष्ठिता। परवृद्धिं च निन्दन्ति स्वां प्रशंसंति चासकृत् ॥ ५ ॥ कारणान्तरघोगेन योगे येषां समा गतिः। अन्योन्येन च तुष्यन्ति बहु मन्यंति चासकृत्॥ ६॥ तस्यैव तु मनुष्यस्य सा सा बुद्धिस्तदा तदा । कालयोगे विषयीसं प्राप्यान्योन्यं विषयते विवित्रत्वात् वित्तानां मनुष्याणां विशेषतः। चित्तवेक्कव्यमासाय सा सा बुद्धिः प्रजायते यथा हि वैद्यः क्रशलो ज्ञात्वा ज्याधि यथाविधि । भैषड्यं क्रस्ते योगात्प्रश्रमार्थमिति प्रभो एवं कार्यस्य योगार्थं बुद्धिं क्वविन्ति मानवाः।

कोधमें भरकर मनको द्वित करके अध-त्थामा, कुपाचार्य और कृतवर्मासे

इम यह जानते हैं, कि जगत्में सब मनुष्योंकी बुद्धि अलग अलग होती है, और सब लोग अपने अपनेको महाबु-द्धिमान जानकर अपनी अपनी प्रशंसा किया करते हैं। और अपने अपने की बहा समझते हैं सब छोग अपनी अप-नी बुद्धिको साधु कहते हैं, परन्तु जो कारण और समयके अनुरोधसे अनेक प्रकारकी बुद्धियों मेंसे एक बुद्धिको स्थिर

करता है, और जो द्सरोंकी सम्मति सुनकर प्रसन्न होता है, उसहीका कार्य सिद्ध होता है, मनुष्योंके चित्रकी दृति जलग जलग होती है,इसी लिये समय समयपर व्याकल होकर अनेक अनेक प्रकारकी बुद्धि उत्पन्न होती है। जो अपनी स्थिर करी हुई बुद्धिको छोड कर दूसरेकी सम्मतियोंको स्वीकार करता है। उसकी बुद्धि अनेक प्रकारकी बुद्धियोंसे नष्ट होजाती है, (३—८)

जैसे वैद्य अत्यन्त सावधान होकर

श्वापाव ३] १० वैशिष्ठकवं। १० विश्वपाव ३]

श्वापाव ३ विश्वपाव वृद्धा स्वाप्त मानवाः ॥१०॥
अन्यपा योवने मत्यां वृद्धा भवित मानवाः ॥१०॥
अन्यपा योवने मत्यां वृद्धा भवित मानवाः ॥१०॥
स्वेऽन्यपा जरायां तु सोऽन्यां रोचयते मतिम् ॥११॥
स्वयं वा महाघोरं समृद्धिं वापि ताहशीम् ।
अवाप्य पुरुषो भोज कुरुते बुद्धिवैकृतम् ॥१२॥
एकसिन्नेव पुरुषे सा सा बुद्धिस्तदा तदा ।
भवत्यकृत्वभित्वासा तस्यैव न रोचते ॥१३॥
तिश्चित्व तु यथामज्ञं यां मितें साधु पर्व्यति ।
तया प्रकुरुते भावं सा तस्योवोगकारिका ॥१४॥
सर्वे हि बुद्धिमाज्ञाय मज्ञां वापि स्वकां नराः ।
चेष्टन्ते विविधां चेष्टां हितमित्येव जानते ॥१६॥
सर्वे हि बुद्धिमाज्ञाय मज्ञां वापि स्वकां नराः ।
चेष्टन्ते विविधां चेष्टां हितमित्येव जानते ॥१६॥
उपजाता स्यसन्ता येपमय मतिमैम ।
युवयोस्तां प्रवक्ष्यामि मम शोकविनाशिनीम् ॥१७॥
करता है, ऐसे ही जो बुद्धिमान मतुष्य अव्यक्ति तिल्या अव्यक्ति है। युवा अवस्थामि मम शोकविनाशिनीम् ॥१७॥
करता है, ऐसे ही जो बुद्धिमान मतुष्य अव्यक्ति है। युवा अवस्थामि मम शोकविनाशिनीम् ॥१७॥
करता है, विद्धा मोदित रहता है, मध्य अवस्थामें कुछ और ही बुद्धि बावति है, अव्यवा पहुत अविक चन प्राप्त है , वयं विविधां चेष्टां हितमित्येव करती है। १५-१६ ।
विविधां चेष्टां कर्ताही समस्य वृद्धिके लगा विद्धिके अवुता सस्य हिद्धिके लगा विद्धिके अवुता पहुत्व अव्यक्ति वृद्धि हो वाति है, अर्थ वापित्व क्रान्ति है। सुव्यक्ति ज्ञान पहिते विविद्धिके विद्धा करता है। स्वस्त करती है। १५-१६ ।
विविधां चेष्टां करति है। सुव्यक्ति लगा विद्धा करता है। स्वस्त करवा है, व्यवे करवा है। १५-१६ ।
ह स्वस्त व्यव्यक्ति समस्य हुद्धिके लगा विद्धा करवा है। स्वस्त करवा है, वस्त विद्धा विद्धा विद्धा विद्या विद्धा विद्धा विद्धा विद्या विद्धा विद्ध

प्रजापतिः प्रजाः सृष्ट्रा कर्म तासु विघाय च । वर्णे वर्णे समावते होकैकं गुणभागगुणम् ब्राह्मणे वेदमग्च्यं तु क्षत्रिये तेज उत्तमम् । दाक्ष्यं वैश्ये च शुद्धे च सर्ववर्णानुकुलताम् अदान्तो ब्राह्मणोऽसाधुर्निस्तेजाः क्षत्रियोऽधमः । अदक्षो निंचते वैदयः शुद्रश्च प्रतिकृलवान् सोऽसि जातः कुले श्रेष्ठे ब्राह्मणानां सुपूजिते । मन्द्रभाग्यतयाऽस्म्येतं क्षत्रधर्ममनुष्टितः क्षत्रधर्मे विदित्वाऽहं यदि ब्राह्मण्यमाश्रितः। प्रकुर्या सुमहत्कर्म न मे तत्साधुसंमतम् धारयंश्च धनुर्दिच्यं दिच्यान्यस्त्राणि चाहवे । पितरं निहतं रष्ट्रा किं नु वक्ष्यामि संसदि सोऽहमच यथाकामं क्षत्रधर्मसुपास्य तम् । गन्ताऽिस पदवीं राज्ञः पितुश्चापि महात्मनः ॥२४॥ अद्य स्वप्स्यन्ति पाञ्चाला विश्वस्ता जितकाशिनः। विमुक्तयुग्यकवचा हर्षेण च समन्विताः ॥ २५ ॥

स्रष्टि बनाई थी तब ही उन्होंने सब वर्णोंके कर्म भी अलग अलग बना दिये थे; और सबमें एक एक गुण भी दे दिया था। ब्राह्मणोंको वेद पढना, क्षत्रि-योंको तेज बढाना, वैश्योंको धन कमा-ना और शुद्रोंको सबकी सेवा करनी। जो त्राह्मण इन्द्री न जीत सके, जो क्षत्री तेजली न हो, जो वैश्य धन न वढा सके और जो शुद्र इनकी सेवा न करे, तो इन सबकी निन्दा करनी चाहि-ये। यदि आप में जगत्पूरित ब्राह्मण वंशमें उत्पन्न हुआ हूं, परन्तु अभाग्य

रहा हूं, सो आपित्तमें इस क्षत्रिय घर्मको धारण करके भी अब छोड दूं, और ब्राह्मणोंका धर्म करने छगूं तो अच्छा नहीं, यह दिच्य धतुप और इन दिच्य बाणोंको धारण करके भी यदि पिताके मारनेका बदला न छूं, तो महात्माओं में बैठकर क्या कहुंगा १ (१७-२३)

अव में क्षत्रिय धर्मका आश्रय लेकर अपने पिता और महाराजके पास खर्म-में जाऊंगा, इस समय निजयी पाश्चाल सेना थककर निजय पाकर कवच खो-लकर अत्यन्त निज्ञासपूर्वक सो रही है, सो अमी मैं डेरोंमें घुसकर भूतके समान

जयं मत्वाऽऽत्मनश्चेव श्रान्ता च्यायामकर्षिताः। तेषां निशि पसुप्तानां सुस्थानां शिविरे स्वके ॥ २६ ॥ अवस्कन्दं करिष्यामि शिविरस्याच दुष्करम् । तानवस्कन्य शिविरे पेतभूतानचेतसः सुद्यिष्यामि विक्रम्य मधवानिव दानवान्। अच तान्सहितान्सर्वान् घृष्टद्युम्नपुरोगमान् ॥ २८॥ सुद्यिष्यामि विक्रम्य कक्षं दीप्र इवानलः। निहत्य चैव पात्रालान् शानित लब्धाऽसि सत्तम ॥२९॥ पाञ्चालेषु भविष्यामि सुद्यन्नच संयुगे। विनाक्तवाणिः संकुद्धः स्वयं रुद्रः पशुब्विव अदाहं सर्वेपाञ्चालानिहत्य च निकृष्य च। अर्दियिष्यामि संहष्टो रणे पाण्डस्रतांस्तथा अवाहं सर्वपञ्चालैः कृत्वा भूमिं शरीरिणीम् । प्रहृत्यैकैकशस्तेषु भविष्याम्यनृणः पितुः 11 32 11 दुर्वोघनस्य कर्णस्य भीष्मसैन्धवयोरपि। गमधिष्यामि पाञ्चालान्पद्वीमय दुर्गमाम् ॥ ३३ ॥ अद्य पात्रालराजस्य घृष्टसुम्नस्य वै निश्चि । न चिरात्प्रमाधिष्यामि पशोरिव शिरो बलात् ॥ ३४॥ अद्य पाञ्चालपाण्ड्रनां दायितानात्मजान्निदि ।

उनका नाश कर दूंगा आज में घृष्टतुर-म्नादि सब क्षत्रियोंको इस प्रकार मारूंगा, जैसे इन्द्र दानवोंको मारता है। आज डेरोंमें घुसकर इस प्रकार क्षत्रियोंको मारूंगा, जैसे नढी हुई अग्नि स्खे काठ-को जलाती है, आज पाश्चालोंका नाश करके ही शान्त होऊंगा।(२४-२९) अाज युद्धमें मैं पाश्चालोंके लिये ऐ-सा भयानक बन्ंगा, जैसे प्रलयकालमें

पाञ्चाल और पाण्डवोंको मारकर प्रसन होकर ६घर उधर खींचता फिह्रंगा, आज पाञ्चालोंके श्रीरमें पृथ्वीको पूर्ण करके पिता, राजा दुर्योधन, कर्ण, भीष्म और जयद्रथादिके ऋणसे छुट्टंगा, आज पात्रालोंको दुर्लम स्थान दिखाऊंगा, आज पाञ्चालदेशीय महाराज पृष्टचुम्न-का शिर अपने बलसे ऐसा काट्रंगा जैसे काई पश्का काटता है।(२०-३४)

खड़ेन निशितेनाजौ प्रमधिष्यामि गौतम अय पाञ्चालसेनां तां निहत्य निश्चि सौप्तिके। कृतकृत्यः सुर्वा चैव भविष्यामि महामते ॥ ३६ ॥[१४०]

> इति धीमहाभारते शतसःहरूयां संहितायां वैवासिवयां सीच्तिके पर्वाणे द्रीणि-भंत्रणायाम् तृतीयोऽध्याय:॥ ३ ॥

कृप उवाच --

दिष्टया ते प्रतिकर्तन्ये मतिजीतेयमच्युत । न त्वां वारियतं शक्तो वज्रपाणिरपि स्वयम् अनुयास्यावहे त्वां तु प्रभाते सहितावुभी। अस रात्रौ विश्रमस्व विद्यक्तकवचध्वजः 11 3 11 अहं त्वामनुयास्यामि कृतवर्मा च सात्वतः। परानभिमुखं यातं रथावास्थाय दंशितौ 11 3 11 आवाभ्यां सहितः रात्रून् श्वो निहन्ता समागमे । विकम्य रिधनां श्रेष्ठ पाञ्चालान्सपदानुगान् ॥ ४॥ शक्तस्त्वमसि विक्रम्य विश्रमस्य निशामिमाम्। चिरं ते जाग्रतस्तात स्वप तावन्निशामिमाम् विश्रान्तश्र विनिद्रश्र स्वस्यचित्तश्र मानद । समेख समरे रात्रुन्वधिष्यसि न संदायः 11 8 11

श्चाल और पाण्डवोंके बालकोंके शिर मेरे तेज घारवाले खड्गसं कटेंगे। हे महाबुद्धिमन् ? आज समस्त सोते हुए पाञ्चालोंको रातमें मारकर में सुखी और क्रवकृत्य हुंगा। (३५—३६)

साँदिक। वेमें सीसरा अध्याय समाप्त ।

प्राप्त स्वाप्त के स्व स्वाप्त के स्वाप्त साप्तिकपर्वमें चाथा अध्याय । कुपाचार्य बोले, हे बीर! आज प्रार-व्धहीसे तुम्हें ऐसी बुद्धि उत्पन्न हुई। तुम्हें साक्षात् बज्जधारी इन्द्र भी युद्धमें नहीं रोक सक्ता, परन्तु हमारी बुद्धिमें यह आता है कि इस समय तम कव

खोलकर, रथसे ध्वजा उतारकर सो रही। प्रात:काल होते ही हम कृतवर्मी तुम्हारे सङ्ग चलेंगे और सब शत्रुओंका नाश करेंगे।(१--३)

हे महारथ ! तुम हमारी सहायतासे सेना सहित पाश्चालराजको मारियो, तुम सत्र कुछ करनेमें समर्थ हो, परन्तु कई दिनसे जाग रहे हो, इसलिये इस समय सो रहो। जब तुम्हारा परिश्रम द्र हो-जायमा और सोनेके कारण चित्त साव-धान हो जायगा । तब हम लोगोंकी सहायतासे तम निःसन्देह

 X COLORED DE LA COLORED DE

न हि त्वां रथिनां श्रेष्ठं प्रगृहीतवरायुधम्। जेतुमुत्सहते शश्वदपि देवेषु वासवः 11 9 11 कृषेण सहितं यान्तं गुप्तं च कृतवर्भणा। को द्रौणि युघि संरब्धं योधयेदपि देवराट ते वयं निशि विश्रान्ता विनिद्रा विगतज्वराः। प्रभातायां रजन्यां वै निहनिष्याम शालवान ॥ ९ ॥ तव श्वस्राणि दिव्यानि सम चैव न संज्ञायः। सात्वतोऽपि महेष्वासो नित्यं युद्धेषु कोविदः ॥ १०॥ ते वयं सहितास्तात सर्वान् राज्नसमागतान्। प्रसद्य समरे इत्वा प्रीतिं प्राप्स्याम प्रष्कलाम् ॥११॥ विश्रमस्य त्वमव्यग्रा स्वप चेमां निशां सुखम्। अहं च कृतवर्मा च त्वां प्रयान्तं नरोत्तमम् ॥ १२॥ अनुयास्याव सहितौ धन्विनौ परतापनौ। रधिनं स्वरया यान्तं रधमास्याय दंशितौ स गत्वा शिविरं तेषां नाम विश्राव्य चाहवे। ततः कर्ताऽसि राचूणां युध्यतां कदनं महत् ॥ १४ ॥ कृत्वा च कद्नं तेषां प्रभाते विमलेऽहनि । विहरस्य यथा शकः सुद्यित्वा महासुरात् ॥ १५ ॥

नाश करोगे, जब तुम स्थपर बैठकर धनुप धारण करोगे, तब साक्षात् इन्द्र भी तुमको नहीं जीत सकेंगे, जब कुपाचार्य और कृतवमी तुम्हारी रक्षा करेंगे, तब साक्षात् इन्द्रकी क्या शक्ती है, जो तुमसे युद्ध कर सके ? (४–८)

इसिलिये अब हम लोग रात्रिभर सोवें और प्रातःकाल होते ही घोर युद्ध करें-गे, और इनको मारेंगे, इसनें सन्देह नहीं तुम्हारे पास सब दिन्य बाण हैं, और कृतवर्मी भी महाधनुषधारी और सब प्रकारकी युद्धविद्या जाननेवाले हैं, सो हम तीनों मिलकर प्रातःकाल श्रञ्जोंसे युद्ध करेंगे, और युद्धमें श्रञ्जोंको भारकर अत्यन्त प्रसन्न होंगे। (९-११)

अब तुम सावधान होके हस समय
सो रहो, प्राताकाल होतेही हम और
कृतवमी दोनों धनुष धारण करके उत्तम
रथांपर चढकर तुम्हारे सङ्ग चलेंगे, और
युद्ध करते हुए अञ्जओंको अपना नाम
सुनाकर मारेंगे, फिर उनको निर्मल दिनमें मारकर तुम इस प्रकार सुख कीजि-

<u>© CONTRACTOR CONTRACT</u>

त्वं हि शक्तो रणे जेतुं पात्रालानां वरूधिनीम्। दैत्यसेनामिव कुद्धः सर्वदानवसूदनः ॥ १६ ॥ मया त्वां सहितं संख्ये गुरं च कृतवर्मणा ! न सहेत विभुः साञ्चाद्वज्रपाणिरपि खयम् न चाहं समरे तात कृतवर्मा न चैव हि। अनिर्जित्य रणे पांडून्न च यास्यामि कर्हिचित् ॥ १८ ॥ हत्वा च समरे कुद्धान्पश्चालान्पांडुभिः सह । निवर्तिष्यामहे सर्वे हता वा स्वर्गगा वयम् सर्वीपायैः सहायास्ते प्रभाते वयमाहवे । सत्यमेतन्महाबाहो प्रज्ञचीमि तवानघ 11 20 11 एवमुक्तस्ततो द्रौणिर्मातुलेन हितं वचः। अब्रवीन्मातुलं राजन् कोषसंरक्तलोचनः 11 38 11 आतुरस्य कुतो निद्रा नरस्यामर्षितस्य च । अर्थार्श्चितयतश्चापि कामयानस्य वा प्रनः। तदिदं समनुपारं पर्य मेऽय चतुष्ट्यम् 11 22 11 पर्य भागचतुर्थों मे स्वप्नमह्वाय नारायेत्। किं नाम दुःखं लोकेऽस्मिन्पितुर्वधमतुरमर्त् ॥ २३ ॥

ए जैसे दानवांको मारकर इन्द्रः जैसे इन्द्र कोष करके दानवांके मारनेमें समध्ये हैं, ऐसेही तुम सब पात्रालोंको मारनेको समर्थ हो, हे बीर! जब इम और कतवमी तुम्हारी युद्धमें रक्षा करेंगे, तब साधात इन्द्र भी तुम्हें नहीं जीत सक्ते, हम तुमसे सत्य कहते हैं कि हम और कतवमी श्रञ्जवोंको विना जीते युद्धसे न हटेंगे, अवस्य ही पात्राल और पाण्डवोंको मारंगे, अथवा उनके हाथसे मरकर खर्मको जांगो। (१२—१९)

हे महावाही ! अधिक क्या कहें हम

सब प्रकारसे प्रातःकाल तुम्हारी सहाय-ता करेंगे। अपने मामाके ऐसे कल्याण भरे वचन सुन अस्वत्थामाके नेत्र क्रोध से लाल होगए, और ऐसा वचन बोले, रोगी और क्रीधमरे मनुष्यको, अर्थ चिन्ता न करनेवालेको और कामीको निद्रा कहां? आज हमको भी नही समय आगया है, अब इस युद्धमें केवल मेरा ही चौथा माग शेप है, इसीसे मेरी निद्रा नष्ट होगई। (२०-२३)

हाय ! द्रोणाचार्य मारे गये, मैंने प्रसम पात्रालोंके ये शब्द अपने कानोंसे सुने <u>LECO ILOGO A PACARACIO DE GARACIA DE CARACIA DE CARACIA DE CARACIA DE CARACIA DE COMPANO DE COMPANDA DE COMPANO DE COMPANDA DE COMPANO DE COMPANDA DE CO</u>

हृदयं निर्देहन्मेऽच रात्र्यहानि न शाम्यति। यथा च निहतः पापैः पिता मम विश्लेषतः प्रत्यक्षमपि ते सर्वं तन्मे मर्माणि कन्तति ! कथं हि मादशो लोके मुहूर्त्तमपि जीवति 11 29 11 द्रोणो हतेति यद्वाचः पश्चालानां श्रृणोस्यहम्। धृष्टसुम्नमहत्वा तु नाहं जीवितुमुत्सहे 11 24 11 स मे पितुर्वेधाद्वध्यः पात्राला ये च संगताः। विलापो भग्नसक्थस्य यस्तु राज्ञो मया श्रुतः॥ २७॥ स पुनर्हद्यं कस्य क्र्रस्यापि न निर्देहेत्। कस्य श्वकरुणस्यापि नेत्राभ्यामश्रुना ब्रजेत् ॥ २८ ॥ नृपतेर्भग्नसक्थस्य श्रुत्वा तादृग्वचः पुनः। यश्चायं मित्रपक्षो में मिय जीवति निर्जितः ॥ २९ ॥ शोकं मे वर्धयत्येष वारिवेग इवार्णवम् । एकाग्रमनसो मेऽच क्रतो निद्रा क्रतः सुखम् ॥ ३० ॥ वासुदेवार्जुनाभ्यां च तानहं परिरक्षितात् । अविषद्यतमानमन्ये महेन्द्रेणापि सत्तम 11 38 11 न चापि शक्तः संयन्त्रं कोपमेतं सम्रुत्थितम् ।

इससे अधिक दुःख और जगत्में क्या होगा? आपके देखते देखते इन पापियोंने मेरे पिताको कैसे मारा? यह स्मरण करके मेरा हृदय रातदिन जला करता है, आ-पके देखते देखते हमारे पिताका जैसा निरादर हुआ, सो स्मरण करके मेरे शरी-रके मर्मस्थान फटे जाते हैं, ग्रुझ ऐसे मजुष्यको एक ग्रुहूर्चमर भी जीना उचित नहीं, में विना धृष्टसुम्नके मारे जी नहीं सक्ता। (२३-२६)

इसने मेरे पिताको मारा है, इसलिये में भी इसे मारूंगा, और इसके सब सिक्षियोंको भी मारूंगा देखो जङ्घा टूटे राजा हमारे आगे कैसे रांते थे, जगत्में ऐसा कौन कठोर होगा, कि राजाके वचन सुनकर, जिसका हृदय न जठने छगे थांखोंसे आंस न आजाय थे मेरे जीते जी मित्रका नाश होगया, यह स्मरण करके मेरा शोक ऐसे बढता है, जैसे अधिक जठ होनेसे समुद्रकी तरङ्ग। मेरा चिच इस समय एकाग्र है, तब निद्रा और सुख कहां १ (२७-३०)

उनकी कृष्ण और अर्जुन स्था करते हैं, इसलिय युद्धमें साक्षात इन्द्र भी नहीं

99999999999999999999999999999999999 तं न पर्वामि लोकेऽस्मिन्यो मां कोपान्निवर्त्तयेत् ॥३२॥ तथैव निश्चिता बुद्धिरेषा साधु मता मम। वार्तिकै। कथ्यमानस्तु मित्राणां मे पराभवः ॥ ३३ ॥ पाण्डवानां च विजयो हृद्यं दहतीव मे । अहं तु कदनं कृत्वा शत्रूणामय सीधिके ॥ ततो विश्रभिता चैव स्वप्ता च विगतज्वरः ॥ ६४ ॥ [१७४]

हति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिषयां सौक्षिके पर्वणि द्वीणित्रंत्रणायां चतुर्थे ऽत्यायः ॥४॥

कृप उवाच—

शुश्रुषुरपि दुर्मेधाः पुरुषोऽनियनेन्द्रियः । नालं वेदियतं कृत्स्नौ धर्मार्थाविति मे मितः ॥ १॥ तथैव तावनमेघावी विनयं यो न शिक्षते। न च किश्चन जानाति सोऽपि धर्मार्थनिश्चयम् ॥ २॥ चिरं हापि जडा शूरा पंडितं पर्युपास्य हि । न स धर्मान्विजानाति दवी सूपरसानिव 11 3 11 सुहूर्त्तमि तं प्राज्ञः पंडितं पर्युपास्य हि । क्षिप्रं धर्मान्विजानाति जिह्ना सुपरसानिव 11811 शुश्रुषुस्त्वेव मेघावी पुरुषो नियतेन्द्रियः। जानीयादागमान्सर्वान् ग्राह्यं च न विरोधयेत् ॥ ५ ॥

TO THE WEST OF THE THE TENT OF THE TENT O जीत सक्ता, मैं इससे अपने क्रोधको रोक नहीं सकता और जगत्में किसीको ऐसा भी नहीं देखता जो इसे शान्त कर सके। मैंने उस समय मनुष्योंके मुखसे यह सुना है कि मेरे मित्र दुर्यों-धनका निरादर हुआ इसलिये मैंने आप से जो कुछ कहा वही निश्चय है, पाण्ड-चोंकी विजय ही सुनकर मेरा हृद्य जला जाता है, अब मैं बश्चओंका नाश करके ही सावधान होकर सुखसे सोऊं-गा। (द्वा-३४)

सौदितक पर्वमें ५ ज्ञम अध्याय ।

कृपाचार्य बोले, मूर्खको कितना है। समुझाओ तौ भी वह नहीं समझता, हमारी बुद्धिमें ऐसा आता है, कि जिस मनुष्यके वश्रमें इन्द्री नहीं होती, वह पूरी रीतिसे अर्थ और धर्मके जाननेमें समर्थ नहीं होता, इसी प्रकार महाबुद्धिः मान भी नम्रताके मारे, दूसरे प्रकारकी शिक्षा ही नहीं सुनता। इसी लिये यह मी पूर्ण रीतिसे घर्म और अर्थके विषः योंको नहीं जान सक्ता । यदि मूर्ख

666666666666666999666699 अद्य खप्धानी पञ्चाला विमुक्तकवचा विभो । विश्वस्ता रजनीं सर्वे प्रेता इव विचेतसः 11 88 11 यस्तेषां तदवस्थानां द्वह्येत पुरुषोऽन्रज्ञः। व्यक्तं स नरके मन्जेदगाघे विपुलेऽ हवे 11 88 11 सर्वास्त्रविद्धपां लोके श्रेष्ठस्त्वमसि विश्रुतः। न च ते जातु लोकेऽस्मिन्सुसूक्ष्ममपि किल्विपम् ॥१५॥ त्वं पुनः सूर्यसङ्कादाः श्वोभूत उदितं रवौ । प्रकाशे सर्वभूतानां विजेता युधि शात्रवान् ॥ १६ ॥ असम्भावितरूपं हि त्विय कर्म विगहितम्। शुक्ले रक्तमिव न्यस्तं भवेदिति मतिर्भम अश्वत्थामीवाच-एवमेच यथाऽऽत्थ त्वं मातुलेह न संशयः। तैस्तु पूर्वमयं सेतुः शतधा विद्लीकृतः 11 36 11 प्रत्यक्षं भूमिपालानां भवतां चापि सन्निधी। न्यस्तशस्त्रा मम पिता धृष्टशुन्नेन पातितः 11 28 11 कर्णश्च पतिते चक्रे रथस्य रथिनां वरः। उत्तमे व्यसने मग्नो हतो गाण्डीवधन्वना

ऐसे मतुष्योंको मारना धर्म नहीं। इस समय सब पाञ्चाल विश्वास सहित कवच खोलकर प्रेतके समान अचेत सो रहे हैं, जो पापी मुर्ख इस समय उनसे द्रोह करेगा वह अवस्य ही अपार घोर नरकमें जायगा! (७-१४)

हमारी यह इच्छा है कि तुम सब शक्त जाननेवाले और प्रसिद्ध वीर हो, तुम्हें जगतमें थोडा भी कलङ्क न लगने पावे । प्रातःकाल होते ही तुम सूर्य के समान तेज धारण करके सब शञ्जओंको जीतियो, यदि तुम सेते पाश्चालोंको मारोगे तो तुम्हारे जीवनमें ऐसा कलङ्क लग जायगा, जैसे सफेद बस्तमें लाल रङ्गका घटना। (१५—१७)

अक्वत्थामा बोले, हे मामा ! आपने जो कहा वह सब वैसे ही है, इसमें कुछ सन्देह नहीं, परन्तु पाण्डवोंहीने पहिले इस धर्मरूपी पुलको काटकर सैकडों इकडे कर दिये हैं, अनेक राजा और आपके देखते देखते क्रस्तरहित हमारे पिताको धृष्टसुम्नने मार डाला। जिस समय महारथ कर्णका पहिया पृथ्वीमें घुस गया था और वे उसके निकालनेमें महापरिश्रम कर रहे थे उसी समय अर्जु-नने उन्हें मारडाला, ज्ञिखण्डीको आगे eeeceeeceeeceeecee

तथा शांतनवो भीष्मो न्यस्तशस्त्रो निरायुषः । शिखण्डिनं पुरस्कृत्य हतो गाण्डीवधन्वना ॥ २१ ॥ भूरिश्रवा महेष्वासस्तथाप्रायगतो रणे। कोशतां भूमिपालानां युयुधानेन पातितः दुर्योधनश्च भीमेन समेख गद्या रणे ! पर्यतां भूमिपालानामधर्मेण निपातितः 11 23 11 एकाकी बहुभिस्तत्र परिवार्य महारथै:। अधर्मेण नरच्याची भीमसेनेन पातितः 11 88 11 विलापो भन्नसक्थस्य यो मे राज्ञः परिश्रतः। वार्तिकाणां कथयतां स मे मर्माणि कुन्तति ॥ २५ ॥ एवं चाधर्मिकाः पापाः पात्राला भिन्नसेतवः। तानेवं भिन्नमर्यादानिकं भवान्न विगर्हति पितृहन्तृनहं हत्वा पाश्वालान्निशि सौप्तिके। कामं कींटः पतङ्गो वा जन्म प्राप्य भवामि वै ॥ २७ ॥ त्वरे चाहमनेनाद्य यदिदं मे चिकीर्षितम्। तस्य मे त्वरमाणस्य कृतो निद्रा क्रतः सुखम्॥ २८॥ न स जातः पुमाँछोके कश्चित्र स भविष्यति। यो से व्यावर्त्तयेदेतां वधे तेषां कृतां मतिम् ॥ २९ ॥

एवमुक्त्वा महाराज द्रोणपुत्रः प्रतापवान् ।

करके अर्जुनने श्रुखरहित मीष्मको मारा, महाशस्यधारी भूरिश्रवाको वर्तम वेठ देखकर भी अनेक राजांके रोकनेपर भी सात्यकीने मार डाला । मीमसेनने गदा-युद्धमें अधर्मसे राजाको मारा और उनके शिरपर पर रक्खा, देखो अनेक महार-थाँने मिलकर पुरुपसिंह महाराजको मरवा दिया, जांघ टूटे राजा मेरे आगे कैसे रोते थे, यह स्मरण करके मेरे शरीर जले जाते हैं: ऐसे पापी पाश्चाल

धर्मके छोडनेवालींकी निन्दा करते नहीं और हमारी निन्दा करते हो । चाहे मैं अगले जन्ममें कीडा हूं, चाहे पतङ्गा वनूं परन्तु अपने पिताके मारनेवाले पाश्चा-लोंको सोते ही मारुंगा, अब मैं अपने कर्मके लिये वडी ही श्रीघ्रता करता हुं, सो भुझे सुख और निद्रा कहां? जगतमें कोई मनुष्य ऐसा नहीं है, न होगा, जो मुझे इनके मारनेसे रोके । (१८-२९)

शहामात । [१ तीकिक्ववे

क्वान्यात । [१ तीकिक्ववे

क्वान्यात । क्वान्य । क्वान्य । क्वान्य । क्वान्य महात्मानी मोजशारद्वतातुमी ।

क्वान्य स्यन्दनो युक्तः किं च कार्ष चिकीर्षितम्॥६१॥

क्वान्य स्यन्दनो युक्तः किं च कार्ष चिकीर्षितम्॥६१॥

क्वान्य स्यन्दनो युक्तः किं च कार्ष चिकीर्षितम्॥६१॥

क्वान्य स्यान्य सह नर्षभ ।

समद्रुःखसुखो चापि नावां श्विद्वप्रहेसि ॥ ६२॥

अभ्वत्थामा त्र संकुद्धः पितुवेधमनुस्मरत ।

ताभ्यां तथ्यं तथाऽऽचक्यौ यदस्यात्मिचिकीर्षितम्॥६३॥

हत्वा शतसहस्राणि योधानां निश्चितः श्वरैः ।

न्यस्तश्लो मम पिता एष्टचुम्नेन पातितः ॥ ३४॥

तं तथेव हनिष्यामि न्यस्तधर्माणमय वै ।

पुत्रं पात्रालराजस्य पापं पापेन कर्मणा ॥ ६५॥

कर्यं च निहतः पापः पात्राल्यास्य च ।

शक्षेण चिकिताँ श्लोकात्रामुयादिति मे मतिः ॥ ३५॥

कर्यं च निहतः पापः पात्राल्यास्य प्रायादिति मे मतिः ॥ ३५॥

क्विमं सम्यस्याय प्रतिक्षेतां रथवयों परन्तपौ ॥ ३७॥

हत्युक्त्वा रथमास्थाय प्रायादिति मे मतिः ॥ ३५॥

क्वां सक्वात्मा उठे और अपने रथमें घोढे

लोडकर पक्लेश शहर्वोकी ओर चल

हत्ये, तथ महात्मा कृपाचार्य और कृत
चर्मा बोले, हे पुल्पसिंह ! आपने अपने

रथमें घोढे क्यां लोडे ! आपने अपने

रथमें घोढे क्यां लोडे ! आपने अपने

रथमें घोढे क्यां लोडे ! आपने अपने

रथमें घोढे क्यां समान ही सुखदुःख

मोगेंग, परन्त हस समय आप कर्वां नाते

सो किंदे ! (२०–६२)

उनने चचन सुन कोध मरे अक्त
त्यामा अपने पिताके मरनेका समरण

करके अपनी इच्छा प्रकाशित करने

रथमा अपने दिवाके सरनेका समरण

करके अपनी इच्छा प्रकाशित करने

रथमा अपनी १००॥ मरनेकर व्यक्तर्यामाने अपना

स्वा । (३१—३७)

ऐसा कहकर अव्यत्यामाने अपना

उत्थान कहकर अव्यत्यामाने अपना

स्वा । (३१—३७)

ऐसा कहकर अव्यत्यामाने अपना

३९९८३६९६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६ समामार्थाः गणकामनामा	कृतवर्मा च सात्वतः ॥ ३८ ॥
ते प्रयाता व्यरोचन्त	•
हूयमाना यथा यज्ञे स	
ययुश्च शिविरं तेषां स्	
द्वारदश तु सप्राप्य द्र	ौणिस्तस्यौ महारथः ॥ ४० ॥ [२१४]
इति श्रीमहाभारते कतसाहरूयां संहितायां वैयासिक्य	
ष्ट्रतराष्ट्र ज्वाच- द्वारदेको ततो द्रौणिम	
अक्रवेतां भोजकृपौ (
सञ्जय उवाच— ऋतवर्माणमामंत्र्य क्रुपं	
द्रौणिर्मन्युपरीतात्मा	
तत्र भूतं महाकायं च	-
सोऽपइयद्वारमाश्रित्य	* *
वसानं चर्म वैयाघं मह	*
कृष्णाजिने।त्तरासङ्गं	नागयज्ञोपवीतिनम् ॥ ४॥
वाहुभिः स्नायतैः पीनै	र्नानाप्रहरणोचतैः ।
बद्धाङ्गदमहासर्पं ज्वात	
दंष्ट्राकरालवदनं व्यारि	इेतास्यं भयानकम् ।
रथ हांका और शत्रुओंकी ओरको चले।	अञ्चत्थामाको डेरोंके द्वारपर खडे देख
उनके सङ्ग कृपाचार्य और कृतवर्मा मी	कृपाचार्य और कृतवर्माने क्या किय
चले, उस समय इन तीनों वीरोंका ऐसा	सो हमसे कहो। (१)
तेज दीखता था, जैसे यज्ञमें जलती	सञ्जय बोले, अञ्चत्थामाको द्वारप
हुई अग्नि। चलते चलते ये तीनों बीर	खडे देख दोनों वीरोंने संग सम्मित
पाण्डवोंकी सेनाके पास पहुंचे, और देखा	करी, तब क्रोघ मरे अव्वत्थामा थोड
तो वहां सब बीर सोते हैं तब महारथ	और आगे बढे, तब उन्होंने द्वारप
अञ्चत्थामा रथसे उत्तरे और द्वारपर	चन्द्रमा और सर्वके समान तेजसी बहे
गये। (३८४०)[२१४]	श्वरीरवाले, वाघका चमडा ओढे, काले
स्रोधिकपर्वमें पांच अध्याय समाप्त ।	हरिनका चमडा बिछाए, जनेऊं पहिने
सीव्तिक पर्वमें छः अध्याय ।	अनेक मोटे मोटे हाथोंमें शस्त्र लिये
महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय !	सांपका बाजुबन्द पहिने, जलती हुई

महामातः। [१ वीतिकस्य विज्ञान्यस्य विज्ञानस्य विज



आध्वस्थामानं उसवर दिश्व अस्त्रोद्धी त्रृष्टिकी। था. सु. भाष)



प्रस्ताव ह] १० सौष्कर्ण । ११ विद्या विद्या

पहानाता। [१ सीरिकक्ष्ये

प्रकारकारां प्रविद्या हिर्म स्वाप्त । १२ ॥

इत्येवं गुक्तिः पूर्वमुपदिष्टं च्यां सदा ।

सोऽहमुत्कम्य पत्थांन शास्त्रहण्टं स्नातनम् ॥ २३ ॥

अमार्गेणेवमारम्य घोरामापदमागतः ।

तां चापदं घोरतरां प्रवदन्ति मनीपिणः ॥ २४ ॥

यद्यम्य महत्कृत्यं भ्यादिषि निवर्तते ।

अक्षक्तश्चेय तत्कर्तुं कर्मचाक्तिश्च । १५ ॥

न हि दैवाद्गरीयो वै मानुषं कर्म कथ्यते ।

मानुष्यं क्रवेतः कर्म यदि दैवान्न सिध्यति ॥ २६ ॥

स पथः प्रच्युतो धर्माद्विपदं प्रतिपयते ।

प्रतिज्ञांन द्यविज्ञानं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ १७ ॥

स पथः प्रच्युतो धर्माद्विपदं प्रतिपयते ।

प्रतिज्ञांन द्यविज्ञानं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ १० ॥

यदारम्य कियां काश्चिद्रयादिहं निवर्तते ।

तदिदं दुष्पणीतेन भयं मां समुप्रस्थितम् ॥ १८ ॥

न हि द्रोणसुतः संस्थे निवर्तति कथञ्चन ।

इदं च समहजूतं दैवदंडिमिवोद्यतम् ॥ १८ ॥

न वैतदिभानानामि चिन्तयन्नपि सर्वथा ।

हेर और सोकर उसी समय ठठे तथा

पागक, मत्रयाके और प्रमत्त मनुष्यपर

कन्न वकावे। परन्तु में सनातन ज्ञास्त्र

मं लिखे व्रमते क्रिकर अर्घम करना

चाहाया। इसी लिये इस घोर आपित्तमं

पाडा। महास्मा उसे हो चोर आपित्तमं

पाडा था। इसी लिये इस घोर आपित्तमं

पाडा था। इसी लिये इस घोर आपित्तमं

पाडा वा। इसी लिये इस घोर आपित्तमं

पाडा। महास्मा उसे हो चोर आपित्तमं कर सके और धर्मसे भी नष्ट

हेत कि जो मनुष्य विस्त कामके किना

करे और समन उसे उसमें करना

चाहाया। इसी लिये इस घोर आपित्तमं

पाडा। महास्मा उसे हो चोर आपित्तमं

पाडा। महास्मा देश चोर आपित्तमं

पाता, वेद्या परित्रम द्वा द्वा हो चोना पडता

हे, भैन विना विचारे यह काम किया

था, वो हो द्रोणाचार्यका पुत्र युद्रसे नहीं लौटेता, परन्तु यह सून देवके समान खा हो देश में अव्यन्त विचारने पर

॥ ଅବନ୍ୟରଣରେ ବେତ୍ରତ୍ତର କର୍ଷ୍ଟରତ୍ତର କର୍ଷ୍ଟରତ୍ତର ପର୍ଷ୍ଟର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପ୍ରତ୍ୟ ବର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍ଷ୍ଟରେ ପର୍

200000000000000000000000000000000000000	999999999999999999966666666666666666666	66666233333	ŀ
	विश्वरूपं विरूपाक्षं वहुरूपमुमापातिम्	11 \$ 11	
	इमशानवासिनं द्यं महागणपतिं विशुद् ।		
	खट्वाङ्गधारिणं रुद्रं जटिलं ब्रह्मचारिणम्	ji 8	
	मनसा सुविद्युद्धेन दुष्करेणाल्पचेतसा ।		
	सोऽहमात्मोपहारेण यक्ष्ये त्रिपुरचातिनम्	11 4 11	
	स्तुतं स्तुत्यं स्तूयमानममोघं कृत्तिवाससम्।		
	विलोहिनं नीलकण्ठमसद्यं दुर्निवारणम्	11 8 11	
	शकं ब्रह्मसुजं ब्रह्म ब्रह्मचारिणमेव च ।		
	व्रतवन्तं तपोनिष्ठमनन्तं तपतां गतिम्	11 19 11	
	षहुरूपं गणाध्यक्षं त्र्यक्षं पारिषद्धियम् ।		
	धनाध्यक्षं क्षितिमुखं गौरीहृदयवह्नभम्	11211	
	कुमारपितरं पिङ्गं गोवृषोत्तमवाहनम्।		
	ततुवाससमत्युग्रमुमाभूषणतत्परम्	11 8 11	
	परं परेभ्यः परमं परं यसान्न विचते।		
	इष्वस्रोत्तमभर्तारं दिग्न्तं देशरक्षिणम्	१०	
	हिर्ण्यकवचं देवं चंद्रमौलिविभूषणम् ।		
	प्रपद्य चारण देवं परमेण समाधिना	11 99 11	

देनेवाले, विहार और प्रकाश करनेवाले, जगत्मावन ईश्वर, नीलकण्ठ, सनातन, व्यापक, दक्षयज्ञविनाशक, मक्तदुःखना, शक, जगद्रप्,विरूपाक्ष,अनेक रूपवारी, पार्वतीपति, सशानवासी, महावलवान गणोंके स्वामी, सर्व व्यापक, नरपञ्चर घारी, रुद्र, जटाघारी, व्रक्षचारी, त्रिपु-रासुरनाशक, स्तुतिकरने योग्य, स्तुति किये हुये देवतींसे स्तुतियोग्य, अनन्त, कृत्विवासा, विलोहित, नीलकण्ठ, व सहनेयोग्य, दुःख निवारण करने योग्य, इन्द्र, व्रक्षाको बनानेवाले, व्रक्ष, व्रक्ष-

चारी, व्रवधारी, तपस्वी, अपार, तपः स्वियोंको फल देनेवाले, अनेक रूपः धारी, त्रिनेत्रगणोंके प्यारे, घनके स्वामी जगत्के मुख, पावितीके हृदयके प्यारे, कार्चिकेयके पिता, उत्तम बैलपर चढनेवाले, स्क्ष्म वस्रधारी, पावितीको भूपण पहिरानेवाले, उत्तमसे उत्तम, अल्यन्त उत्तम, सबसे उत्तम, उत्तम श्रस्थारी, सब जगत्के स्वामी, सब दिशा और देशोंके रक्षक, सुवर्ण कलश्चारी, और चन्द्रमाको माथेम धारण करनेवाले मगवान श्रिवको मैं अल्यन्त श्रद्धायुक्त

श्वापण ७] १० सीचिकवर्ष। १५ त्राम्या सुदुष्करास् । सर्व सृतोपहारेण यस्येष्ठ हुं सुचिना सुच्चिम् ॥ १२ ॥ हित तस्य व्यवासितं ज्ञात्वा योगात्सुकर्मणः । पुरस्तात्काञ्चनी वेदी प्राहुरस्तिन्महात्मनः ॥ १३ ॥ तस्या वेचां तदा राजंश्चित्रभातुरज्ञायत । स दिशो विदिशः स्व च ज्वालाभिरिव प्रयम् ॥१४॥ दिप्तास्यनपनाश्चात्र नैकपादिशिरोसुजाः । १६ ॥ हिपशैलप्रतीकाशाः प्राहुरस्तिन्महागणाः । श्वराहोष्ट्रस्पाश्च ह्यगोमानुगोसुखाः ॥ १६ ॥ हिपशैलप्रतीकाशाः प्राहुरस्तम्महागणाः । श्वराहोष्ट्रस्पाश्च ह्यगोमानुगोसुखाः ॥ १६ ॥ क्ष्म्भार्जारवदना व्यावहीपिम्रुखास्तथा । वाकवक्त्राः प्रमुखाः प्रमुखाः श्वराह्माः सुमुखाः श्वराह्माः सुमुखाः स्वराह्माः सुमुखाः । १८ ॥ क्रुम्नकमुखाश्चेव शिद्युमारमुखास्तथा । सहामकरवक्त्राश्च हंसवक्त्राः सिनवक्त्रास्तथेव च ॥ १८ ॥ हिरिवक्त्राः कौञ्चमुखाः कपोतेभमुखास्तथा । सहामकरवक्त्राश्च तिनवक्त्रास्तथेव च ॥ १८ ॥ हिरिवक्त्राः कौञ्चमुखाः कपोतेभमुखास्तथा । सहामकरवक्त्राश्च तिनवक्त्रास्तथेव च ॥ १८ ॥ हिरिवक्त्राः कौञ्चमुखाः कपोतेभमुखास्तथा । सहामकरवक्त्राश्च तिनवक्त्रास्तथेव च ॥ १८ ॥ हिरिवक्त्राः कौञ्चमुखाः कपोतेभमुखास्तथा । सहासा मुकर्मी अत्रत्यामाका जामे सहासा मुकर्मी अत्रत्यामाका जामे सहासा मुकर्मी अत्रत्यामाका जामे प्राप जानकर योगके चलते उनके वाग उत्पन्न होम् वेदी वनगई, वव उस वेदीसे अतेक हाथ परि शिरवाले, रस्तांके विचित्र आप्र्यण परिरे, हीप जार पर्वतांके समा प्राप किसी का वेदा का,किसी का वाव का,किसी का प्राप का,किसी का प्राप का,किसी का सुख को का,किसी का प्राप का,किसी का प्राप

हमां सर्वभ्र हात । पुरस्त तस्यां स दि पुरस्त तस्यां स दि दि ति । पुरस्त तस्यां स दि दि ति । पुरस्त तस्यां स दि दि ति । पुरस्त हो पदे श्व न । सहाज दार्वा क्र मेन । सहाज पवित्र हो कर सब प्रकारक पवित्र हो कर सब प्रकारक पवित्र हो कर सब प्रकारक पवित्र हो कर यो गके, वलं प्रकार साय जानकर यो गके, वलं प्रकार साय जानकर यो गके, वलं अनेक हाथ पर शिरवाले, स्व अनेक हाथ पर शिरवाले, स्व अभूषण पहिरे, द्वीप और प्रकार कर सामूषण पहिरे, द्वीप और प्रकार हो पर सामूषण परि । स्व सामूषण । स्व सामूषण परि । सामूषण परि । सामूषण परि । सामूषण परि । सामूष्ण परि । सामूषण परि । सामूष्ण परि । सामूष्ण परि । सामूष्ण परि । सामूष्ण परि । सामूषण परि । सामूष्ण परि । स

क्लास्तयैव च ॥ २०॥
तथैव च महोदराः।
च्येनवक्त्राश्च भारत ॥२१॥
च्येनवक्त्राश्च भारत ॥२१॥
च्येनवक्त्राश्च भारत ॥२१॥
च्याणीस्तयैव च ॥२२॥
च्याणीस्तयैव च ॥२३॥
च्याणीस्तयैव च ॥२३॥
च्याणीस्तयैव च।
च्याणीस्तयीव च।
च्याणीस्त्रयाव ॥
च्याणीस्त्यव ॥
च्याणीस्त्रयाव ॥
च्याणीस्त्रयाव ॥
च्याणीस्त्रयाव ॥ पारावतमुखाश्चैव मद्गवक्त्रास्तथैव च पाणिकणीः सहस्राक्षास्तथैव च महोदराः। निर्मासाः काकवक्त्राश्च इयेनवक्त्राश्च भारत ॥२१ ॥ तथैवाशिरसो राजन् ऋक्षवक्त्राश्च भारत। पदीप्रनेत्रजिह्वाश्च ज्वालावणीस्तथैव च ज्वालाकेशाश्च राजेन्द्र उवलहोमचतुर्भुजाः । भेषवक्त्रास्तथैवान्ये तथा छागमुखा रूप शङ्खाभाः शङ्खवन्त्राश्च शङ्खवर्णास्तथैव च। शङ्खमालापरिकराः शङ्खध्वनिसमस्वनाः जटाघराः पत्रशिखास्तथा मुण्डाः कृशोद्राः। चतुर्देष्ट्राश्चतुर्जिह्याः चांकुकणीः किरीटिनः मौजीधराश्च राजेन्द्र तथाऽऽक्जित्रितमूर्घजाः। उरणीषिणो मुक्कटिनश्चारुवकत्राः स्वलंकृताः पद्मोत्पलापीडघरास्तथा मुकुटघारिणः।

मगर, मछली, कछवे, कबृतरं, परेवा, मछलीके समान मुख

पारावतः
पाणिकण
निर्मांसा
तथैवाकि
पदीप्रनेः
च्यालके
भेषवकः
चालाके
चेषवकः
चाल्लकः
चाल्ल किसीके दाथमें कान था, किसीके हजारों नेत्र थे, किसीके बडामारी पेट था, किसीके शरीरमें मौसही नहीं था, किसीके कौवेका, किसीका गृद्धका ग्रुख था, किसीके शिर ही नहीं था, किसीके रीछका ऐसा मुख था, किसीके नेत्र अग्निके समान थे, किसीकी बडी मारी जिह्वा थी, किसीका आयिके समान रङ्ग था, किसीके नेत्र और बाल अग्निके समान थे, सबके चार चार हाथ थे, किसीका वकरेके समान मुख था, कि-सीका मेडेके समान मुख था, किसीका

माहात्म्येन च संयुक्ताः शतशोऽध सहस्रशः॥ २७ ॥ शतन्नीवज्रहस्ताश्च तथा मुसलपाणयः । सुशुण्डीपाशहस्ताश्च दण्डहस्ताश्च भारत पृष्ठेषु वद्धेषुषयश्चित्रवाणोत्कदास्तथा । सध्वजाः सपताकाश्च सघण्टाः सपरश्वधाः महापाशोद्यतकरास्तथा लगुडपाणयः । स्थूणाहस्ताः खद्गहस्ताः सर्पोच्छितकिरीटिनः॥ ३० ॥ महासर्पाङ्गदघराश्चित्राभरणघारिणः। रजोध्वजाः पङ्कदिग्धा सर्वे शुक्काम्बरस्रजः नीलाङ्गाः पिङ्गलाङ्गाश्च मुण्डवक्त्रास्तैथेव च । भेरीशङ्खमदङ्गांश्च झर्झरानकगोमुखान् ॥ ३२॥ अवाद्यन्पारिषदाः प्रहृष्टाः कनकप्रभाः। गायमानास्तर्थेवान्ये नृत्यमानास्त्रथाऽपरे 11 33 11 लङ्घयन्तः प्रवन्तश्च वल्गन्तश्च महारथाः। धावन्तो जवना मुण्डाः पवनोद्धृतमूर्धेजाः 11 88 11 मत्ता इव महानागा विनद्नतो मुहुर्बुहुः। सुभीमा घोररूपाश्च शुलपदिशपाणयः 11 34 11 नानाविरागवंसनाश्चित्रमाल्यानुलेपनाः।

रम्पसे भरे थे, ऐसे सहस्तों गण अश्वस्थामाको दिखाई दिथे, किसीके हाथमें
श्वतमी, किसीके हाथमें लाठी, किसीके
हाथमें डण्डा, किसीके हाथमें सुगुण्डा,
किसीके हाथमें परिघ, किसीके हावमें वाण,
किसीके घण्टा, किसीके परक्ष्म, किसी
के बरछी और किसीके सांप था, हाथ
में सबके पास ध्वजा और पताका थीं,
कोई सांपका बाज्यन्द पहरे था, और
कोई उत्तम विचित्र आभूपण पहिरे था।
किसीके कमरमें तूणीर बंधा था, सब

धूल और मिट्टीस भरे सफेद वस्त्र और माला पहिने नीले और धूमले वस्त्र में थे, कोई मृदङ्ग, कोई घण्टा, कोई गो- मुख बजाते थे, कोई सोनेके समान रङ्ग वाला गण नाचता था, कोई सुदता था, कोई उछलता था, कोई मागता था, कोई वेगसे दौढता था, किसीके बाल वायुसे उडते थे, कोई मतवाले हाथीके समान गर्जकर इधर उधर घूमते थे, कोई शूल और पश्चिश्च हाथमें लेकर मयानक रूप धारण करके दौडते थे.

येही सब गण चारों प्रकारके जग-त्का नाश कर सकते हैं, इन्हें कहीं भय नहीं होता, यही शिवकी मौहको देख सकते हैं। येही जगतके खामी और सब काम करनेमें समर्थ हैं, सब विद्या-ऑको जाननेवाले हैं, किसीका द्वेप नहीं करते । आठों प्रकारकी ऋद्वी प्राप्त होने पर मी अभिमान नहीं करते, इनका कर्म देखकर शिव भी आश्चर्य करते हैं. यह भी शिवकी सदा आराधना करते RECERTA CONTRACTOR CON

चतुर्विधात्मकं सोमं ये पिवन्ति च सर्वदा। श्रुतेन ब्रह्मचर्येण तपसा च द्रमेन च ये समाराध्य शूलाङ्कं भवसायुज्यमागताः । यैरात्मभृतैर्भगवान्पार्वत्या च महेश्वरः सहाभूतगणैर्भुङ्क्ते भृतभव्यभवत्प्रसुः। नानावादित्रहसितक्ष्वेडितोत्कुष्टगर्जितैः संत्रासयन्तरते विश्वमश्वत्थामानमभ्ययुः। संस्तुवन्तो महादेवं भाः क्ववीणाः सुवर्चसः ॥ ४८॥ विवर्धयिषवो द्रौणेर्महिमानं महात्मनः। जिज्ञासमानास्तत्तेजः सौप्तिकं च दिदक्षवः भीमोग्रपरिघालातश्रुलपहिशापाणयः। घोररूपाः समाजग्युर्भृतसङ्घाः समन्ततः जनयेयुर्भयं ये सम जैलोक्यस्यापि दर्शनात् । तान्प्रेक्षमाणोऽपि व्यथां न चकार महाबलः ॥ ५१॥ अथ द्रौणिर्धनुष्पाणिर्वद्धगोघाङ्गुलिञ्जवात् । स्वयमेवात्मनात्मानसुपहारसुपाहरत् धर्नुषि समिधस्तत्र पवित्राणि सिताः शराः। इविरात्भवतश्चातमा तिसान् भारत कर्मणि

भगवान शिव भी मन, वचन और कमें से अपना मक्त जानकर इन्हें प्रत्रके समान मानते हैं, यही सदा चारों प्रकारके सोम पीते हैं। इन्होंने विद्या, ब्रह्मचर्य, तप और योगसे शिवको प्रसन्न किया है, और शिवकी सायुज्य मोक्ष पाई है, भगवान सब जगत्के खामी शिव पार्वतीके सहित इनके हृदयमें निवास करते हैं।(४०-४६)

तब ये सब गण अनेक प्रकारके

जगत्को डराते, अपने तेजसे सब ओर प्रकाश करते, अस्वत्थामाकी ओर दौडे, और महात्मा अश्वत्थामाको स्रोते हुये वीरोंको और तेजको दिखाने लगे और मयानक परिघ,शूल और पड्डिश लेकर अक्वत्थामाको स्राने लगे,उनको देखकर तीनों लोक डर सकते हैं, परन्तु अध्य-त्थामा न डरे, तब धनुषधारी तलहत्थी पहिने बीर अञ्बत्थामाने पवित्र धनुप और तेज वाणोंको समिध बनाकर अपने श्रुव्य सहामात्र । [१ संसिक्ष्ये स्वाप्तात्र । स्व साम्येन संत्रेण ह्रोणपुत्रः प्रतापवात् । स्व ॥ स्व स्व साम्येन संत्रेण ह्रोणपुत्रः प्रतापवात् । स्व ॥ स्व स्व साम्येन संत्रेण ह्रोणपुत्रः प्रतापवात् । स्व ॥ स्व स्व साम्येन संत्रेण हेर्ड स्व साम्यान हिर्माण हेर्ड स्व साम्यान हिर्माण ह

क्रर्वता तात सम्मानं त्वां च जिज्ञासता मया। पाञ्चालाः सहसा गुप्ता मायाश्च बहुशः कृताः॥ ६४ ॥ कृतस्तस्येव सम्मानः पात्रालान् रक्षता मया । अभिभृतास्त् कालेन नैषामचास्ति जीवितम् ॥ ६५ ॥ एवसुक्त्वा महात्प्रानं भगवानात्मनस्तनुम् । आविवेश ददौ चासौ विमलं खड्डामुत्तमस् अथाविष्टो भगवता भूगो जल्वाल तेजसा। वेगवांश्राभवयुद्धे देवसृष्टेन तेजसा तमहरूयानि भूनानि रक्षांसि च समाद्रवन् । अभितः ज्ञाञ्चिशिवरं यान्तं साक्षादिवेश्वरम्॥ ६८ ॥ [३१६] इति श्रीमहासारते शतसाहरूयां संहितायां दैयासिक्यां सौक्षिके पर्वणि

हैं।णिकृतशिवार्चने सप्तमोऽध्याय: ॥ ७ ॥

धृतराष्ट्र उवाच —तथा प्रयाते शिविरं द्रोणपुत्रे महारथे। कचित्कृपश्च भोजश्च भयातौं न व्यवर्त्तताम् काबिन्न वारितौ श्चद्रैरक्षिभिनीपलक्षितौ। असहामिति मन्वानी न निष्ट्रती महारथौ कचिद्रन्मध्य शिविरं इत्वा सोमकपाण्डवात्।

कोई जगत्में प्यारा नहीं है, उन्होंने मुझसे कहा था, कि तुम पाञ्चालोंकी रक्षा करो, इसी लिये में उनकी रक्षा कर रहा था, परन्तु अय उनका काल आगया इसलिये अब वे नहीं जी सक-ते। (६१-६५)

ऐसा कहकर भगवान् शिवने उनके शरीरमें प्रवेश किया, और एक तेज खड़ दिया, तब अक्वत्थामा तेजसे अत्यन्त प्रकाशित होने लगे, और अत्यन्त बल-वान होगये। अनन्तर ये सब भूत भी हेरेमें जाते हुये अस्वत्थामाके सङ्ग

दुर्योधनस्य पदवीं गतौ परमिकां रणे 11 3 11 पञ्चालैनिंहतौ बीरा कवित्तु स्वपतां क्षितौ । कवित्ताभ्यां कृतं कर्म तन्ममाचक्ष्व सञ्जय 11 8 11 तस्मिन्प्रयाते शिविरं द्रोणपुत्रे महात्मनि । कृपश्च कृतवर्मा च शिविरद्वार्यतिष्ठताम् 11 9 11 अश्वत्थामा तु तौ दृष्ट्वा यत्नवन्तौ महारथौ । प्रहृष्टः शनकै राजन्निदं वचनमत्रवीत् 11 5 11 यत्तौ भवन्तौ पर्याप्तौ सर्वक्षत्रस्य नाराने । किं पुनर्योधशेषस्य प्रसुप्तस्य विशेषतः 11 19 11 अहं प्रवेक्ष्ये शिविरं चरिष्यामि च कालबत्। यथा न कश्चिदपि वां जीवनमुच्येत मानवः 11 6 11 तथा भवद्वचां कार्य स्वादिति मे निश्चिता मितः। इत्युक्त्वा प्राविशद्रौणिः पार्थानां शिविरं महत् ॥९॥ अद्वारेणाभ्यवस्कत्च विहाय भयमात्मनः। स प्रविदय महाबाहुरुद्देशज्ञश्च तस्य ह 11 80 11 घुष्टशुन्नस्य निलयं रानकैरभ्युपागमत्।

कर य दोनों महारथ नहीं छीटे ? प्रार-व्यहीसे सोमक और पाण्डवोंको मारनेपर भी ये लोग जीते बच गए और दुर्योध-नके शक्त खर्गको न गये १ प्रारव्धहीसे ये दोनों बीर पाञ्चालोंके हाथसे बच गये। कही उस युद्धमें इन्होंने क्या क्या किया १ (१-४)

सङ्खय बोले, हे महाराज ! जिस समय महात्मा अञ्चन्यामा हेरोंके भीतर घुड गरे, तब कुपाचार्य और कृतवमी द्वारपर खंडे रहे, उनको अन्त्यत साव-धानतासे द्वारपर खडे देख अव्वत्थामा घीरसे बोले. आप लोग अत्यन्त

, o on in the interpretable of the control of the c घान होकर खडे रहिये; हमें निश्चय है कि आप सब क्षत्रियोंको मार सक्ते हैं और यह तो थोडेसे बचे मनुष्य हैं, तिसमें मी सोरहे हैं, मैं डेरेमें जाकर कालके समान घूमुंगा, आप लोग ऐसा यह कीजिय कि कोई मनुष्य जीता हुआ न भागने पावे । (५-८)

ऐसा कहकर अञ्चत्थामा द्वारकी ओरसे चल दिये और एक विना द्वारके मार्गको देखकर घीरेसे कृदकर पण्डवोंके भयान-के डेरेमें घुसे, फिर अपने जीनेकी आशा और मय छोडकर घृष्टशुस्नके चिन्ह प्रथाय ८]

श्वाक्षिक्षणं । १० सेप्तिक्षणं । ११ ॥

प्रमुद्राश्चेव विध्वस्ताः समेख परिषाविताः ।

श्रथ पविद्य तद्वेदम ष्रष्टश्चास्य मारतः ॥ १२ ॥

पात्राल्यं श्यमे द्रौणिरपद्यस्सुप्तमन्तिकात् ।

श्रोमावदाते महित स्पद्ध्यास्तरणसंवृते ॥ १३ ॥

माल्यमवरसंयुक्ते प्र्पेश्व्यास्य वासिते ।

तं श्यानं महात्मानं विस्रव्यक्षकृतोभयम् ॥ १४ ॥

प्रावोष्यत पादेन श्राप्तर्था परणदुर्भदः ॥ १५ ॥

प्रावोष्यत पादेन श्रयमस्यं महीपते ।

सम्बुध्य चरणस्यशांदुत्थाय रणदुर्भदः ॥ १५ ॥

श्रथजानादमेयात्मा द्रोणपुत्रं महारथम् ।

तसुत्पतन्तं श्रयनादश्यत्थामा महावलः ॥ १६ ॥

सम्बुध्य चरणस्यशांदुत्थाय रणदुर्भदः ॥ १५ ॥

श्रथजानादमेयात्मा द्रोणपुत्रं महारथम् ।

तसुत्पतन्तं श्रयनादश्यत्थामा महावलः ॥ १६ ॥

स्वलं तेन निष्पष्टः साध्वसेन च भारतः ॥ १७ ॥

विद्या वैव पात्राल्यो नाशक्षेत्रं तदा ।

तमाक्रम्य पदा राजन् कण्ठे चोरसि चोभयोः॥ १८ ॥

विद्या वैव पात्राल्यो नाशक्षेत्रं तदा ।

तमाक्रम्य पदा राजन् कण्ठे चोरसि चोभयोः॥ १८ ॥

ह सहाराज ! उस समय प्रव्युप्त प्रावेवित चाकुल होनेके कारण वेचत सोरहे थे । हे महाराज !

श्रवासे स्वत्यामा मार्ग खाने खहे हैं, तव व्यत्यामा मार्ग सार्ग खहा, परन्तु व्यत्याम मार्ग खो खहे हैं, तव व्यत्यामा मार्ग खाने खहे हैं, तव व्यत्यामा मार्ग खो खहे हैं, तव व्यत्याम प्रवेव चाकुल थे, हालिये क्रावर्भ पर पर खित्र हालिये क्रावर पर पर खित्र पर हित्र होतिय क्रावर पर छातीयर पर रख हित्रा, तीर प्रष्टयुक्य क्रावर पर पर छातीयर पर रख हित्र वास्त पर छातीयर विद्य स्तर होत्र विद्य होत्य वास्तर पर छातीयर विद्य स्तर स्तर पर छातीयर विद्य स्तर स

आचार्यपुत्र शस्त्रेण जहि मां मा चिरं कृथाः। त्वत्कृते सुकूताँ छोकान् गच्छेयं द्विपदांवर एवमुक्त्वा तु वचनं विरराम परंतपः। सुतः पञ्चालराजस्य आकान्तो बलिना मृद्यम् ॥२१॥ तस्य व्यक्तां तु तां वाचं संश्रुख द्रौणिरव्रवीत्। आचार्यघातिनां लोका न संति कुलपांसन तस्माच्छक्रेण निधनं न त्वमहीसि दुर्मते । एवं ब्रुवाणस्तं वीरं सिंहो मत्तमिव द्विपम् मर्भसभ्यवधीत् ऋदः पादाष्टीलैः सुदारुणैः। तस्य वीरस्य शब्देन मार्यमाणस्य वेइमनि अबुध्यन्त महाराज स्त्रियो चे चास्य रक्षिणः। ते रष्ट्रा धर्षयन्तं तमितमानुषाविक्रमम् भूतमेवाध्यवस्यंतो न सम प्रव्याहरन् भयात्। तं तु तेनाभ्युपायेन गमयित्वा यमक्षयम् अध्यतिष्ठत तेजस्वी रथं प्राप्य सुद्दीनम्। स तस्य भवनाद्राजन्निष्कम्यानाद्यन्दिशः

किया, तब पाञ्चालराजका शब्द भी बन्द होगया।(१४-१९)

अनन्तर उन्होंने अपने नख्नोंसे अक्ष्यत्थामाको चौरना चाहा, परन्तु जब बह मी न कर सके तब कुछ तुत्काते घीरे घीरे बोले, हे गुरुपुत्र, आप यह क्या करते हैं ? हमे कससे मारिये । हे बाह्यणश्रेष्ठ ! तब हम आपकी कृपासे वीरलोकको जायेंगे, उस समय शञ्जनाञ्च एष्ट्युस इसके शिवाय और कुछ न कह सके, वीर पाश्चालराजपुत्र इतना ही कह कर खुप होगये, तब बलवान अक्ष्यत्थामा बोले, और कुलाधम दुईद्धे ! जो लोग गुरुको मारते हैं उन्हें बीर लोक नहीं
मिलता, इसलिये तू ग्रन्तसे मारने योग्य
नहीं, ऐसा कहकर षृष्टचुम्नके मर्भस्थानोमें बलसे लात मारने लगे, मरते हुए
बीर षृष्टचुम्नके शन्दसे उनके पास
सोई स्त्रियां और उनकी रक्षा करनेवाले
लागे। उन्होंने अपने खामीकी ऐसी दशा
देख अक्वत्थामाको सूत जाना और
मयके मारे कुछ न बोल सकी। इसी
प्रकार षृष्टचुम्नको अक्वत्थामाने
मार डाला। (२०—-२६)

अनन्तर उस डेरेसे निकल कर ते-जसी अञ्चत्थामा स्थपर बैठकर इसरे <u>- FERRECOUNTERFERRECOUNTERFERRECOUNTERFERRECOUNTERFERRECOUNTERFERRECOUNTERFERRECOUNTERFERRECOUNTERFERRECOUNTE</u>

रथेन शिविरं प्रायाज्जिघांसुर्द्विषतो बली। अपकान्ते ततस्तस्मिन्द्रोणपुत्रे महार्थे 11 26 11 सहिते रक्षिभिः सर्वैः प्राणेद्वर्योषितस्तदा । रांजानं निहतं दृष्ट्वा भृशं शोकपरावणाः 11 99 11 च्याकोशन् क्षत्रियाः सर्वे घृष्टद्यमस्य भारत । तासां तु तेन शब्देन समीपे क्षत्रियर्षभाः क्षिप्रं च समनश्चन्त किमेतदिति चाब्रुवन्। न्त्रियस्तु राजन्वित्रस्ता भारद्वाजं निरीक्ष्य ताः॥ ३१ ॥ अब्रुवन् दीनकण्ठेन क्षिप्रमाद्रवतेति वै। राक्षसो वा मनुष्यो वा नैनं जानीमहे वयम् ॥ ३२॥ हत्वा पाश्चालराजानं रथमारुख तिष्ठाति । ततस्ते योधमुख्याश्च सहसा पर्यवारयन् ॥ ३३ ॥ स तानापततः सर्वात् रुद्राख्नेण व्यपोधयत्। घृष्टशुम्नं च इत्वा स तांश्चेवास्य पदानुगान् अपर्यच्छयने सुप्तसुत्तमौजसमन्तिके। तमप्याकम्य पादेन कण्ठे चोरासि तेजसा 11 39 11 तथैव मारयामास विनर्दन्तमरिंदमम्।

हेरोंकी ओर शब्बोंको मानेको दौहे। अक्तरधामाके जानेके पीछे सियोंने देखा कि महाराज मरे पडे हैं, तब वे सब हाहाकार करके और अत्यन्त शोकसे च्याकल होकर रोने लगी। तब सब श्रेष्ट क्षत्रिय जागे और कहने लगे कि यह क्या हुआ १ ऐसा कहकर सब क्षत्रिय युद्धके लिये च्युह (किला) बनाने लगे। तब द्वारपर जाकर देखा कि कृपाचार्य खडे हैं, तब सब स्त्री उनको देखकर डरीं, तब सब क्षत्रिय उनसे

लराजको मारा है और जो रथपर चढ-कर मागा जाता है, वह क्या कोई राक्ष-स है वा मनुष्य ? (२६-३३.)

ऐसा कहते हुँये वे सब बीर अञ्च त्थामाको मारने दौडे, परन्तु अञ्चत्था-माने रुद्रास्त्रेस उन सबको मार डाला । फिर यहांसे चलकर उत्तमीजाके डेरेमें पहुंचे और उनको भी सोते ही देखा। फिर उनके भी कण्ठमें एक पैर और एक पेर छातीमें घरकर उन्हें भी वैसे ही मार डाला। श्रञ्जनाश्चन उत्तमोजाको

युधामन्युश्च संप्राप्तो मत्वा तं रक्षसा इतम् गदामुखम्य वेगेन हृदि द्रौणिमताडयत्। तमभिद्रुत्य जग्राह क्षितौ चैनमपातयत् ॥ ३७॥ विस्फुरन्तं च पशुवत्तथैवैनमनार्यत्। तथा स वीरो इत्वा तं ततोऽन्थान्ससुपाद्रवत्॥ ३८॥ संसप्तानेव राजेन्द्र तत्र तत्र महारथान्। स्फ्रतो वेपमानांश्च शमितेव पश्चनमखे ॥ ३९ ॥ ततो निश्चिशमादाय जघानान्यान् पृथक् पृथक्। भागशो विचरन्मागीनंसियुद्धविशारदः तथैव गुल्मे संप्रेक्ष्य हायानान्मध्यगीलिमकान्। श्रान्तान् व्यस्तायुर्घान्सर्वीन् क्षणेनैव व्यपोषयत्॥४१॥ योधानश्वान् द्विपांश्चेच प्राच्छिनत्स वरासिना । रुधिरोक्षितसर्वागः कालसृष्ट इवान्तकः ા કરા विस्फ्ररद्भिश्च तैद्रौंणिर्निस्त्रिशस्योद्यमेन च। आक्षेपणेन चैवासेस्त्रिधा रक्तोक्षितोऽभवत् तस्य लोहितर्क्तस्य दीप्तखड्गस्य युध्यतः। अमानुष इवाकारो वभौ परमभीषणः 11 88 11 ये त्वजाग्रन्त कौरव्य तेऽपि श्रव्देन मोहिताः।

न्दा स मार्ग । प्रमाण के महासार के प्राप्त सार्थ के महासार के का कि गदा लेकर उठे, और अक्वत्थामाको राक्षस जानकर एक गदा उसकी छ।ती-में मारी, तौमी अञ्चत्थामाने उसके वाल पकडकर पृथ्वीमें गिरा दिया और पशुके समान मार डाला। (३६-३८)

हे महाराज ! तब वहांसे दूसरे दूसरे महारथोंके डेरोंमें जाकर सबको सोते ही मारढाला। किसीको कांपते हुये मारा, और किसीको उठते हुये मार-हाला। (३९)

घूम घूमकर इस प्रकार शञ्जवोंको मारा जैसे कोई यज्ञमें पशुवोंको मोरे। अनन्तर सब गुल्मांमें घुसकर केवल शस्त्ररहित सोते और थके गुल्मपालकोंको मारा फिर हाथी और घोडोंके बन्धन खड़से काट दिये, उस समय रुघिरमें भीगे अञ्बत्थामाका शरीर प्रलयकालके यम-राजके समान दीखता था, खड़घारी अभ्वत्थामा तीन गतियोंसे मींगे । खड़को घुमाते हुये महाभयानक

жений и полительной полительн

a de de la company de la compa

निरीक्ष्यमाणा अन्योन्यं दृष्ट्वा दृष्ट्वा प्रविव्यशुः ॥ ४५ ॥ तद्र्पं तस्य ते दृष्ट्वा क्षत्रियाः शत्रुकार्षेणः। राक्षसं मन्यमानास्तं नयनानि न्यमीलयन् 11 88 11 स घोररूपो व्यचरत्कालवच्छिबिरे ततः। अपर्यदृद्रीपदीपुत्रानवशिष्टांश्च सोमकान् 11 88 11 तेन शब्देन वित्रस्ता धनुईस्ता महारथाः। घृष्टसुम्नं इतं श्रुत्वा द्रौपदेया विज्ञाम्पते 11 85 11 अवाकिरन शरवातै भीरद्वाजमभीतवत्। ततस्तेन निनादेन संप्रबुद्धाः प्रभद्रकाः 11 88 11 **बिलीमुखैः शिखण्डी च द्रोणपुत्रं समार्दयन्** । भारद्वाजः स तान् दृष्टा श्वरवर्षाणि वर्षतः ननाद बलवन्नादं जिघांसुस्तान्महारथान्। ततः परमसंकुद्धः पितुर्वधमनुसारन् 11 48 11 अवरुद्या रथोपस्थान्वरमाणोऽभिदुद्ववे । सहस्रचन्द्रविमलं गृहीत्वा चर्मसंयुगे ॥ ५२ ॥ खडूगं च विमलं दिव्यं जातरूपपरिष्कृतम्।

हे क्रक्कलश्रेष्ठ ! उस समय जो क्षत्रिय डेरों में जागते थे, वेही अक्ष्यत्यामाका खरूप देखकर, चुप होकर, आंख
बन्दकर लेते थे, और डरके मारे मुर्लित
होजाते थे, अञ्चनाश्चन अक्ष्यत्यामाका
रूप देखकर सब लोग उसे राक्षस जानते थे, उन्हें कालके समान अपने
हेरों में घूमते देख बचे हुथे पाञ्चाल
और द्रौपदीकेपुत्र जागे और अक्ष्यत्यामाने भी उन्हें देखा। तब अनेक धनुषधारी अक्ष्यत्थामाको देखकर डरने लगे।
हतनेमें द्रौपदीके पुत्रोंने सुना कि हमारे
मामा धृष्टनुम्न मारे गये, तब वे पांचों

क्रोध करके हेरोंके द्वारकी ओर चले, वहां जाकर देखा कृपाचार्य खहे हैं, तब उन्होंने कृपाचार्यके ऊपर बाण वर्षाना आरम्भ किया इतनेमें प्रभद्रक-वंशी श्वित्रयोंमें समाचार पहुंचा तब वे लोग भी पहुंचे। (४५-४९)

तब शिखण्डी कीथ करके अश्वत्थामाके ऊपर घोर बाण वरवाने छगे।
कृपाचार्य उनको देखकर सिंहके समान
गर्जे। उस समय उस शब्दके सुनते ही
अञ्चत्थामाको अपने पिताके मरनेका
सारण आभया। तब महाकोध करके
तेज खड़ लेकर उन वीरोंके मारनेके

द्रौपदेयानभिद्रल खड्गेन व्यधमदली 1143 11 ततः स नरशार्द्छः प्रतिविन्ध्यं महाहवे ! क्रक्षिदेशेऽवधीद्राजन् स हतो न्यपतद्भवि 11 48 11 प्रासेन विद्ध्वा द्रौणि तु सुतसोमः प्रतापवान् । प्रनश्चासि समुचम्य द्रोणपुत्रमुपाद्रवत् 11 44 11 स्रतसोमस्य सासिं तं बाह्नं छित्वा नरर्षभ । पुनरप्याहनत्पार्थे स भिन्नहृदयोऽपतत् ॥ ५६ ॥ नाकुलिस्तु रातानीको रथचकेण वीर्यवान् । दोभ्योमुत्क्षिप्य वेगेन वक्षस्येनमताडयत् अताडयच्छतानीकं मुक्तचकं द्विजस्तु सः। स विद्वलो ययौ भूमिं ततोऽस्यापाहारच्छिरः॥ ५८॥ श्वतकमो तु परिघं गृहीत्वा समताडयत्। अभिद्वत्य ययौ द्रौणिं सच्ये स फलके भृज्ञम् ॥५९॥ स तु तं श्रुतकर्माणमास्ये जन्ने वरासिना। स हतो न्यपतद्भूमौ विमुदो विकृताननः तेन शब्देन चीरस्तु श्रुतकीर्तिमहारथः।

लिये अपने रथसे कुदे और अनेक चन्द्रमाके समान प्रकाशित अनेक विन्दुयुक्त
ढाल और सोनेकी सुठ्वाला चमकता
हुआ खड़ लेकर द्रीपदींके पुत्रोंकी
ओर दौडे, और प्रतिविन्ध्यके कोखमें
एक खड़ मारा, उसके लगतेही वह
कटकर पृथ्वीमें गिर गया, उसके गिरते
ही प्रतापवान श्रुतसोमने एक प्रास
अवन्त्थामाको मारा, और फिर खड़
लेकर उनकी ओर दौडे, परन्तु अवनत्थामाने शीघ्रताके सहित उनका हाथ
काट दिया, फिर शीघ्रता सहित उनकी
पछलीमें एक खड़ा मारा, उसके लगते

ही उसका हृदय फट गया, और मरकर पृथ्वीमें गिरगया, तय नक्कलपुत्र
बलवान शतानीकको कुछ शक्त न मिला, तब ट्रंट हुये रथका पहिया उठाकर अञ्चत्थामाकी छातीमें नेगसे मारा,
तब अञ्चत्थामाने नेगसे दौडकर उसे
पृथ्वीमें गिरा दिया, और फिर उसका
शिर काट लिया, तब ख्रुतकमीने दौडकर एक परिघ अञ्चत्थामाकी छातीमें
मारा, वह परिघ अञ्चत्थामाके खद्गसहित दहिने हाथमें लगा । (५०-५९)
तब अञ्चत्थामाने झपटकर उसके

99999999999999999999999 वाकिरत ॥ ६१ ॥
तिवार्य सः ।
मानसुपाहरत् ॥ ६२ ॥
प्रभद्रकेः ।
प्रभद्रकेः ।
प्रभद्रकेः ।
प्रभद्रकेः ।
विच्छो ॥ ६३ ॥
विच्छोद सोऽसिना ।
वेष्टः परन्तपः ॥ ६५ ॥
वेग्वान् ।
इामाद्रवत् ॥ ६६ ॥
विच्छारदः ॥ ६८ ॥
शासुवत् ॥ ६६ ॥
शासुवत् ॥ ६६ ॥
शासुवत् ॥ ६६ ॥
शासुवत् ॥ ६६ ॥
शासुवत् ॥ ६८ ॥ अश्वत्थामानमासाच शरवर्षेरवाकिरत तस्यापि शरवर्षाणि चर्मणा प्रतिवार्य सः। सकुण्डलं शिरः। कायात् भ्राजमानमुपाहरत् ॥ ६२ ॥ ततो भीष्मनिहन्तारं सहसर्वैः प्रभद्रकैः। आहनत्सर्वतो वीरं नानाप्रहरणैर्वली शिलीमुखेन चान्येन भुवोर्मध्ये समार्पयत्। स तु क्षोधसमाविष्टो द्रोणपुत्रो महापलः शिखण्डिनं समासाच द्विषा चिच्छेद सोऽसिना। शिखाण्डिनं ततो हत्वा क्रोघाविष्टः परन्तपः ॥ ६५ ॥ प्रभद्रकगणान्सर्वानभिदुद्राव वेगवान् । यच शिष्टं विराटस्य वलं तु भृशमाद्रवत् हुपदस्य च पुत्राणां पौन्नाणां सुहृदामपि । चकार कदनं घोरं हट्टा हट्टा महावलः अन्पानन्यांश्च पुरुपानभिसृत्याभिसृत्य च । न्यकृन्तदसिना द्रौणिरसिमार्गविशारदः कालीं रक्तास्यनयनां रक्तमाल्यानुलेपनाम् । रक्ताम्वरधरामेकां पाशहस्तां क्रुटुम्थिनीम्

कार्य के कि स्टेंट के कि से क पृथ्वीमें गिर गया, तव वीर महारथ श्चवकीर्त्त, अक्ष्यत्थामाकी और सहस्रो बाण वर्षाने लगे, परन्तु अदयत्थामाने ढालसे उन सब वाणोंको बचाकर चम-कते हुये कुण्डली सहित श्रुतकीर्विका शिर छेदन किया, तब मीष्मके मारने-वाले शिखण्डीको प्रमद्रकतंत्री क्षत्रियों-में खडा देख अश्वत्थामा उनकी ओर दीहे, बीर शिखण्डीने मी अनेक प्रका-रके बाण चलाये, परनतु कुछ सिद्धि न हुई, तब एक बाण दोनों मैंहिक बीचमें मारा. उसके लगनेसे द्रोणप्रत्रको महा-

कोध हुआ, और दौड कर शिखण्डी-को मध्य शरीरसे काट दिया। श्रञ्जना-शन अञ्चत्थामा क्रोधमें भरकर शिख-ण्डीको मारकर अभद्रक सेन(की ओर वेगसे दौंडे। फिर राजा विराटके वंशमें जो बचे थे, जो राजा द्वपदके बेटे, पोते और मित्र रह गये थे, उन सबको मारहाला । (६०-६७)

फिर और और भी प्रधान प्रधान क्षत्रियोंको खड्डसे काट दिया, उस समय सब वीरोंको यह दीखता था, कि लाल

दह्याः कालरात्रिं ते गायमानामवस्थिताम् । नराश्वकुञ्जरान्पाञ्चैर्वदृध्वा घोरै। प्रतस्थुषीम् ॥ ७० ॥ वहन्तीं विविधान्त्रेतान्पाशवद्धान्विसूर्धंजात्। तथैव च सदा राजन्न्यस्तशस्त्रान्महारथान् ॥ ७१ ॥ खप्ने सुप्तानयन्तीं तां राजिष्वन्यासु मारिष । दरशुर्योधमुख्यास्ते घन्तं द्रौणिं च सर्वदा यतः प्रभृति संग्रामः क्रुरुपाण्डवसेनयोः । ततः प्रभृति तां कन्यामपश्यन् द्वौणिमेव च ॥ ७३ ॥ तांस्तु दैवहतान्यूर्वं पश्चादद्रीणिवर्यपातयत्। त्रासयन्सर्वभूतानि विनदन् भैरवान् रवान् ॥ ७४ ॥ तदनुस्मृख ते वीरा दर्शनं पूर्वकालिकम् । इदं तदिखमन्यन्त दैवेनोपनिपीडिताः 11 44 11 ततस्तेन निनादेन प्रत्यबुद्ध्यन्त धन्विनः। शिबिरे पाण्डवेयानां शतशोऽध सहस्रशः 11 50 11 सोऽच्छिनत्कस्यचित्पादौ जघनं चैव कस्यचित् । कांश्चिद्धिभेद पार्श्वेषु कालसृष्ट इवान्तकः 11 60 11 अत्युग्रपतिपिष्टैश्च नदङ्किश्च भृशोत्कटैः।

प्रख और लाल नेत्रवाली, काली लाल माला और लाल चन्दन धारण किये काली युद्धमें घूम रही है, और फांसीसे अनेक मनुष्य और हाथियोंको मार रही है, किसीने यह देखा कि सोते हुए गस्तरहित महारथोंको वही काली फां-सीसे खींच रही है। किसीको यह दीख-ने लगा कि यही काली और यही अव्वत्थामा युद्धके आरम्भसे हमारा नाश कर रहे हैं। (६८--७३)

हे राजन् ! उन सब पाञ्चालोंको प्रारब्धने पहले ही मारडाला था, पीछे

अस्वत्थामाने उनका नाग्र किया, उस समय अञ्बत्थामाके भयानक शब्दसे पाण्डवोंके डेरेके सब भनुष्य घवडा रहे थे, कोई वीर अञ्चत्थामाके भयानक रूपको देखकर उसे साक्षात् यमराज समझते थे। (७४-७६)

अनन्तर उस घोर शब्दसे पाण्डवोंके डेरोंमें सोते हुए सैकडों सहस्रों घनुषघारी चीर जागे, तब अञ्चत्थामाने भी प्रस्य-कालके यमराजके समान रूप धारण करके किसीका पैर, किसी का हाथ,

गजाश्वमधितैश्चान्यैभैही कीर्णाऽभवत्प्रभो कोशतां किमिदं कोऽयं का शब्दः किं नु किं कृतम्। एवं तेषां तथा द्रीणिरन्तकः समपद्यत 11 90 11 अपेतशस्त्रसन्नाहान्सन्नद्धान्पाण्डुसुञ्जयान् । प्राहिणोन्सृत्युलोकाय द्रौणिः प्रहरतां वरः ततस्तच्छस्रवित्रस्ता उत्पतन्तो भयातुराः। निद्रान्धा नष्टसंज्ञाश्च तत्र तत्र निलिल्यरे जरुस्त∓भगृहीताश्च कर्**मलाभिहतौजसः** । विनदन्तो भूदां ऋसाः समासीदन्परस्परम् ॥ ८२ ॥ ततो रथं पुनद्रौंणिरास्थितो भीमनिःखनम्। घनुष्पाणिः शरेरन्यान्त्रेषयद्वै यमक्षयम 11 63 11 पुनक्त्पततश्चापि दुराद्यपि नरोत्तमान्। शर।न्स∓पततश्चान्यान्कालराव्यै न्यवेदयत् 11 82 11 तथैव स्यन्दनाग्रेण प्रमथन्स विधावति । द्वारवर्षेश्च विविधैरवर्षच्छात्रवांस्ततः 11 64 11 पुनश्च सुविचित्रेण शतचन्द्रेण चर्मणा। तेन चाकाठावर्णेन तथाऽचरत सोऽसिना 11 65 11

दी, कोई हाथी घोडोंकी मृटमें आकर मरगया, कोई कहने लगा, यह क्या है ? यह कीन हैं ? क्यों एक बारगी इतना हला हो रहा है ? डेरोंमें क्या होता है ? (७६—७९)

इस प्रकार अक्वत्थामा उन वीरोंके लिये कालरूप होगये शक्ष चलानेवालों में श्रेष्ठ अश्वत्थामाने कवच और शक्तर-हित अनेक बीरोंको उठते उठते मार डाला। तव निद्रासे च्याकुल अस्वत्था-माके शस्त्रेस पीडित अनेक क्षत्रिय इधर वधा हरसे भागने लगे । किसीका

न चला कोई भयसे व्याकुल होगया, इस प्रकार ये सब बीर हाहाकार करने लगे । तब अवबस्थामा फिर बीघ्रतास घोर शब्दवाले रथपर चढे और वाणोंसे सहस्रों वीरोंको मारने लगे और जिसकी अपनी ओर आते देखा उंसकी मार-हाला । (८०-८२)

कोई रथके पहियमें आकर मर गया और किसीको अक्त्रत्थामाने प्रकारके बाणोंसे मार डाला. फिर थोडी दर जाकर रथसे उतरे और आकाशके समान चमकते हुए खड्गसे फिर वीरी-

तथा स शिचिरं तेषां द्रौणिराहवदुर्भदः। व्यक्षोभयत राजेन्द्र महाहदमिव द्विपः 11 60 11 उत्पेतुस्तेन शब्देन योधा राजन्विचेतसः। निद्वात्तीश्च भयात्तीश्च व्यधावन्त ततस्ततः विखरं चुक्रुशुश्चान्ये बह्नबद्धं तथाऽवदन् । न च स्र प्रत्यपद्यन्त दास्त्राणि वसनानि च विसक्तकेशाश्चाप्यन्ये नाभ्यजानन्परस्परम् । उत्पतन्तोऽपतन् आन्ताः केचित्तत्राभ्रमंस्तदा॥ ९०॥ पुरीपमसुजन्केचित्केचिन्मुत्रं प्रसुसुबुः। बन्धनानि च राजेन्द्र संब्रिय तुरगा द्विपाः समं पर्यपतंश्चान्ये क्वर्वन्तो महदाकुलम् । तन्न केचिन्नरा भीता व्यलीयन्त महीतले 11 99 11 तथैव तान्निपतितानपिंपन्गजवाजिनः। तिसंस्तथा वर्त्तमाने रक्षांसि प्ररूपर्पभ 11 69 11 ह्वष्टानि व्यनदन्नुचैर्भुदा भरतसत्तम । स शब्दः पूरितो राजन्भूतसङ्घेर्भुदायुतैः 11 88 11 अपूरयदिशः सर्वा दिवं चातिमहान्खनः। तेषामार्त्तरवं श्रुत्वा वित्रस्ता गजवाजिनः 11 99 11

को मारने लगे । महावीर अञ्चत्थामाने उस डेरेको ऐसा व्याक्कल कर दिया जैसे मतवाला हाथी तालावको व्याक्क कर देता है। हे राजन् ! उस घोर शब्दसे सहस्रों योद्धा उठते थे, परन्तु मय और निद्रासे न्याकुल होकर इधर उधर दौडने लगते थे, कोई वृथा नकता था और कोई हाहाकार करता था। कोई शस्त्र और वस्न हूंढता था, किसीके बाल खुले थे, कोई इंघर उधर घूमता था और कोई थककर बैठ जाता था।(८३-९०)

हे राजन्! हाथी, घोडे अपने बन्धन छूडाकर भागते थे, कोई हाथी, घोडा मुत्र करता था और लीद करता था, कहीं योद्धा सबके मारे पृथ्वीमें सो जाते थे और हाथी घोडे उन्हें आकर मार डालते थे। (९१-९३)

े हे राजन् ! उसी समय अनेक राक्षस और भूत प्रसन्नतासे गर्जने लगे और उस शब्दसे आकाश पृतित होगया तब हाथी, घोडे इधर उधर दौडने लगे। उनके घुमनेसे घोर घुल उठी। तब महा-

मुक्ताः पर्यपतन् राजन्मृद्गन्तः शिविरे जनम् । तैस्तत्र परिधावद्भिश्वरणोदीरितं रजः अकरोच्छिबरे तेषां रजन्यां द्विगुणं तमः। तिसस्तिमासि सञ्जाते प्रमुद्धाः सर्वतो जनाः ॥ ९७॥ नाजानन्वितरा पुत्रान् भ्रातृत् भ्रातर एव च। गजो गजानतिकम्य निर्मेनुष्या ह्या ह्यान ॥ ९८ ॥ अताह्यंस्तथाऽभञ्जंस्तथाऽमृद्रंश्च भारत । ते भग्नाः प्रपतन्ति सा निवन्तश्च परस्परम् ॥ ९९ ॥ न्यपातयंस्तथा चान्यानंपातयित्वा तदाऽपिषत्। विचेतसः सनिद्राश्च तमसा चावृता नराः ॥ १००॥ ज्ञष्ठः खानेव तत्राथ कालेनैव प्रचोदिताः। त्यक्त्वा द्वाराणि च द्वास्थास्तथा गुल्मानि गौलिमकाः१०१॥ प्राद्भवन्त यथाशक्ति कान्दिशीका विचेतसः। विप्रमुख्य तेऽन्योन्यं नाजानन्त तथा विभो ॥ १०२॥ कोशन्तस्तात पुत्रेति दैवोपहतचेतसः। पलायन्तं दिशस्तेषां स्नानप्युतसृज्य बान्धवान् ॥१०२॥ गोत्रनामभिरन्योन्यमाकन्दन्त ततो जनाः। हाहाकारं च कुर्वाणाः पृथिव्यां शेरते परे तान्वदध्वा रणमध्येऽसी द्रोणपुत्रो न्यवारयत्। 11 804 11 तत्रापरे वध्यमाना सहस्हरचेत्सः

अन्धकार छागया, तब कोई मतुष्य अपने पिता और भाईको मी न पहि-चान सका, हाथी, हाथियोंकी और घोडे घोडोंकी ओर दौडे और परस्पर एक द्सेरको मारते थे, कहीं कोई हाथी, घोडा, मतुष्यको पीस देता था, कहीं निद्रा और अन्यकारसे व्याक्कुछ चीर पडे थे, कहीं बीर अपने ही वीरोंको मारते थे, कहीं द्वारपाल द्वारोंको छोडकर इघर उघर मागते थे, कहीं गुलममें सोते बीर गुलम छोडकर इघर उघर मागते थे, कहीं बीर मयसे व्याकुल होकर बाप और बेटोंको पुकारते थे, कहीं अपने बान्धवोंको छोडकर योद्धा मागते थे, कहीं अपना अपना गोत्रका नाम लेकर अपना परिचय देते थे, कोई हाहाकार करके पृथ्वीमें गिर जाता था, जो कोई लडनेको उठता था, उसको

199999999999999999999999 शिविरान्निष्पतन्ति स्म क्षात्रिया भयपीडिताः । तांस्तु निष्पतितांस्रस्तान् शिविराज्जीवितैपिणः ॥१०६॥ कृतवर्मा कृपश्चैव द्वारदेशे निजन्नतुः। विस्रस्तयन्त्रकवचान्युक्तकेशान्कृताञ्जलीन वेपमानान् क्षितौ भीतान्नैव कांश्चिद्मुच्यताम् । नामुच्यत तयोः कश्चित्रिष्कान्तः शिविराद्वहिः॥१०८॥ कृपश्चैव महाराज हार्दिक्यश्चैव दुर्मतिः। भूगश्चैवं चिकीर्षतौ द्रोणपुत्रस्य तौ प्रियम् 11 909 11 त्रिषु देशेषु ददतुः शिविरस्य हताशनम् । ततः प्रकाशे शिथिरे खड्गेन पितृनन्द्नः 11 280 11 अश्वत्थामा महाराज व्यचरत्कृतहस्तवत् ! कांश्चिदापततो वीरानपरांश्चैव धावतः 11 888 11 व्ययोजयत खड्गेन प्राणैऽर्द्धिजवरोत्तमः। कांश्चिचोघान्स खड्गेन मध्ये सन्छिच वीर्यवान्॥११२॥ अपातयदोणपुत्रः संरव्धस्तिलकाण्डवत्। निनदद्भिर्भृशायस्तैनेराश्वद्विरदोत्तमैः 11 883 11 पतितैरभवत्कीणीं मेदिनी भरतर्षभ । मानुषाणां सहस्रेषु हतेषु पतितेषु च 11 888 11 उदतिष्ठन्कवन्धानि वहुन्युत्थाय चापतन्।

अद्यत्थामा मार डालता था,को श्वत्रिय भयसे व्याकुल होकर अपना जीव लेकर भागता था; उसीको द्वारपर कुपाचार्य और कृतवर्मा मार डालते थे। (९४-१०६)

शस्त्रहित और कवचरहित हाथ जोडते हुये और कांपते हुये, क्षत्रियोंको मी उन्होंने मार डाला, कोई जीता वीर डेरोंके बाहर न निकल सका। अनन्तर दर्बदि कपाचार्य और कतवमाने और अच्वत्थामाकी प्रसन्नताके लिये डेरोंमें तीनों ओर आग लगाय दी। तब बीर अञ्चत्यामा खड्ग लेकर गीव्रतासे उस चान्दनेमें घूमने लगे। तब सहस्रों वीरोंको खड्गसे इस प्रकार मारडाला जैसे कोई मजुष्य तिलके वृक्ष उखाडकर फेंक देता है।(१०७-११३)

तव हाथी गर्जने लगे, मरे हुये मनुष्योंसे पृथ्वी मर गई, किसी वीरका हाथ कट गया, किसीका पैर कट गया,

सायुधान्साङ्गदान्वाहृन्विचकर्त्त शिरांसि च ॥ ११५॥ हस्तिहस्तोपमानुरून्हस्तान्पादांश्च भारत । प्रप्रचिछन्नान्पार्श्वचिछन्नान्शिरिक्छन्नांस्तथाऽपरान् ॥ ११६ ॥ स महात्माऽकरोद् द्रौणिः कांश्चिचापि पराङ्मुखान् । मध्यदेशे नरानन्यांश्चिच्छेदान्यांश्च कर्णतः ॥ ११७॥ अंसदेशे निहलान्यान्काये प्रावेशयच्छिर।। एवं विचरतस्तस्य निव्नतः सुबहुन्नरान् 11 288 11 तमसा रजनी घोरा बभौ दारुणदर्शना। किञ्चित्पाणैश्च पुरुपैईतैश्चान्यैः सहस्रदाः वहुना च गजाश्वेन भूरभूद्गीमदर्शना। यक्षरक्षः समाकीणें रथाश्वद्विपदारुणे 11 220 11 कुद्धेन द्रोणपुत्रेण सन्छन्नाः पापतन्सुवि । भ्रातृनन्ये पितृनन्ये पुत्रानन्ये विचुकुद्धाः ॥ १२१ ॥ केचिंदूचुर्न तत्कुद्धैर्धार्त्तराष्ट्रैः कृतं रणे। यत्कृतं नः प्रसुप्तानां रक्षोभिः क्रूरकर्मभिः ॥ १२२॥ असाभिध्याद्धि पाथीनामिदं वः कदनं कृतम्। न चासुरैर्न गंघवेंने यक्षेने च राक्षसैः ॥ १२३॥ इक्यों विजेतुं कौन्तेयो गोप्ता यस्य जनादीनः। ब्रह्मण्यः सत्यवाग्दान्तः सर्वभृतानुकम्पकः ॥ १२४ ॥

किसीकी पीठ फट गई, किसीका मुंह कट गया, इस प्रकार महात्मा अञ्च-त्थामाने सहस्रों वीरांको गिरा दिया, वह भयानक अन्धकार रात्रि और भी भयानक दीखने लगी, कहीं न गारने योग्य शरीरमें शस्त्र लग गया, वह रात्रि मागते हुये हाथी, घोडे और मनुष्योंसे मयानक दीखने लगी, और कोई माई-को, कोई बापको, और कोई वेटोंको

कोध मरे धृतराष्ट्रके प्रत्रोंने हमारे लिय जो नहीं किया था, सो आज सोते समय भयानक राक्षसोंने किया, हाय पांचों पाण्डवोंमेंसे एक भी यहां नहीं है इसी लिये राक्षसोंने हमारा नाग कर दिया. जिनकी रक्षा करनेवाले साक्षात श्रीकु-ब्ण हैं उन्हें राक्षस, गन्धर्व और यक्ष भी नहीं जीत सकते।(११४-१२३) पाण्डव ब्राह्मणोंके भक्त, सत्यवादी,

जितेन्द्रिय और सब मनुष्यीपर

पहणातव। [१ सीविक्पवे

क्षा अभ्यातव। व न्यस्तरास्त्रं कृताझिलम् ।

पावन्तं मुक्तकेशं वा हिन्त पार्थो घनख्रयः ॥ १२५ ॥

तिहंदं नः कृतं पोरं रक्षोभिः कृतकर्मभिः ।

हित लालप्यमानाः स्र शेरते वहवो जनाः ॥ १२६ ॥

स्तनतां च मनुष्याणामपरेपां च कृजताम् ।

ततो मुहूर्जात्याशाम्यत्स शब्दस्तुमुलो महान्॥१२७॥

शोणितव्यतिपिक्तायां चसुषायां च सूमिप !

तद्रजरसुमुलं पोरं क्षणेनान्तरधीयत ॥ १२८ ॥

स्वेष्टमानानुद्विग्रान्निरसोद्यान्तरधीयत ॥ १२८ ॥

स्वेष्टमानानुद्विग्रान्निरसोद्यान्ति ॥ १२८ ॥

स्वेष्टमानानुद्विग्रान्निरसोद्यान्त्रस्वार्णेयत् ॥ १२० ॥

अन्योग्यं संपरिष्वच्य श्रयानान्द्रवतोऽपरान् ।

संलीनान्युध्यमानांश्च सर्वान्द्रीणिरपोध्यत् ॥ १३० ॥

दक्षमाना हुताशेन चध्यमानाश्च तेन ते ।

परस्परं तदा योधानन्यच्यमसादनम् ॥ १३२ ॥

तस्या रजन्यास्त्ववेन पाण्डवानां महद्रलम् ।

गमयामास राजेन्द्र द्रीणियमनिवेशनम् ॥ १३२ ॥

करतेवाले हैं, जर्जुत सीते, मतवाले,

श्वस्तित, हाय जोवते, मागते और

खुलं हुये नाल्वालोंको नहीं मारते परन्तु

हन पापी राक्षसीन हमारा सर्वनाश कर

दिया, इस प्रकार कहते हुए अनेक वीर

प्रथीमें गिर गये, कोई घीरेसे थोलने

लगा और कोई तदकने लगा, तन

स्वणमानमें यह सन्द सीन्त्र, विगया,

और लिघरसे सीगनेके कारण पृथ्वीकी

पृल भी नैत गई, फिर अवस्थामाने

इल द्योग करते हुए वीरोंको देखा,

तव कोष करते हुन वीरोंको देखा,

तव कोष करते उनको भी इस प्रकार

वे सहाराज! जिस समय अक्तर्या
मोन पाण्डवोंके देशिं प्रवेश निया था,

उत्त सीव करते हुन वीरोंको देखा,

तव कोष करते हुन वीरांको देखा,

तव कोष करते हुन वीरोंको देखा,

तव कोष करते हुन विरोग विद्र वीरव

आसीन्नरगजाश्वानां रौद्री क्षयकरी भूबाम ॥ १३३ ॥ तत्रादृश्यन्त रक्षांसि पिशाचाश्च पृथविवधाः। खादन्तो नरमांसानि पिबन्तः शोणितानि चा१३४॥ करालाः पिङ्गलाश्चैव शैलदन्ता रजस्वलाः। जिंदला दीर्घशङ्खाश्च पत्रपादा महोद्राः ॥ १३५॥ पश्चादङ्गुलयो रूक्षा विरूपा भैरवखनाः। घंटाजालावसक्ताश्च नलिकण्ठा विभीषणाः॥ १३६॥ सपुत्रदाराः सक्राः सुदुर्दशाः सुनिर्धृणाः । विविधानि च रूपाणि तत्रादृदयन्त रक्षसाम्॥ १३७॥ पीत्वा च शोणितं हृष्टाः प्रावृत्यनगणशो परे। इदं परिमदं मेध्यमिदं स्वाद्विति चान्नवन् ॥ १३८ ॥ मेदोमजास्थिरक्तानां वसानां च भृशाशिताः। परे मांसानि खादन्तः ऋव्यादा मांसजीविनमा १३९॥ वसाश्चैवापरे पीत्वा पर्यधावन्विक्रक्षिकाः। नानावक्त्रास्तथा रौद्राः ऋव्यादाः पिश्चिताञ्चनाः॥१४०॥ अयुतानि च तश्रासन्प्रयुतान्युर्दुदानि च। रक्षसां घोररूपाणां महतां क्रकर्मणाम् सुदितानां वित्रशानां तिसन्महति वैशसे।

का नाश करनेवाली थी और मांस खा-नेवाले भूत और जन्तुओंको प्रसन्नता बढाती थी, तब अनेक प्रकारके राक्षस घूमने लगे, वे मनुष्योंके मांस खाने और रुघिर पीने लगे, कोई मयानक धूमले रक्जवाला किसीके बडे वडे दांत, कोई धूलमें भरा, किसीके वही वही जटा, किसीका वडा ग्रह, किसीका वडा पेट, किसीके पैरके पक्षे पीछेको थे, कोई घण्टा बजा रहा था, किसीका नीला-कण्ठ था, कोई महाभयानक था, ये सब

भयानक निर्देश अनेक रूपधारी राक्षस प्रत्र और स्त्रियोंके सहित वहां आए, फिर मनुष्योंका रुधिर पीकर नाचने लगे और कहने लगे कि यह रुधिर वडा स्वादमें श्रेष्ठ और पीने योग्य है, मांस खाने वाले जन्तु भी प्रसन्नता पूर्वक रुधिर पीने लगे. चरबी मांस और वसा खाने लगे । चरबी खानेसे राक्षसीं के पेट फूल गये, एक प्रकारके मुखवाले मयानक सहस्रों राक्षस मनुष्योंको घोर

????666666666666666 समेतानि वहुन्यासन् भूतानि च जनाधिप ॥ १४२ ॥ प्रत्युषकाले शिविशात्प्रतिगन्तुमियेष सः नृशोणितावसिक्तस्य द्रौणेरासीदसित्सरः ॥ १४३ ॥ पाणिना सह संश्विष्ट एकीभूत इव प्रभो। दुर्गमां पद्वीं गत्वा विरराज जनक्षये 11 888 11 युगान्ते सर्वभृतानि असा कृत्वेव पावकः। यथाप्रतिज्ञं तत्कर्भ कृत्वा द्रौणायनिः प्रभो ॥ १४५ ॥ दुर्गमां पदवीं गच्छन्पितुरासीद्गतज्वरः। यथैव संसप्तजने शिविरे प्राविशित्रिशि 11 888 11 तथैव हत्वा निःशब्दे निश्चकाम नरपेंभः। निष्कम्य शिविरात्तसात्ताभ्यां सङ्गम्य वीर्यवात् ॥ १४७ ॥ आचल्यौ कर्म तत्सर्व हृष्टः संहर्षयन्विभो । तावधाचरुयतुस्तस्मै प्रियं प्रियकरौ तदा 11 288 11 पाश्चालान्सुञ्जयांश्चैव विनिकृत्तान्सहस्रदाः। पीला चोबैरदकोशंस्तथैवास्पोटयंस्तला<u>त</u> एवंविधा हि सा राज्ञिः सोमकानां जनक्षये।

हराते थे, उस घोर युद्धमें मांस खाकर और रुधिर पीकर बहुत हुये।(१३५—१४२)

तब अश्वत्थामाने देखा कि आकाश लाल होगया, उस समय अस्वत्थामाके खड्गकी मृठि रुधिरसे भीग गई थी और खद्ग हाथमें फंस गया था, मानो एक ही होगया था। तब अश्वत्थामाने भी डेरोंसे निकलनेकी इच्छा करी और उस घोर कर्मको करके प्रसन्नता पूर्वक ऐसे खडे हुए जैसे प्रलयकालमें आग्न। उन्होंने इस कर्मको अपनी प्रतिज्ञानुसार ही समाप्त किया, फिर अपने पिताके मर-

नेका शोक भी छोड दिया। (१४३-१४६)

पुरुषसिंह अस्वत्थामा सोते शब्द रहित डेरोंमें घुसे थे और सबको मार-कर शब्दरहित डेरोंमेंसे निकले. डेरोंसे वाहर आकर कृपाचार्य और कृतवर्गासे मिले और प्रसन्न होकर उनसे सब समाचार कहा और वह भी सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे, कि अच्छा हुआ फिर ताली बजाने लगे। हे महाराज! इस प्रकार यह भयानक रात्री सोमकोंके लिये आई थी, उसमें सोते हुए उन्मत्त सहस्रों शोमकाँका नाश

प्रसुप्तानां प्रमत्तानामासीत्स्रभृशदारुणा 11 840 11 असंशयं हि कालस्य पर्यायो दुरतिक्रमः। ताहशा निहता यत्र कृत्वाऽसाकं जनक्षयम्॥ १५१॥ धृतराष्ट्र उवाच-प्रागेव सुमहत्कर्भ द्रौणिरेतन्महारथः। नाकरोदीहर्यं कस्मान्मत्युत्रविजये धृतः 11 842 11 अथ कसाद्धते क्षुद्रं कर्मेंद्रं कृतवानसी। द्रोणपुत्रो महात्मा स तन्मे शंक्षितुमहीस ॥ १५३ ॥ सञ्जय उवाच— तेषां नृनं भयात्रासौ कृतवान्क्ररुनन्दन । असान्निध्याद्धि पार्थानां केशवस्य च धीमतः ॥१५४॥ सात्यकेश्वापि कमेंदं द्रोणपुत्रेण साधितम्। को हि तेषां समक्षं तान् इन्याद्षि महत्पति॥१५५॥ एतदीदृशकं वृत्तं राजनसूत्रजने विभो। ततो जनक्षयं कृत्वा पाण्डवानां महात्ययम्॥ १५६ ॥ दिष्ट्या दिष्ट्यैव चान्योन्यं समेलोचुर्महारथाः। पर्यष्वजत्ततो द्रौणिस्ताभ्यां सम्प्रति नन्दितः ॥१५७॥ इदं हषीतु सुमहदाददे वाक्यमुत्तमम्। पाञ्चाला निहताः सर्वे द्रौपदेयाश्च सर्वेशः ॥ १५८ ॥

सेनाका नाश किया था और यही आज इस प्रकार मारे गये, कालकी गतिको कोई नहीं जान सक्ता, यह बढी ही कठिन है। (१४६-१५१)

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय ! महारथ अक्वत्थामाके यह इच्छा तो थी, कि हमारे पुत्रकी विजय होय, तब उन्होंने पहिले यह कर्म क्यों नहीं किया था? दुर्योधनके मरनेपर महात्मा द्रोणपुत्रने ऐसा क्रकर्म क्यों किया सो तुम हमस कहो १ (१५२-१५३)

सञ्जय बोले. हे क्रुक्कलश्रेष्ट्र !

ण्डवोंके और कृष्णके मयसे अश्वत्था-माने ऐसा नहीं किया था, आज वे पाण्डव, श्रीकृष्ण और सात्यकी सेनामें नहीं थे, इसही लिये अक्वत्थामाने इनको मार डाला । यदि वे लोग होते तो साक्षात् इन्द्र भी उन लोगोंको नहीं सार् सक्ता था। (१५४-१५५)

हे महाराज ! इस प्रकार यह सोती हुई पाण्डव सेनाका नाश हुआ, तब तीनों महारथ कहने लगे कि बहुत अच्छा हुआ, तब अश्वत्थामा अत्यन्त सोमका मत्स्यशेषाश्च सर्वे विनिहता मया। इदानीं कृतकृत्याः सम याम तत्रैव मा चिरम्। यदि जीवति नो राजा तस्मै शंसामहे वयम्॥ १५९॥[४७५]

क्षान्य स्थापर चढक सीमिक विकास कर्म ने विका इति श्रीमहामारते० वैयासिक्यां सोसिके पर्वणि रात्रियुद्धे पाञ्चाळादिवघेऽष्टमोऽध्याय:॥ ८ ॥ सञ्जय उवाच— ते हत्वा सर्वेपाञ्चालान्द्रीपदेयांश्च सर्वेशः । आगच्छन्सहितास्तत्र यत्र दुर्योघनो हतः गत्वा चैनमपद्यन्त किश्चित्राणं जनाधिपम् । ततो रथेभ्या प्रस्कन्च परिवह्नस्तवात्मजम् तं भग्नसक्थं राजेन्द्र कुच्छ्पाणमचेतसम्। वमन्तं रुधिरं वक्त्रादपश्यन्वसुधातेल वृतं समन्ताद्वहुभिः श्वापदैघौरदर्शनैः। शालावृक्षगणैश्चैव भक्षायिष्यद्भिरन्तिकात् निवारयन्तं कुछात्तान् श्वापदांश्च चिखादिपृन्। विचेष्टमानं मह्यां च सुभृशं गाढवेदनम् तं शयानं तथा दृष्टा भूमौ सुरुधिरोक्षितम्। हतशिष्टास्त्रयो वीराः शोकार्त्ताः पर्यवारयत् अश्वत्थामा कृपश्चेव कृतवर्मा च सात्वतः। तैस्त्रिभिः शोणितादिग्धैर्निःश्वसद्भिन्तर्थैः

द्रौपदीके पुत्र, सोमक और वचे हुये मत्स्यवंशी क्षत्रिय मारे गये, अब हम लोग क्रवकृत्य होगए, अब राजाके पास चलना चाहिये। कदाचित् वे जीते होयं, तो उनसे यह सब समाचार क-

> सौदितकपर्वमें आठ अध्याय समाप्त । सीप्तिक पर्वमें नौ अध्याय ।

सञ्जय बोले, हे राजन ! ये तीनों वीर पाञ्चाल और द्रौपदीके पुत्रोंको मारकर रथोंपर चढकर वहां पहुंचे.

जहां राजा दुर्योधन पडे थे, उन्होंने जाकर देखा कि महाशज मरा ही चा-हते हैं। तब वे सब रथोंसे उतरे और राजाके पास गये, उस समय राजा तडफ रहे थे, उनके मृहसे रुधिर बहुता था. चारों ओर अनेक स्वार और मेडिये आदि मांस खानेवाले जनतु खडे थे. और पीडासे व्याकुल राजा दुर्योघन कठि नतासे उनको हटा रहे थे, तब ये तीनों वीर रुघिर भींगे राजाके पास गये और शोकसे न्याकल होकर खडे होगए।१.७ कृप उवाच---

39366666666666666666666666 शुशुभे स वृतो राजा वेदी त्रिभिरिवाग्निभिः। ते तं शयानं सम्प्रेक्ष्य राजानमतथोचितम् अविषद्येन दुःखेन ततस्ते इरुद्रस्रयः। ततस्तु रुधिरं इस्तैर्भुखान्निर्भुज्य तस्य हि। रणे राज्ञः दायानस्य कुपणं पर्यदेवयन् न दैवस्यातिभारोऽस्ति यदयं रुधिरोक्षितः। एकादशचम्भर्ता होते दुर्योधना हतः पइय चामीकराभस्य चामीकरविभूषिताम् । गदां गदाप्रियस्येमां समीपे पतितां सुन्नि इयमेनं गदा द्वारं न जहानि रणे रणे। खर्गायापि व्रजन्तं हि न जहाति यशस्त्रिनम् ॥ १२ ॥ पद्यमां सह वीरेण जाम्बूनद्विभृषिताम् । श्रायानां शयने हम्पे भार्या प्रीतिमतीमिव ॥ १३॥ योऽयं मुर्थाभिषिक्तानामग्रे जातः परन्तपः। स हतो ग्रसते पांसुन्पइय कालस्य पर्ययम् ॥ १४ ॥ येनाजी निहता भूमावशेरत हतद्विषः।

उस समय इन तीनों रुधिर भीगे बीरोंके बीचमें राजाकी ऐसी शोमा दीखती थी, जैसे तीन अग्नियोंके बीचमें प्रधान अग्नि की। महाराजको अनुचित रीतिसे पडे देख तीनों बीर सांस लेकर रोने लगे । तब कृपाचार्य उनके पास गये और उनके मुखका रुधिर अपने हाथसे पोछकर रोकर कहने लगे। प्रार-व्य बहुत बडी बस्तु है देखो ग्यारह अक्षीहिणीके खामी राजा दुयोंघन आज पृथ्वीमें मुर्च्छित होकर स्रोते हैं; देखो सोनेके समान रङ्गवाले गदाके प्यारे महाराजकी सोनेसे भूषित गदा पृथ्वीमें

पड़ी है, यह गदा इस महात्मा यशस्वी वीरको किसी युद्धमें नहीं छोडती; अब खर्ग जाते समय भी इनको नहीं छोड-ती। (८-१२)

देखो यह सोनेके भूषणवाली गदा इन महात्मा वीरके सङ्ग प्यारी स्त्रीके समान सोती है। हाय ! यही शत्रुना-शन महाराज पहिले राजोंके आगे चलते थे, आज पृथ्वीमें पडे हुये घूल खाते हैं । समय बडा कठिन है । हाय ! जिस कुरुराजके हाथसे मारे हुए सहस्रों शञ्च पृथ्वीमें सोते थे, वही ये आज शत्रुओं-

स भूमी निहतः शेते कुरुराजः परैरयम् 11 84 11 भयान्नमन्ति राजानो यस्य सा शतसङ्घराः। स वीरशयने शेते ऋव्याद्गिः परिवारितः 11 85 11 उपासत द्विजाः पूर्वमर्थहेतोर्थमीश्वरम् । उपासते च तं ह्यच कव्यादा मांसहेतवः 11 80 11 सञ्जय दवाच- तं शयानं कुरुश्रेष्टं ततो भरतसत्तम । अश्वत्थामा समालोक्य करुणं पर्यदेवयत् आहुस्त्वां राजशार्द्छ सुख्यं सर्वधनुष्मताम्। घन्।ध्यक्षोपमं युद्धे शिष्यं सङ्कर्पणस्य च 119911 कर्षं विवरमद्राक्षीद्शीमसेनस्तवानय। वलिनं कृतिनं नित्यं स च पापात्मवात्रृप 11 90 11 कालो नृनं महाराज लोकेऽसिन्यलवत्तरः। पद्यामी निहतं त्वां च भीमसेनेन संयुग 11 38 11 कर्षं त्वां सर्वेघर्मज्ञं क्षुद्रः पापो वृकोदरः । निकुलाहतवान्मन्दो नृनं कालो दुरलयः ॥ २२ ॥ घर्मयुद्धे हाधर्मेण समाह्यौजसा सृधे। गदया भीमसेनेन निभंग्ने सक्थिनी तव 11 55 11 अघर्मेण हतस्याजौ मृद्यमानं पदा शिरः।

THE CONTROL OF THE C निनको देखते है। सेकडों राजा डरसे नीचे हो जाते थे, वही महाराज आज मांस खानेवाले जन्तवींके वीचमें वीरके योग्य शब्यापर सो रहे हैं, जिन महारा-जके पास हर समय सहस्रों बाह्यण घन के लिये बैठे रहते थे, इन्हींके पास आज मांस खानेके लिये स्यार खडे हैं। (१३-१७)

सञ्जय बोले, कुरुकुलश्रेष्ठ दुर्योधनको इस प्रकार पृथ्वीमें पडे देख अञ्चरधामा हे राजशार्र्ल आपको सब जगत्के क्षत्रिय, धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ कहा करते घे, आप क्रवेरके समान योद्धा साक्षात वलरामके शिष्य हैं । हे पापरहित ! मीमसेनने अन्तर पाकर आपको कैसे मारहाला ? (१८-२०)

हे महाराज! महापराऋमी और अत्यन्त चतुर आपको पापी भीमसेनके हाथसे मरा हुआ हम देखते हैं, समयकी गति बहुत ही कठिन, पापी, क्षुद्र, मूर्ख

य उपेक्षितवान् क्षुद्रं धिक्कृष्णं धिग्युधिष्ठिरम् ॥२४॥ युद्धेष्वपवदिष्यन्ति योधा नृनं वृकोद्धरम् । यावत्स्थास्यन्ति भूतानि निकृत्याद्यासि पातितः॥२५॥ नतु रामोऽब्रवीद्राजंस्त्वां सदा यदुनन्द्नः। दुर्योधनसमो नास्ति गद्या इति वीर्यवान 11 75 11 श्वाधते त्वां हि वार्ष्णयो राजन्संसत्सु भारत । स शिष्यो मम कौरव्यो गदायुद्ध इति प्रभो॥ २७॥ यां गतिं क्षत्रियस्याहुः प्रशस्तां परमर्षेयः। हतस्याभिमुखस्याजौ प्राप्तस्त्वमसि तां गतिम्॥ २८॥ दुर्योधन न शोचामि त्वामहं पुरुषर्भ । हतपुत्री तु शोचामि गान्धारीं पितरं च ते भिश्चकौ विचरिष्येते शोचंतौ पृथिवीमिमाम्। धिगस्तु कृष्णं वाष्णेंयमर्जुनं चापि दुर्मतिम् ॥ ३० ॥ धर्मज्ञमानिनौयौ त्वां बध्यमानमुपेक्षताम् । पाण्डवाश्चापि ते सर्वे किं वक्ष्यन्ति नराधिप ॥ ३१॥

मारडाला । इससे हम जानते हैं, कि समयकी गति वडी किटन है, धर्मसे बुलाकर और धर्म युद्ध आरम्भ करके भीमसेनने आपकी जङ्घा तोड दी, इस-से अधिक अधर्म और क्या होगा ? जिसने अधर्मसे मरे हुये आपके शिरमें पैर रखते भीमसेनकी देखा उस शुद्र, कृष्ण और युधिष्ठिरको धिकार है, जब-तक पृथ्वीमें मनुष्य रहेंगे तब तक सब वीर भीमसेनकी अवश्य निन्दा करें-गे। (२०-२५)

हे महाराज ! यदुकुलश्रेष्ठ वीर बलराम सदा कहा करते थे, कि गदा युद्धमें दुर्योधनके समान कोई वीर नहीं है, बलराम सब सभाओंमें आ-पकी प्रशंसा किया करते थे, कि राजा दुर्योधन गदायुद्धमें हमारे शिष्य हैं, हे महाराज! महाम्रुनियोंने जो श्वत्रियोंके लिये उत्तम गति कही है, युद्धमें मरनेसे आपको नहीं गति प्राप्त हुई। (२६—२८)

हे पुरुषसिंह दुर्योधन ! हम आपका कुछ शोच नहीं करते परन्त हमें पुत्रर-हित गान्धारी, और आपके पिताहीका शोच है, वे दोनों चुढे शोकसे ज्याकुल होकर मिश्चकोंके समान पृथ्वीमें घुमेंगे, दुर्बुद्धी कृष्ण और अर्जुनको धिकार है, नो घमेंब्र अभिमान करनेपर भी आप-

क्यं दुर्योघनोऽसाभिहेत इसनपत्रपाः। घन्यस्त्वमसि गान्धारे यस्त्वमायोधने हतः ॥ ३२ ॥ प्रायशोऽभिमुखः शत्रुन्धर्मेण पुरुषर्षभ । हतपुत्रा हि गान्धारी निहतज्ञातिवान्धवा स ३३ ॥ प्रज्ञाचश्चश्च दुर्घर्षः कां गतिं प्रतिपत्स्यते। घिगस्तु कृतवर्माणं मां कृपं च महारथम् 11 58 11 ये वयं न गताः खर्गं त्वां पुरस्कृत्य पार्थिवम् । दातारं सर्वेकामानां रक्षितारं प्रजाहितम् 11 34 11 यद्वयं नानुगच्छाम त्वां धिगसान्नराधमान् । क्रुपस्य तव वीर्येण मम चैव पितुश्च मे 11 38 11 सभृत्यानां नरव्यात्र रत्नवन्ति गृहाणि च। तव प्रसादादसाभिः समित्रैः सहवान्धवैः अवाप्ताः कतवो सुख्या वहवो भृरिद्क्षिणाः। कुतश्चापीदशं पापाः प्रवर्त्तिष्यामहे वयम् 11 36 11 याद्दशेन पुरस्कृत्य त्वं गतः सर्वपार्धिवान् । वयमेव त्रयो राजन् गच्छन्तं परमां गतिम् ॥ ३९॥ यद्वै त्वां नातुगच्छामस्तेन घक्ष्यामहे वयम् । तत्खर्गहीना हीनाथीः सरंतः सुकृतस्य ते किं नाम तद्भवेत्कर्म येन त्वां न ब्रजाम वै।

की यह दशा देखते रहे निर्लंज पाण्डन नया यह कह सर्जेंगे, कि हमने दुर्योध-नको घर्मसे सारा ? (२९—३१)

हे गान्धारीपुत्र ! आपको धन्य है, जो शत्तुनोंके आगे धमेयुद्धमें मारे गये, परन्तु पुत्ररहित गान्धारी और अन्धे-राजाकी क्या गति होगी हमे यही शोक है, महारथ कृपाचार्य, कृतवर्मा, और हमे विकार है, जो आपके सङ्ग स्वर्गको न चले,आप हमें सब प्रकारका सुख देते थे, रक्षा करते थे, और प्रजाका कल्याण करते थे, सो हम आपके सङ्ग न चल सके इसलिये हम नीच मतुष्योंको धि-कार है, हमने, हमारे पिताने और कृपाचार्यने आपकी कृपासे रह मरे घर पाये, आपकी प्रसन्नतासे हम लोगोंने मित्र और बान्धवांके सहित दक्षिणाओं के सहित मारी मारी यह करी अब हम पापी इस जगत्में कैसे नियेंगे। अब हम इस जगत्में रहकर दरित होकर प्राचन १ | १० सेतिकक्षं।

प्राचन १ | १० सेतिकक्षं।

इ। सं नृनं कुरुष्ठेष्ठ चरिष्याम महीमिमाम् ॥ ४१ ॥ हीनानं नस्त्वया राजन्कृतः ज्ञान्तिः कुतः सुखम् । गत्वैव तु महाराज समेत्र व महारथान् ॥ ४२ ॥ यथाज्येष्ठं यथाश्रेष्ठं पुज्ञयेर्वचनान्मम । श्रम् ॥ ४४ ॥ हतं मयाच शंसेषा पृष्ठ्युन्नं नराविष । परिष्वजेषा राजानं चाल्हिकं सुमहारथम् ॥ ४४ ॥ सन्ध्यं सोमद्वनं च मृत्श्रिक्षसमेत च । तथा पूर्वगतानन्यान् कर्ने पार्थिवसन्तमम् ॥ ४४ ॥ असद्वाक्यात्परिष्वज्य संप्रच्छेस्त्वमनामयम् ॥४६॥ असद्वाक्यात्परिष्वज्य संप्रच्छेस्त्वमनामयम् ॥४६॥ असद्वाक्यात्परिष्वज्य संप्रच्छेस्त्वमनामयम् ॥४६॥ अश्र्यापना त्याप् कर्मे पार्थवसन्तनम् ॥ ४८ ॥ अश्र्यापन जीवित त्वं वाक्यं श्रोज्ञसुकं श्र्युः ॥ ४८ ॥ ते वैव ज्ञातरः पत्र वासुदेवोऽय साव्यक्तिः । अहं च कृतवर्मा च कृषः चारद्वतस्त्रथा ॥ ४८ ॥ ते वैव ज्ञातरः पत्र वासुदेवोऽय साव्यक्तिः । अहं च कृतवर्मा च कृषः चारद्वतस्त्रथा ॥ ४८ ॥ ते वैव ज्ञातरः पत्र वासुदेवोऽय साव्यक्तिः । अहं च कृतवर्मा च कृषः चारद्वतस्त्रथा ॥ ४८ ॥ त्रिण्ठकर कृष्ण्य हो ते त्रावे स्वासे पत्रा कहर किर उनके स्व वासे पेता कहर कर उक्त व्यक्ता हो तो कानको सुख देनवाठे, से स्व पत्रप्राते प्रमा वासे ते तो कानको सुख देनवाठे, से वचन सुत्रपारे में श्रेष्ठ गुरुवीको प्रमा करके कहना, कि मैने पृष्टगुः अक्षे मारदाजा । किर महारय राजा वाहितः, सिन्युराज जयद्रथ, सोमद्त्व
वाहितः, सिन्युराज जयद्रथ, सोमद्त्व
विद्यास्वर्वे विराद्यायार्थे विराद्यायार्थे । कृत्वमी और कृपवर्षि । (४९-४९)

और भूरिश्रवादि स्वर्गमें वैठे राजेंसि मिलकर क्र्यल प्रश्न करना। (४२–४६)

सञ्जय बीले, जांध टूटे मुर्विछत राजासे ऐसा कहकर किर उनके मुख-की और देखकर अञ्चत्थामा बोले, हे महाराज दुर्योधन! अभी आप जीते हो तो कानको सुख देनेवाले, मेरे वचन सुनिये, अब पाण्डवींकी सब सेनामें केवल सात मजुष्य शेष हैं और आपकी ओरसे हम तीन बचे हैं, पाण्ड-बोंकी ओर पांचों पाण्डव, छठे कृष्ण और सातर्वे सात्यकी, आपकी ओर मैं

द्रीपदेया हताः सर्वे धृष्टगुन्नस्य चात्मजाः। पाञ्चाला निहताः सर्वे मत्स्यशेषं च भारत कृते प्रतिकृतं पद्द्य हतपुत्रा हि पाण्डवाः । सौतिके शिविरं तेषां हतं सनरवाहनम् ॥ ५१ ॥ मया च पापकमोऽसौ धृष्टगुन्नो महीपते । प्रविद्य शिविरं रात्री पशुमारेण मारितः 11 42 11 दुर्योधनस्तु तां वाचं निशम्य मनसः प्रियाम् । प्रतिलभ्य पुनश्चेत इदं वचनमत्रवीत् ॥ ५३ ॥ न मेऽकरोत्तद्वाङ्गेयो न कर्णी न च ते पिता ! यत्त्वया क्रपभोजाभ्यां सहितेनाच मे कृतम् ॥ ५४ ॥ स च सेनापतिः क्षुद्रो इतः सार्धे शिखण्डिना । तेन मन्ये मचवता सममात्मानमय वै खस्ति प्राप्तत भद्रं वः खर्गे नः सङ्गमः पुनः। इस्रेवमुक्त्वा तृष्णीं स क्रुरुराजो महाभनाः ॥ ५६ ॥ प्राणानुपास्जद्वीरः सुहृदां दुःसमुत्स्जन् । अपाकामहिवं पुण्यां शरीरं क्षितिमाविशत 11 49 11

द्रौपदीके पांची पुत्र, धृष्टसुस्रके पुत्र पाञ्चाल और मत्स्यवंशी सब बचे हुए श्वशी मारे गये; मैंने आपके वैरका बद-ला ले लिया, पाण्डवोंका वंश नाश होगया। मैंने रातको हेरोंमें घुसकर बाहनों सहित सब वीरोंको मारडाला पृथ्वीनाथ ! मैंने डेरोंमें घुसकर पापी सोते हुये धृष्ट्यम्नको पश्चके समान मारा । (५०--५२)

राजा दुर्योधन अञ्चत्थ(माके प्यारे वचन सुनकर चैतन्य होकर बोले, जो कर्म भीष्मने, तुम्हारे पिता द्रोणाचार्यने र्थ और कृतवभीके सहित तुमने मेरे लिये किया, पापी क्षद्र पाण्डवींका सेनापति शिखण्डीके सहित मारा गयाः यह सुन कर में अपनेको इन्द्रके समान मानता हूं। आप छोगोंका करवा ण हो। अब इम फिर आप लोगोंसे खर्गमें मिलेंगे। (५३-५६)

हे राजन् ! ऐसा कहकर महावीर, महामनस्वी दुर्योधन ज्ञान्त होगये और भित्रोंका शोक वढा करके प्राण पवित्र स्वर्गको चला गया, और ऋरीर यहां पडा रहा। हे महाराज ! इस प्रकार आपके पुत्र दुर्योघन शहुओंसे पुद्ध कर्-

एवं ते निषनं यातः पुत्रो दुर्योषनो ऋप। अग्रे यात्वा रणे शूरः पश्चाद्विनिहतः परैः 11 96 11 तथैव ते परिष्वक्ताः परिष्वच्य च ते सूपम् । प्रनः प्रनः प्रेक्षमाणाः खकानारुरह रथान् 114911 इत्येवं द्रोणपुत्रस्य निशम्य करुणां गिरम्। प्रत्युषकाले शोकार्त्ताः प्राद्रवन्नगरं प्रति 11 80 11 एवमेप क्षयो वृत्तः कुरुपाण्डवसेनयोः। घोरो विशसनो रौद्रो राजन् दुर्मैत्रिते तव ॥ ६१ ॥ तव पुत्रे गते स्वर्गं शोकार्त्तस्य ममानघ । ऋषिदत्तं प्रनष्टं तहिब्यदर्शित्वमच वै ॥ ६२ ॥

वैशम्पायन उवाच-इति श्रुत्वा स रूपतिः पुत्रस्य निधनं तदा । निःश्वस्य दीर्घमुष्णं च ततश्चिन्तापरोऽभवत् ॥६३ ॥[५३८] इति श्रीमहामारते शतसाहरूयां संहितायां वेवासिक्यां सौष्तिके पर्वाण इयोधनप्राणसागे नवभोऽध्याय: ॥ ९ ॥

अधैषीकपर्व ।

वैशम्पायन उदाच-तस्यां राष्ट्रयां व्यतीतायां घृष्टसुन्नस्य सारथिः। शशंस धर्मराजाय सौतिके कदनं कृतम् 11 8 11 द्रौपदेया हता राजन्द्रपदस्यात्मजैः सह।

प्वं ते निषनं य
अग्ने यात्वा रणे
तथेव ते परिष्व
पुनः पुनः प्रेक्षम
इत्येवं द्रोणपुत्रसः
प्रतम्पुषकाले कोः
एवमेप क्षयो वृः
घोरो विश्वसमो
तव पुत्रे गते स्व
ऋषिदत्तं प्रनष्टं
वैश्वस्पायन उवाच-इति श्रुत्वा सः
निःश्वस्य दीर्घम्
इति श्रीमहामारते शतवार
द्वर्योधनगाणः
विश्वस्य दीर्घम्
इति श्रीमहामारते शतवार
द्वर्योधनगाणः
स्त उवाच- द्वर्याद्वरा हता व राजाका स्पर्ध करके रोते हुये अप अपने रथोंपर वैठे और पीछेको देख् द्वर्ये शोकसे व्याकुल होकर, नगरः
और चले। उसी समय सर्य भी उव होने लगा। (५६-६०)
दे महाराज! आपकी वुरी सम्मति राज! जब आपके पुत्र स्वर्गको च राज! जब आपके पुत्र स्वर्गको च राज! तव ग्रुसे भी व्यासदेवजीकी स्वरं दिव्य दृष्टि नष्ट होगई। श्रीवैः के मारे गये, ये तीनों वीर भी मरे हुए राजाका स्पर्ध करके रोते हुये अपने अपने रथोंपर बैठे और पीछेका देखते हुये शोकसे व्याकुल होकर, नगरकी ओर चले। उसी समय सर्थ भी उदय

हे महाराज ! आपकी बुरी सम्मतिसे यह क्रुक्कलका नाश हुआ। हे महा-राज ! जब आपके पुत्र स्वर्गको चले गये, तब मुझे भी न्यासदेवजीकी दी म्पायन ग्रुनि बोले, राजा भृतराष्ट्र इस प्रकार अपने प्रत्रका धरना सुनकर शोकसे व्याकुल होगये और चिन्ता करने लगे। (६१—६३) [५३८]

साध्तिकपर्वमें नौ अध्याय समास ।

सीप्तिकपर्वमें दस अध्याय। २ ऐपीकपर्व ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! जब रात्रि बीत गई तब घृष्ट्यम्नका सारथी धर्मराजके

रे स्वके ॥ २ ॥

तिक्का ॥ ३ ॥

तिक्का ॥ ३ ॥

तिका ॥ ४ ॥

तम् ॥ ४ ॥

ति ॥ ५ ॥

विष्ठरः ॥ प्रमत्ता निश्चि विश्वस्ताः स्वपन्तः शिविरे स्वके ॥२ ॥ कृतवर्मणा दृशंसेन गौतमेन कृपेण च । अश्वत्थाम्ना च पापेन हतं वः शिविरं निशि एतैर्नरगजाश्वानां प्रासद्यक्तिपरश्वधैः। सहस्राणि निक्रन्तद्विनिंश्योपं ते वलं कृतम् छिचमानस्य महतो वनस्येव परश्वीयः। शुखे सुमहान शन्दो वलस्य तव भारत अहमेकोऽवशिष्टस्त तसात्सैन्यान्महामते । मुक्तः कथं चिद्धर्मात्मन् व्यग्राच कृतवर्मणः तच्छ्रस्वा वाक्यमदिावं क्रुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः। पपात मद्यां दुर्धर्षः पुत्रशोकसमन्वितः पतन्तं तमतिकम्य परिजग्राह सात्यिकः। भीमसेनोऽर्जुनश्चेव माद्रीपुत्रौ च पाण्डवौ लब्धचेतास्तु कौन्तेयः ग्रोकविह्नलया गिरा । जित्वा शत्रून् जितः पश्चात्पर्यदेवयदार्त्तवत् दुर्विदा गतिरथीनामपि ये दिव्यचक्षुषः।

महाराज ! दुपदके पुत्रोंके सहित आपके पांचों पुत्र मारे गये, वे सुखसे विश्वास पूर्वक डेरोंमें सो रहे थे, उसी समय कृतवर्मा, पापी कृपाचार्य और पापी अञ्बत्थामाने सबको मारहाला। (१-३)

हे महाराज ! आपकी हाथी, घोडा और मनुष्योंसे भरी सेनामें केवल एक में ही बचा हूं, उन्होंने प्राप्त, शक्ति और परवन्त्रोंसे हमारी सेनाका नाश कर दिया, उस समय आपकी सेनामें ऐसा शब्द होता था, जैसे कुल्हाडीसे कटते हुए वनमें। हे धर्मात्मन्! मैं

आया हूं, उस सब सेनामेंसे केवल मैं ही एकला बचा हूं। (४-६)

सारथीके ऐसे वचन सुन महाप-राकमी महाराज युधिष्ठिर पुत्रशोकसे व्याकुल होकर पृथ्वीमें गिरपडे, तव उनको गिरते देख सात्यकी, कृष्ण, अर्जुन, नकुल और सहदेव दौडे और उन्हे पकड लिया, तब क्रन्तीपुत्र थोडे समयमें चैतन्य हो और शोकसे न्याकुल होकर ऐसे दीनवचन बोले। (७-८)

हमने पहले शत्रुओंको जीत लिया था, और अब फिर हार गये, दिन्य दृष्टिवाले महात्मा भी समय

प्रभाग प्रयोद्धान प्रमान वर्ष जिताः ॥ १० ॥
हत्वा म्रातृन्वपस्यांत्र पितृन्वुम्रान्सुहृद्गणात् ।
वन्युनमात्यान्पौनांत्र जित्वा सर्वान् जिता वयम्॥११॥
अन्यो चर्यसङ्गारास्त्र याऽन्योऽर्भदर्शनः ।
जयोऽपमजयाकारो जयस्तस्मात्पराजयः ॥ १२ ॥
पित्तत्वा तप्यते पश्चाद्दापन्न इव दुनितः ।
कर्य मन्येत विजयं ततो जिततरः परैः ॥ १३ ॥
येषामर्थाय पापं स्याद्विजयस्य सुद्धुद्वैः ।
निर्जितरममत्तिहिं विजिता जितनाक्षिनः ॥ १४ ॥
कर्णिनाठीकदंष्ट्रस्य ख्वात्तव्यनादिनः ॥ १४ ॥
कर्णिनाठीकदंष्ट्रस्य स्त्रामेण्यणाधिनः ।
ये व्यमुश्चन्त कर्णस्य प्रमादात्त इमे हताः ॥ १६ ॥
स्थान्वव्यन्ते स्त्रामिन्त्र रत्नाचितं वाहनवाजियुक्तम् ।
श्वान्यस्यवेगवेलं द्रोणाणवं ज्यातलनेनियोषम् ।
श्वान्यस्यवेगवेलं द्रोणाणवं ज्यातलनेनियोषम् ।
संग्रामचन्द्रोदयवेगवेलं द्रोप्तामम् संग्रामचन्द्रामच्याचेगवेलं द्रामचन्त्राम् संग्रामचन्द्रामचन्द्रामचन्त्रामचन्त्रामम् संग्रामचन्द्रामचन्द्रामचन्त्रामम् संग्रामचन्द्रामचन्त्राम् संग्रामचन्द्रामचन्त्रामम् संग्रामचन्द्रामचन्द्रामचन्द्रामचन्द्रामचन्द्रामचन्त्रामचन्द्रामचन

र्योंकी गतिको नहीं जान सक्ते, देखो कोई हारकर हारता है, और हम जीत-कर द्वार गये; भाई, पिता, चन्धु, मित्र, प्रत्र और पोर्तोंको भारकर भी हम लोग पीछे हार गये, अर्थींको विचारना और देखना भी अनर्थ ही है, हमारी यह विजय भी पराजयके समान होगई जिस विजयको पाकर दुई।दि राजाको शोच करना पहे, उसे बुद्धिमान् विजय क्यों कहेंगे, वह तो पराजयसे भी अधिक दु:खदायक है, जिन मित्रोंके लिये इम पाप और विजय करनेकी इच्छा करते

#39393939996666599996666999966669999666689999666689999 ये तेरुरवावचशस्त्रनौभिस्ते राजपुत्रा निहताः प्रमादात् ॥ १८॥ न हि प्रमादात्परमस्ति कश्चिद्रघो नराणामिह जीवलोके। प्रमत्तमर्था हि नरं समन्तात्त्यजन्खनर्थाश्च समाविशन्ति ॥ १९ ॥ ध्वजोत्तमाग्रोच्छ्नद्मकेतुं शरार्चिषं कोपमहासमीरम् । महाघनुर्ज्यातलनेमियोपं तनुत्रनानाविषशस्त्रहोमम् महाचम्कश्चदवाभिपत्रं महाहवे भीष्ममयाग्निदाहम्। ये सेहरात्तायुषतीक्ष्णवेगं ते राजपुत्रा निहताः प्रमादात् ॥ २१ ॥ न हि प्रमसेन नरेण शक्यं विद्या तपः श्रीविंपुलं यशो वा। पद्याप्रमादेन निहस्य शात्रून्सवीन्महेन्द्रं सुखमेशमानम् ॥ २२ ॥ इन्द्रोपमान्पार्थिव पुत्रपौत्रान्पद्याविद्येषेण हतान्प्रमादात्। तीर्त्वा ससुद्रं वणिजः समृद्धा मग्नाः क्रमचामिव हेलमानाः ॥२३॥ अमर्षितैयें निहताः शयाना निःसंशयं ते त्रिदिवं प्रपन्नाः। कृष्णां तु शोचामि कथं नु साध्वी शोकार्णंवं साऽच विशलभीता॥२४॥ भ्रानृंश्च पुत्रांश्च हतान्निशम्य पात्रालराजं पितरं च बृद्धम्। ध्रुवं विसंज्ञा पतिता एथिव्यां सा शोष्यते शोककृशाङ्गयष्टिः॥१५॥

राजपुत्र आज हमारी भूलसे मारे गए। (१५-१८)

देखो जगत्में भृतके समान और कोई बुरी बात नहीं है, भृते हुये मनुष्यके सब अभिन्नाय नष्ट हो जाते हैं और अनेक अन्धे उसको बेर तेते हैं। जिन्होंने ऊंची ध्वलारूपी, धुन्नी, बाण ब्वाला, क्रोध वायु, बनुष पहिए और तल शब्दरूपी शब्द और अनेक प्रकार के शक्त आहुतियुक्त मीष्मरूपी सेना में जलती हुई अगि को सहा था, वही राजपुत्र आज भृत्में मारे गये। प्रमच मनुष्य विद्या, तप, लक्ष्मी और यशको नहीं पा

सक्ता, देखो शश्चओंको मारकर इन्द्र, सुखसे राज करते हैं। (१९-२२)

देखो आज ये इन्द्रके समान पराक्र-भी राजपुत्र और राजोंके पोते भूलसे सामान्य मनुष्योंके समान इस प्रकार मारे गये, जैसे घनधान्य मरे विनये समुद्रको पार होकर छोटी नदीमें तरते हुए इन जांय, हमें यह निश्चय है, कि हमारे सब सम्बन्धी सोते हुथे मारे गये, अब हमें कुछ शोच नई है, वे सब निश्चय ही खर्गको चले गए। हमें केवल पतित्रता द्रीपदीहीका शोक ह, कि वह अ-पने भाई, पुत्र और बूढे पिताको मारा हु-आ सुन किस दशाको प्राप्त होगी? २३-२५ तच्छोकजं तुःस्वमपारयन्ती कथं सविष्यत्युचिता सुस्नानाम् ।
पुत्रक्षयभात्वचपपणुता प्रदक्षमानेन हुताशनेन ॥ २६ ॥
इस्त्रेवमार्तः परिदेवपन्स राजा कुरूणां नकुकं वभावे ।
गच्छानयेनामिह मन्द्रनाग्यां समातृपक्षामिति राजपुत्रीम् ॥२०॥
माद्रीसुतस्तरपरिग्रस्त वाक्षयं घर्मेण घर्मपतिमस्य राज्ञः ।
ययौ रथेनास्त्रयमाद्युदेव्याः पत्रास्त्रास्त्रय च घत्र दाराः ॥ २८ ॥
मन्द्राप्त माद्रीसुतमाजमीहः शोकार्दितस्तैः सहितः सुहृद्धः ।
रोक्ष्यमाणः प्रययौ सुतानामायोधनं मृत्रगणानुकीणम् ॥ २९ ॥
स तत्प्रविद्याशिवसुप्रकृपं दृद्धं पुत्रान्सुदृद्धः सर्व्याश्च ।
स तास्तु हृद्धा भृश्चभातिक्पो युधिष्ठरो धर्मभुतां वरिष्ठः ।
उदीः प्रचुक्रोश च कौरवान्य्या पपात चोव्याँ सगणो विसंज्ञः ॥३१॥५६९
हित श्रीमहाभात्वे चवव तीरिके पर्योग ऐपोक्षवर्येण बुधिष्ठरो धर्मभुतां वरिष्ठः ।
विश्वय ही वह शोकसे व्याकुरु होकर
प्रद्रीमें भिर पद्धेती । आज वह सुख
मोताने योग्य द्रौपदी इस शोकससहुद्धे पारकेसे वाववारी वेसे आगमं नस्त्रो होत्वार होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या होत्या होत्या होत्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्य होत्या होत्या हात्या होत्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या होत्या होत्या होत्या हात्या होत्या होत्या होत्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या होत्या होत्या होत्या हात्या होत्या होत्या होत्या होत्या हात्या होत्या हात्या होत्या होत्या

. Gebestes and a section of the sect

ග්වෙපව වෙපව පිරියිම පිරියිම

वैशम्पायन उवाच-स दृष्ट्वा निहतान्संख्ये पुत्रान्पौत्रान्सर्खास्तथा ।

महादुःखपरीतात्मा बभूव जनमेजय ततस्तस्य महान् शोकः प्रादुरासीन्महात्सनः। सारतः पुत्रपात्राणां सातृणां खजनस्य ह तमञ्जूपरिपूर्णाक्षं वेपमानमचेतसम्। सुहृदो भृशसंविग्नाः सांत्वयांचित्ररे तदा 11 3 11 ततस्तासिन् क्षणे कल्पो रथेनादित्यवर्चसा । नकुलः कृष्णया सार्धेमुपायात्परमार्त्तया 11811 उपप्रव्यं गता सा तु श्रुत्वा सुमहद्वियम्। तदा विनाशं सर्वेषां पुत्राणां व्यथिताऽभवत् ॥ ५॥ कम्पमानेव कदली वातेनाभिसमीरिता । कृष्णा राजानमासाच शोकार्त्तीन्यपतद्भवि 11 8 11 वभूव वद्नं तस्याः सहसा शोककर्षितम्। फुलुपद्मपलाशाक्ष्यास्तमोग्रस्त इवांशुमान् 11 9 11 ततस्तां पतितां हष्ट्रा संरम्भी सत्यविक्रमः। बाहुभ्यां परिजग्राह सम्रुत्पल वृकोद्रः 11011

सौदितक पर्वमें ग्यारह अध्याय ।

श्रीवैश्वस्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! अपने बेटे, पोते और सम्ब न्धियोंको मरा हुआ देखकर महाराज अत्यन्त श्रोकसे व्याकुल होगये; जब महात्मा युधिष्ठिर बेटे, पोते, माई और सम्बन्धियोंके श्रोकसे व्याकुल होकर आखोंमें आंस मरकर कांपने लगे तब सब रोते हुये मित्र उन्हें समझाने लगे। (१—३)

उसी समय प्रातःकालके सूर्यके समान चमकते हुये, स्थपर बैठे हुए रोती हुई द्रीपदीके सहित नकुल आप हुंचे। द्रौपदी पहिले ही उपप्रव (छावनी)
को चली गई थीं, वहीं अपने पुत्रों के
मरनेका समाचार सुना और व्याकुल
होगई, द्रौपदी महाराजके पास आकर
और शोकसे व्याकुल होकर इस प्रकार
पृथ्वीमें गिर पड़ी जैसे केलेका बृक्ष
आंधीसे ट्रटकर गिर पड़ता है, उस
समय फूले हुये कमलके समान नेत्रवाली द्रौपदीका मुख शोकसे व्याकुल
होनेके कारण ऐसा होगया जैसा राहुके
प्रहण करनेसे चनद्रमा। (४-७)

द्रीपदीको पृथ्वीमें पडी देख महाप-राक्रमी भीमसेनने अपने हाथोंमें उठा

विनेन भामिनी।

भारतमत्रवीत् ॥ ९॥

मारतमत्रवीत् ॥ ९॥

मारतमत्रवीत् ॥ १०॥

य यमाय वै ॥ १०॥

मातङ्गगमिनीम्।

द्रं न स्मरिष्यसि॥ ११॥

त्र्याञ्गिपातितान्।

चं न स्मरिष्यसि॥ १२॥

न इवाश्रयम् ॥ १३॥

त्वधा रणे।

कम्य जीवितम् ॥ १४॥

त पाण्डवाः।

पस्य कर्मणः ॥ १५॥

वं प्रत्युपाविद्यात्।

अद्यत्थामाने मेरे पुत्रोंको सोते

मारहाला शोकसे व्याकुल होगई

शोक मेरे श्रीरको इस प्रकार तपा
, जैसे पास रक्खी हुई आग्न वस्तु
(८-१३)

राजन् । यदि आप अपने पराक्र
उस पापी अद्यत्थामाको युद्धमें

मरियेगा तो में अन्न नहीं खाऊंगी

यहीं मर जाऊंगी। हे पाण्डवें।

मी सब हमारी इस प्रतिज्ञाको सुनो,

अद्यत्थामा इस पापके फलको

पावेगा, तो में यहीं मर जाऊंगी।

कहकर यशिखनी द्रौपदी धर्मराज

ष्ठिरके पास वैठ गई;धर्मीत्मा राज-सा समाश्वासिता तेन भीमसेनेन भामिनी। रुद्ती पाण्डवं कृष्णा सा हि भारतमत्रवीत् ॥ ९॥ दिष्ट्या राजन्नवाप्येमामखिलां भोक्ष्यसे महीस । आत्मजान क्षत्रधर्मेण संप्रदाय यमाय वै दिष्ट्या त्वं क्रशली पार्थ मत्तमातङ्गामिनीम्। अवाप्य पृथिवीं कृत्लां सौभद्रं न सारिष्यसि ॥ ११ ॥ आत्मजान् क्षत्रधर्मेण श्रुत्वा श्रूरात्रिपातितान् । उपष्ठव्ये मया सार्धं दिष्ट्या त्वं न सारिष्यासि॥ १२॥ प्रसुप्तानां वधं श्रुत्वा द्रौणिना पापकर्मणा। शोकस्तपति मां पार्थ हुताशन इवाश्रयम् तस्य पापकृतो द्रौणेने चेदच त्वधा रणे। ह्वियते सानुबन्धस्य युधि विक्रम्य जीवितम् ॥ १४ ॥ इहैव प्रायमासिष्ये तन्नियोघत पाण्डवाः। न चेत्फलमवामोति द्रौणिः पापस्य कर्मणः एवसुकत्वा ततः कृष्णा पाण्डवं प्रत्युपाविदात्।

सा १
कदतं
दिष्टन
आत्र
दिष्टन
आत्र
दिष्टन
आत्र
देष्टन
चेत
एवसुन
लिया और समझाने ल
हुई द्रौपदी महाराजसे नो
नाथ! आज प्रार=घहीसे
पृथ्वीके राजा हुए; अव
मेट देकर आप कुशलसे
इस सन पृथ्वीका राज्य प
मतवाले हाथीके समान
अभिमन्युका कभी सरण
एगा ना? कहिए खन्नियाँने
वाले वीर पुत्रोंकी मृत्यु
मेरे सङ्ग विहार तो की।
और कभी उन पुत्रोंका ल लिया और समझाने लगे, तव रोती हुई द्वीपदी महाराजसे बोली, हे पृथ्वी नाथ । आज प्रारब्धहीसे आप इस सव पृथ्वीके राजा हुए; अव क्षत्रियोंके धर्म के पालनेवाले अपने बेटोंको यमराजकी मेंट देकर आप कुशलसे तो हैं १ कहिये इस सब पृथ्वीका राज्य पाकर अब आप मतत्राले हाथीके समान चलनेवाले अभिमन्युका कभी सारण तो न कीजि-एगा ना? कहिए क्षत्रियोंके घर्ममें रहने-वाले वीर पुत्रोंकी मृत्यु सुनकर आप मेरे सङ्ग विहार तो कीजियेगा ना ? और कभी उन प्रत्रोंका तो सारण नहीं कीजिएगा ? मैं यह बात सुन कर, कि

पापी अक्वत्थामाने मेरे पुत्रोंको सोते हुए मारडाला शोकसे व्याक्कल होगई हूं, ज्ञोक मेरे श्ररीरको इस प्रकार तपा-ता है, जैसे पास रक्खी हुई अग्नि वस्तु-को। (८-१३)

हे राजन् ! यदि आप अपने पराक्र-मसे उस पापी अञ्चत्थामाको युद्धमें नहीं मरियेगा तो मैं अन्न नहीं खाऊंगी और यहीं मर जाऊंगी। हे पाण्डवीं! तम भी सब हमारी इस प्रातिज्ञाको सुनो, यदि अञ्चत्थामा इस पापके फलको नहीं पावेगा, तो मैं यहीं मर जाऊंगी। ऐसा कहकर यशस्त्रिनी द्रौपदी धर्मराज

युधिष्ठिरं याज्ञसेनी धर्मराजं यशस्विनी 11 88 11 दृष्ट्वोपविष्टां राजर्षिः पाण्डवो महिर्षी प्रियाम् । प्रत्युवाच स धमातमा द्रौपदीं चारुद्दीनाम् ॥ १७॥ धर्में धर्मेण धर्मेज्ञे प्राप्तास्ते निधनं शुभे । पुत्रास्ते आतरश्चैव तात्र शोचितुमहासि स कल्याणि चनं दुर्गं दूरं द्रौणिरितो गतः तस्य त्वं पातनं संख्ये कथं ज्ञास्यासि शोभने ॥ १९॥ द्रोणपुत्रस्य सहजो मणिः शिरसि मे श्रृतः। निइत्य संख्ये तं पापं पर्श्ययं मणिमाहृतम् ॥ २०॥ राजन शिरसि ते कृत्वा जीवेयमिति मे मतिः। इत्युक्त्वा पाण्डवं कृष्णा राजानं चारुद्दीना॥ २१ ॥ भीमसेनमथागत्य परमं वाक्यमझवीत्। त्रातुमहीस मां भीम क्षत्रधर्ममनुस्मरन् 11 22 11 जहि तं पापकर्माणं शम्बरं मघवानिव। न हि ते विक्रमे तुल्यः पुमानस्तीह कश्चन ॥ २३ ॥ श्रुतं तत्सर्वेलोकेषु परमध्यसने यथा। द्वीपोऽभूस्त्वं हि पार्थानां नगरे वारणावते ॥ २४ ॥

प्रधिष्ठिरं
ह्रप्नोपविष्
प्रस्युवान
घम्यं घं
प्रशास्ते ।
स्राप्युवान
घम्यं घं
प्रशास्ते ।
स कल्या
तस्य त्वं
द्रौपखुवान
द्रौपखुवान
हित्तं त्रस्युवत्व
श्रीमस्नेन
श्रातुमहें
जिह्न ते
स्रातं तर्स
द्रीपोऽभ्
श्री युधिष्ठिरने अपनी प्या
को अतम वैठे देख उस ह
वचन कहे, हे धर्म जाननेवा
तुम श्रित्रगोंके धर्मका सरण
पुत्र और भाई धर्मयुद्धसे
इसिलिये कुछ श्रोक मत कर्न
प्री, हे सुन्दरी ! अञ्चरथा
किसी वन पर्वतमें छिप व
द्रीपदी वोली, हे महा
स्रा है कि अञ्चरथामाके
स्र है भाण है, उस पापीको
स्र है भाण है, उस पापीको ऋषी बुधिष्ठिरने अपनी प्यारी पटरानी-को व्रतमें बैठे देख उस सुन्द्रीसे ऐसे वचन कहे, हे धर्म जाननेवाली सुन्दरी! तुम क्षत्रियोंके धर्मका सारण करो.तम्हारे पुत्र और साई धर्मग्रुद्धसे मारे गये हैं, इसलिये कुछ शोक मत करो, हे कल्या-णी, हे सुन्दरी ! अञ्चत्थामा इस समय किसी वन पर्वतमें छिप रहे हैं, उनको हम कैसे मार सकेंगे।(१४-१९)

द्रौपदी बोली, हे महाराज ! मैंने सुना है कि अञ्चल्थामाके शिर्में उत्पन्न छीन लेनी चाहिये। मैं उसको आपके शिरमें खापन करके जिऊंगी, यही मेरी इच्छा है, इसलिये आप ऐसा ही की-जिये। ऐसा कहकर द्वौपदी मीमसेनके पास गई और कहने लगी, हे भीम ! आप क्षत्रियोंके धर्मका सरण करके हमें इस दुःखसे बचाइये, उस पापी अध्व-त्थामाको इस प्रकार जीतिये, जैसे इन्द्र-ने शम्बरको जीता था, जगत्में तुम्हारे समान कोई मनुष्य बंखवान नहीं है, उस लाक्षामवनमें आपने मरते हुए 9999999999999999999999999999999999999 हिडिम्यदर्शने चैव तथा त्वमभवो गतिः। तथा विराटनगरे कीचकेन भूशार्दिताम 11 24 11 मामप्युद्धतवान्कृच्छ्रात्पौलोमीं मघंवानिव । यथैतान्यकृथाः पार्थं महाकर्माणि वै पुरा 11 25 11 तथा द्रौणिममित्रप्तं विनिहस सुखी भव। तस्या बहुविधं दुःखं निशम्य परिदेवितम् 11 29 11 न चामर्षत कौन्तेयो भीमसेनो महाबलः। स काञ्चनविचित्राङ्गमारुरोह महारथम् 11 36 11 आदाय रुचिरं चित्रं समार्गणग्रणं धतः। नकुलं सार्थि कृत्वा द्रोणपुत्रवधे घृतः. 11 99 11 विस्फार्य सदारं चापं तूर्णमश्वानचोदयत्। ते हयाः पुरुषच्याघ चोदिता वातरंहसः 11 30 11 वेगेन त्वरिता जग्मुईरयः जीव्रगाविनां। शिविरात्खाद्गहीत्वा स र्थस्य पद्मच्युता ॥ ३१ ॥ [६००]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूवां संहितायां दैयासिक्यां सौक्षिकपर्वान्तर्गत ऐपीके पर्वणी

द्रौणिवधार्यं भीमसेनगमने एकादशोऽध्याय: ॥ ११ ॥

वैशम्पायनउवाच-तिसन्प्रयाते दुर्धेषे यद्नामृषभस्ततः।

क्रन्तीपुत्र भीमसेन क्षमा न कर सके, और सोनेके स्थपर बैठ, घनुष पर रोदा चढाकर बाण चढाने लगे। उसी समय नक्रल अपने स्थानसे उठकर भीमसेनका रथ हांकने लगे। तब भीमसेनने अपने धनुषपर टङ्कार दिया और नकुलने अपने घोडोंको बायु के समान बेगसे हांका, तब नकुलके हांकनेसे वे शीघ्र चलने वाले घोडे अपने डेरोंसे निकलकर चले। (२७—३१) [६००]

अब्रवीत्पुण्डरीकाक्षः क्रुन्तीपुत्रं युधिष्ठिरम् एव पाण्डव ते भ्राना पुत्रशोकपरायणः। जिघांसद्रौंणिमाजन्दे एक एवाभिषावति भीत्रः प्रियस्ते सर्वेभ्यो स्नातृभ्यो भरतर्षभ । तं क्षुच्छ्गतमद्य त्वं कसान्नाभ्यूपपद्यसे यत्तदाऽऽचष्ट पुत्राय द्रोणः परपुरञ्जयः। अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम दहेत पृथिवीमपि ्तन्महात्मा महाभागः केतुः सर्वधनुष्मताम् । प्रखपादयदाचार्यः प्रीयमाणो धनञ्जयम् तं प्रत्रोप्येक एवैनमन्वयाचद्मर्पणः। ततः प्रोवाच पुत्राय नातिहृष्टमना इव विदितं चापलं स्वासीदात्मजस्य दुरात्मनः। सर्वधर्मविद।चार्यः सोऽन्वज्ञात्स्वसुतं ततः परमापद्गतेनापि न सा तात त्वया रणे। इदमस्रं प्रयोक्तव्यं मानुषेषु विशेषतः इत्युक्तवान्गुकः पुत्रं द्रोणः पश्चाद्धोक्तवात् ।

सीप्तिक पर्दमें बारह अध्याय ।

श्रीवैश्वम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! जब महापशक्रमी भीमसेन अञ्चत्यामाको मारने चले गये, तव यदुकुल श्रेष्ठ, कमलनेत्र श्रीकृष्ण कुन्ती-पुत्र युधिष्ठिरसे बोले, हे पाण्डव ? ये आपके माई मीमसेन पुत्रशोकसे व्या-कुल होनर एकले ही अञ्चत्थामाको मारने चले जाते हैं, है भरतकुलश्रेष्ठ ! मीमसेन आपको सन माइयोंमें प्यारे हैं, आप उनको इस आपत्तिसे उवारनेके लिये क्यों नहीं दौडते ? महात्मा शत्रु-नाशन सब धनुषधारियोंसे

चार्यने जो सर पृथ्वीको मस करनेमें समर्थ अर्जुनको प्रसन्न होकर जो अस्र दिया था, वही एक दिन कोधी अश्व-त्थामाने अपने पितासे मांगा । महातमा घर्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ, द्रौणाचार्यने विचारा कि यह बडा चश्चल और दुष्ट है, तब मी द्रोणाचार्यने अश्वत्थामाको वह अस्त्र सिखा दिया, परन्तु अधिक प्रसन्न होकर नहीं दिया और फिर कहा कि, हे पुत्र ! अत्यन्त आपत्ति पडनेपर भी तुम यह अस्त्र किसी मनुष्यपर न छोडना।(१-८)

<u>|</u>

न त्वं जातु सतां मार्गे स्थातेति पुरुषर्भभ 11911 स तदाज्ञाय दुष्टात्मा पितुर्वचनम्रियम्। निराशः सर्वेकल्याणैः शोकात्पर्यचरन्महीम् ॥ १० ॥ ततस्तदा ऋरश्रेष्ठ वनस्थे त्वयि भारत। अवसद द्वारकामेल वृष्णिभिः परमार्चितः 11 88 11 स कदाचित्समुद्रान्ते वसन द्वारवतीमनु । एकएकं समागम्य मामुवाच हस्रविव 11 88 11 यत्तद्यं तपः कृष्ण चरन्सत्यपराक्रमः। अगस्त्राद्वारताचार्यः प्रत्यपद्यत मे पिता 11 83 11 अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम देवगन्धर्वपूजितम् । तदच मिय दाशाई यथा पितरि मे तथा 11 88 11 असत्तत्त्रुपादाय दिव्यमस्रं यद्त्रम । ममाप्यस्त्रं प्रयच्छ त्वं चकं रिप्रहणं रणे 11 29 11 स राजन्त्रीयमाणेन मयाऽप्युक्तः कृताञ्जलिः। याचमानः प्रयत्नेन मत्तोऽस्त्रं भरतर्षम 11 25 11 देवदानवगन्धर्वमनुष्यपतगोरगाः।

कहकर फिर कहा कि, तुम इस जगत्में
महात्माओं के मार्गपर नहीं चल सकोगे।
पापी दुष्टात्मा अक्ष्यत्थामा अपने पिताके कठोर वचन सुनकर सब सुखों से
निराश हो गये, और शोकसे व्याकुल
होकर जगत्में घूमने लगे। हे कुरुकुलश्रेष्ठ ? उन दिनों आप वनमें थे, तब ही
घूमते घूमते अक्ष्यत्थामा द्वारिकामें
पहुंचे, वहां यादवोंने उनका बहुत ही
स्त्रागत किया, तब ने वहां कुछ दिनतक
ठहर गये, एक दिन हम और वे दोनों
सम्रद्रके तटपर घूम रहे थे, तब उन्होंने
हंसकर हमसे कहा, कि हे कुष्ण ! हमारे

पिताने जो घोर तप करके देनता और दानवींसे पूजित ज्ञहाशिर नामक अस्र अमित ग्रामिक श्री में भी उसे आजकरू अपने पिताके समान ही जानता हूं, इस लिये आप हमसे उस श्रम्ल को सीखिय और युद्धमें श्रश्तोंके नाश करनेवाला अपना दिव्यचक हमकी दे दासिये। (९-१५)

हे राजन् ! मैंने अध्वत्थामाको हाथ जोडते अनेक यत्न करके चक्र मांगते देख ऐसे वचन कहे, जगत्में देवता, दानव, गन्धर्व, मसुष्य, पक्षी और सांप कोई ऐसा नहीं है, जो हमारे बलके सौ त समा मम विषय धार्ताशेनापि पिण्डिताः॥ १७ ॥
हदं घनुरियं शार्ताशेनापि पिण्डिताः॥ १७ ॥
हदं घनुरियं शार्तारिदं चक्रमियं गदा ।
यथदिच्छित चेदकं मत्तस्तत्तद्दामि ते ॥ १८ ॥
यच्छक्रोषि समुयन्तुं प्रयोक्तमपि वारणे ।
तद्भुहाण विनाऽस्त्रेण यन्मे दातुमभीप्सिस ॥ १९ ॥
तद्भुहाण विनाऽस्त्रेण यन्मे दातुमभीप्सिस ॥ १९ ॥
तद्भुहाण वक्रमित्युक्तो मया तु तदनन्नरम् ।
जग्नहोत्पत्य सहसा चक्रं सव्येन पाणिना ॥ २१ ॥
व चैनमशक्तस्थानात्सश्चालियतुम्प्युत ।
अथैनं दक्षिणेनापि ग्रह्होतुम्रुपक्कमे ॥ २२ ॥
ततः सर्वेचलेनापि ग्रह्होत्मादं ततः ।
ततः सर्वेचलेनापि ग्रह्मापापं परमं गतः ।
ततः सर्वेचलेनापि ग्रह्मापापं परमं गतः ।
ततः सर्वेचलेनापि ग्रह्मापापि ग्रह्माप् गिने वन्दरस्वस्त्रस्वस्वस्त्रमानं सहस्व पारस्वलेन निवच देखकर परवापे स्वापं भी कहा कि ले, तव वह वह वह विक्रा प्रमाण गिने स्वच्यापारिमीं प्रमाण गिने स्वच्यापारिमीं प्रमाण गिने स्वच्यापारिमीं प्रमाण गिने स्वच्यापारिमीं प्रमाण गिने

श्वापरि । १० सीहिकसं । १० शाया १२ । १० ॥ यः साक्षादेवदेवेशं शितिकण्ठमुनापतिम् । इत्युद्धं पराजिष्णुस्तोषयामास् श्रङ्करम् ॥ २० ॥ यस्मात्य्यपत्रो नास्ति ममान्या पुरुषो सुवि । नादेणं यस्य मे किंचिद्यं दाराः सुतास्तथा ॥ २८ ॥ तेनापि सुद्धदा ब्रह्मन्पार्थेनाष्ट्रिष्टकर्मणा । नोक्तपूर्वमिदं वाक्यं यस्त्वं मामिभाषसे ॥ २९ ॥ व्रह्मचर्यं महद्धोरं तीस्वो द्वाद्शायापिकम् । हमवत्यार्श्वमास्थायययो मया तपसार्जितः ॥ २८ ॥ व्रह्मचर्यं महद्धोरं तीस्वो द्वाद्शायापिकम् । हमवत्यार्श्वमास्थायययो मया तपसार्जितः ॥ ३२ ॥ समानवत्यारिण्यां किंमण्यां पोऽन्वजायत । समत्वक्रमारस्तेजस्वो मशुन्नो नाम म सुतः ॥ ३२ ॥ तेनाप्येतनम्महिद्यं वक्षममितमं रणे । न प्रार्थितम्मृन्युद्धं यदिदं प्रार्थितं त्वया ॥ ३२ ॥ रामेणातिवलेनैतन्नोक्तपुर्वं कदाचन ! न गदेन न साम्वेन यदिदं प्रार्थितं त्वया ॥ ३२ ॥ रामेणातिवलेनैतन्नोक्तपुर्वं कदाचन ! । ३४ ॥ मारताचार्यपुत्रस्त्वं मानितः सर्वयादवैः । विते तेते हैं, जो गाण्डीव घतुप, सफेद घोडे जौर हत्यानिक व्यापर्वे वित्राय सर्वयादवैः । वोर तप किया था, जो हमारे समान वित्र सर्वाद्याद्वे प्रार्थे प्

चकेण रथिनां श्रेष्ठ कं तु तात युगुत्ससे 11 24 11 एवमुक्तो मया द्रौणिर्मामिदं प्रत्युवाच ह। प्रयुज्य भवते पूर्जा योत्स्ये कृष्ण त्वया सह ॥ ३६॥ प्रार्थितं ते मया चक्रं देवदानवपूजितम् । अजेयः स्यामिति विभो सत्यमेतद्ववीमि ते ॥ ३७ ॥ त्वत्तोऽहं दुर्लभं काममनवाष्यैव केशव। मतियास्यामि गोविंद शिवेनाभिवदस्व माम् ॥ ३८॥ एतत्सुभीमं भीमानामृषभेण त्वया धृतम्। चक्रमप्रतिचक्रेण सुवि नान्योऽभिपचते एतावदुक्त्वा द्रौणिर्मा युग्यानश्वान्धनानि च। आदायोपययौ काले रत्नानि विविधानि च ॥ ४० ॥ स संरम्भी दुरात्मा च चपलः क्रूर एव च । वेद चास्त्रं ब्रह्माद्वीरस्तस्माद्रक्ष्यो वृत्तीदरः ॥ ४१ ॥ [६४१]

इति श्रीमहामारते शतसाहरूयां संहितायां नैयासिक्यां साध्तकपूर्वान्तर्गत ऐपीके पूर्वीण युधिष्ठिरकृष्णसंवादे हादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

वैश्वम्पायन उवाच-एवसुक्त्वा युषांश्रेष्ठः सर्वेपाद्वनन्द्नः ।

आपका सत्कार किया। हे महारथ! इस चक्रको आप लेकर कौनसे महारथ-से युद्ध कीनियेगा सो कहो, हमारे ऐसे वचन सुन अक्वत्थामाने हमसे कहा। (२५---३६)

THE TO BE TO हे कृष्ण ! हम यह चक्र लेकर आप की गुरु पूजा करके आपहीसे युद्धकरते। हम आपसे सत्य कहते हैं कि, इसीलिय हमने आपसे ये देवता और दानवोंसे पूजित चक्र मांगा था, और यह भी इच्छा थी कि, इमें कोई न जीत सके, परन्तु यह दुर्लभ काम इमारा सिद्ध न

से जानेकी आज्ञा मांगते हैं, आप सब मयानकोंसे भी सयानक हैं, लिये इस भयानक चक्रको कोई नहीं ले सक्ता ऐसा कहकर हमारे दिये हुए खबर, घोडे, धन और अनेक प्रकार हे रल लेकर अञ्चत्यामा अपने घरको चले गये। वही अञ्चत्थामा अत्यन्त पापी चञ्चल और दुष्ट है, और नक्षजिर शसको जान ता भी है, इसिलेये भीमसेनकी इससे रक्षा करनी चाहिए। (३६-४१)[६४१]

सौष्तिकपर्वमें बारह अध्याव समाप्त ।

सौ।प्तिकपर्वमें तेरह अध्याय ।

सर्वायुधवरोपेतमारुरोह रथोत्तमम् युक्तं परमकाम्बोजैस्तुरगैहेंममालिभिः। आदिलोदयवर्णस्य धुरं रथवरस्य तु दक्षिणामवहच्छैव्यः सुत्रीवः सव्यतोऽभवत् । पार्ष्णिव!हौ तु तस्यास्तां मेघपुष्पबलाहकौ विश्वकर्मकृता दिच्या रत्नघातुविभूषिता। उच्छिनेव रथे माया ध्वजयष्टिरहरूयत वैनतेयः स्थितस्तस्यां प्रभामण्डलस्किमवात् । तस्य सत्यवतः केतुर्भुजगारिरदृश्यत अथारोहद्वृषिकेदाः केतुः सर्वधनुष्मताम् । अर्जुनः संसक्तमी च क्रस्राजो युधिष्ठिरः अशोभेतां महात्मानौ दाशाईमभितः खितौ। रथस्थं शार्डभन्वानमश्विनाविव वास्त्रम् ताबुपारोप्य दाशाईः स्थन्दनं लोकपूजितम्। प्रतोदेन जवोपेतान्परमाश्वानचोद्यत् ते ह्याः सहसोत्पेतुर्गृहीत्वा स्यन्दनोत्तमम् । आस्थितं पाण्डवेयाभ्यां यद्नासृषभेण च वहतां क्षार्क्षपन्वानमश्वानां क्षीत्रगामिनास् । प्रादुरासीन्महान् चान्दः पक्षिणां पततामिव ॥ १० ॥

्राह्म क्षेत्र क्षेत् जनमेजय । यदुकुल श्रेष्ठ श्रीकृष्ण सव श्लोंसे भरे काम्बोजदेशमेंसे उत्पन्न हुए सोनेकी माला पहिने घोडोंसे युक्त रथमें बैठे । उस सूर्यके समान चमकते हुए रथके धुरके दहिनी और शैब्य, नांई ओर सुग्रीन और आगेकी ओर मेघपुष्प और बलाहक नामक घोडे जो-हे गए, ऊपरसे विश्वकर्णाकी बनाई रत्न जडी सोनेके ऊंचे डण्डेवाली प्रकाशमान गरुडयुक्त ध्वजा, फहराने लगी। उसीमें

त समान्छंत्ररच्याच्या सणेन भरतर्षम ।

भीमसेनं महेष्वासं समजुद्ध्य विगिताः ॥ ११ ॥

भीमसेनं महेष्वासं समजुद्ध्य विगिताः ॥ १२ ॥

भीमसेनं महेष्वासं समजुद्ध्य विगिताः ॥ १२ ॥

भीमसेनं महेष्वासं श्रीमतां दृष्यत्यं समुयातम् ॥ १२ ॥

स्रोवार्षात्रेष्ठ सौन्ताम् श्रीमतां दृष्यत्वं समुयात्रम ॥ १२ ॥

स्रोवार्षात्रेष्ठ सौन्ताम श्रीमतां दृष्यात्रम ॥ १२ ॥

स्रोवार्षात्रम महोष्यात्रम सिन्द्रमाम ॥ १४ ॥

स्राव्या मागोरधीतीरं हरिभिर्भुशावेगितैः ॥ १२ ॥

स्राव्या मागोरधीतीरं हरिभिर्भुशावेगितैः ॥ १२ ॥

स्राव्या मागोरधीतीरं हरिभिर्भुशावेगितैः ॥ १४ ॥

स्राव्या स्राव्या मानुद्यत्वान्ते पश्रीमान्य सह।

स्राव्या स्राव्या स्राव्या स्राव्या स्राव्या ॥ १४ ॥

स्राव्या स्राव्या स्राव्या स्राव्या स्राव्या ॥ १८ ॥

स्राव्या स्राव

क्षावाय १४] १० सीतिकर्ष । ८६

क्षावाय १४] १० सीतिकर्ष । ८६

क्षावाय स्मान स्मान स्मान स्मान स्मान स्मान स्मान स्मान सम्मान स्मान सम्मान सम्मान सम्मान स्मान सम्मान स्मान स्मान सम्मान स्मान सम्मान स्मान सम्मान स्मान सम्मान सम

<u>|</u>

ा ४ ॥

। ४ ॥

। ४ ॥

। ४ ॥

। ४ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। १ ॥

। केशवेरैवमुक्तोऽथ पाण्डवः परवीरहा । अवातरद्रथात्तूर्णं प्रगृश्च सञ्चारं घतुः पूर्वमाचार्यप्रज्ञाय ततोऽनन्तरमात्मने । भ्रातृभ्यश्चेव सर्वेभ्यः खस्तीत्युक्तवा परन्तपः ॥ ५ ॥ देवताभ्यो नमस्कृत्य गुड्म्यश्रीव सर्वेशः। उत्ससर्ज शिवं ध्यायन्नस्त्रमस्रोण शाम्यताम् ततस्तदस्रं सहसा सृष्टं गाण्डीवधन्वना । प्रजन्वाल महार्चिष्मचुगान्तानलस्निभम् तथैव द्रोणपुत्रस्य तदस्त्रं तिग्मतेजसः। प्रजन्माल महास्वालं तेजोमण्डलसंवृतम् निर्घाता बहवश्चासन्पेतुरुल्काः सहस्रद्याः । महद्भयं च भूतानां सर्वेषां समजायत सज्ञन्दसभवद् व्योम ज्वालामालाकुलं भृताम् । चचाल च मही क्रत्स्ता सपर्वतवनद्वमा ते त्वस्रतेजसी लोकांस्तापयन्ती व्यवस्थिते। यहर्षीसहितौ तत्र दर्शयामासतुस्तदा नारदः सर्वेभूतात्मा भरतानां पितामहः।

श्रीकृष्णके ऐसे वचन सुन शृत्रना-शन अर्जुन धनुष बाण लेकर शीघ्रतासे उतरे,और ब्रह्माश्चर अस्त्र छोडनेके पहि-ले " हमारे गुरुपुत्र अञ्चत्थामाका कल्याण होय, पीछे हमारे भाइयोंका और हमारा कल्याण होय " ऐसा कह-कर देवता, गुरु और शिवको प्रणाम करके "अञ्चत्थामाका अस्त्र हमारे अससे शान्त हो" ऐसा कहकर अर्जुनने उस अस्रको छोड दिया।(४-६)

वह अस्त्र गाण्डीव घनुषसे छूटकर

उसी प्रकार द्रोणपुत्र अञ्नत्थामाका महातेजली अस भी जलने लगा, और चारों ओर प्रकाश करने लगा,उस समय आकाश्वसे विजली गिरने लगी, और भी मयानक सहस्रों अपशकुन होने लगे । सब जगत् भयसे व्याकृल होगया, आकाश शब्द और आगसे पूरित होग-या, वन और पर्वतोंके समेत पृथ्वी हिलने लगी। (७—१०)

तव महामुनि नारद और कुरुकुलके पितामह महात्मा व्यासने सब लोगोंको

ଅ ଅଧିକତିତ ହିନ୍ଦିର ଜିଣ୍ଟିଟ ପ୍ରତିକ ପର୍ବ କଳିକ କଳିକ କଳିକ କଳିକ କଳିକ ଜିନ୍ଦିର ଅଧିକତିତ ହେଉଛି । ଅଧିକର୍ଣ୍ଣ ଅଧିକର୍ଣ୍ଣ ଅଧିକର

प्याप १५] १० चांशिकवर्ष। ८५

उसी रामियुं वीरी सारद्वाजघनञ्जमी ॥१२॥
तो मुनी सर्वधर्मज्ञो सर्वस्ताहितिषणो ।
दीप्तयोरस्रपोमध्ये स्थितौ परमतेजसी ॥१३॥
तदन्तरमधाष्ट्रपान्नुपमस्य यशक्ति ॥१४॥
प्राणशृद्धिरनाष्ट्रपान्ने देवदानवसंमती ।
अस्तामुषिवरी तत्र ज्विलताविव पावको ॥१४॥
प्राणशृद्धिरनाष्ट्रपाने देवदानवसंमती ।
अस्रतेजः शमियुं लोकानां हितकाम्यमा ॥१५॥
प्राणशृद्धिरनाष्ट्रपोने तेत्र प्राचनिता महारथाः।
नैतदस्तं मनुष्येषु तेः मयुक्तं कथवन ।
किसिदं साहसं वीरी कृतवन्ती महास्थाः॥१६॥ [६७९]
किसिदं साहसं वीरी कृतवन्ती महास्थाः॥१६॥
वैग्रम्पायन डवाच-हद्वेष नरताादृं ल तावग्रिसमतेजसी।
सञ्जहार शरं दिव्यं त्वरमाणो धनञ्जयः ॥१॥
वेग्रम्पायन डवाच-हद्वेष नरताादृं ल तावग्रिसमतेजसी।
सञ्जहार शरं दिव्यं त्वरमाणो धनञ्जयः ॥१॥
देवा। किर वीर अश्वरयामा और अर्जु
नको ज्ञान्त करने लगे। सव धनोंके
जाननेवाले, सव वगतके कल्याण चाहनेवाले, महावेत्रस्वी नारद और व्यावधुविदेनों जलते हुए अस्त्रोंके वीचमें
सहे होगए, जन दोनों जलते हुप वानेनेवाले हुई दो अग्नि । हन दोनों
महारमाओंको देवता वा दानवादि हनकी
एजा करते थे, हनका कोई निरादर
नहीं कर सक्त था, हसी लिये येजस शक्ती नहीं जले, तव ये दोनों महास्मा सव जगतका कल्याण करनेके लिये
अभित क्रम्य न्यान स्मान जलते हुए देख, अर्जुनने
श्रीविक्ष वाने सहाला ।
स्मा सव जगतका कल्याण करनेके लिये
अभित क्रम इसालिये हस अस्त्रको ।
सार्व जगतका कल्याण करनेके लिये
अभित क्रम इसालिये हस अस्त्रको ।
सार्व जगतका कल्याण करनेके लिये
अभित क्रम इसालिये हम अस्ति।
अस्ति वाले, हमने इसालिये हस अस्त्रको ।
असित वाले सक्ति वेद हम अस्ति।
असित वाले सक्ति वेद हम अस्ति।
असित वाले सक्ति वेद हम्याच समान्य । १०००।
असित क्रम वाले हम्याच समान्य । १०००।
असित कर्याच समान्य । १०००।

त्मा सब जगतका कल्याण करनेके लिथे

9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9	eeec	666	999
संहते परमास्त्रेऽसिन्सर्वीनसानशेषतः।			
पापकर्मा ध्रुवं द्रौणिः प्रघक्ष्यत्यस्रतेजसा	lí	3	11
यदत्र हितमस्माकं लोकानां चैव सर्वेथा।			
भवन्तौ देवसङ्काशौ तथा संमन्तुमईतः	11	ጸ	I
इत्युक्तवा सञ्जहारास्त्रं पुनरेव धनञ्जयः।			
संहारो दुष्करस्तस्य देवैरिप हि संयुगे	II	G	
विसृष्टस्य रणे तस्य परमास्त्रस्य संग्रहे ।			
अशक्तः पाण्डवादन्यः साक्षादपि शतऋतुः	Ħ	g	ij
ब्रह्मतेजोद्भवं तृद्धि विसृष्टमकृतात्मना ।			
न शक्यमावर्त्तायेतुं ब्रह्मचारिवृतादते	11	9	11
अचीर्णब्रम्हचर्यो यः सृष्ट्वाऽऽवर्त्तयते वुनः ।			
तदस्त्रं सानुबन्धस्य मूर्धानं तस्य कृन्ताति	11	ሪ	IJ
ब्रह्मचारी व्रती चापि दुर्वापमवाष्य तत्।			
परमव्यसनातोंऽपि नार्जुनोऽस्त्रं व्यमुश्चत	11	9	ll
सत्यव्रत्थरः ग्रुरो ब्रह्मचारी च् पाण्डवः।			
गुरुवर्ती च् तेनास्त्रं सञ्जहारार्जुनः पुनः	11 8	0	II

छोडा कि, इसके तेजसे अद्यवस्थामाके अस्तर्का तेज नष्ट होय, अब हम अस्त्रको लौटा लेयं, तो पापी अद्यवस्थामा अपने अस्तर्क तेजसे निश्रय ही हम सबको मस कर देगा, इसलिये इस समय हमारे और जगत्के कल्याणके लिये अचित बात हमसे कहिए सो ही हम करें, क्यों कि आप दोनों देवतोंके समान ऋषी हैं। ऐसा कहकर अर्जुनने अपने अस्त्रको लौटा लिया। (१-४)

हे राजन् ! उस अस्रका लौटाना वडा ही कठिन था, अर्जुनके शिवाय साक्षात् इन्द्र भी उसे नहीं लौटा सकते थे; वह ब्रह्माके तेजसे बना था, इस लिये छोडनेके पश्चात् ब्रह्मचारीके शिवाय कोई पापी उसे लौटा नहीं सक्ता, जो विना कार्य किये उस अल्लको छोडे और फिर लौटानेकी इच्छा करे, तो वह अल्ल उसहीका शिर काट देता था। (4— ८)

अर्जन ब्रह्मचारी और त्रती होकर भी घोर आपिचेंम पडनेसे भी उस घोर शक्तको कभी नहीं छोडते थे, ये त्रतको पालनेवाले वीर और ब्रह्मचारी तथा गुरुकी सेवा करनेवाले थे, इस लिये इस अस्रको लीटा सके। अनन्तर अञ्च

च्यास उवाच-

7	₃₉₃₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉₉	66	666	eeeee
	द्रौणिरप्यथ सम्प्रेक्ष्य तावृषी पुरतः स्थितौ ।			
	न राशाक पुनर्घोरमस्त्रं संहर्तुमोजसा	11	99	IJ
	अशक्तः प्रतिसंहारे परमास्त्रस्य संयुगे ।			
	द्रौणिदीनमना राजन् द्वैपायनमभाषत	11	१२	ll .
	उत्तमव्यसनार्तेन प्राणत्राणमभीष्सुना ।			
	मयतद्स्ततुत्सृष्टं भीमसेनभयान्सुने	11	१३	1)
	अघर्मेख कृतोऽनेन धार्तराष्ट्रं जिघांसता ।			
		11	१४	11
	अतः सष्ट्रिवदं ब्रह्मनमयाऽस्त्रमकृतात्मना ।			
		(l	१५	11
	निसृष्टं हि मया दि्च्यमेतद्श्चं दुरासदम्।			
		()	\$ 8	ll .
	तदिदं पाण्डवेयानाभन्तकायाभिसंहितम्।	••	٥	
	अद्य पाण्डुसुतान्सर्वान् जीविताद्धंशयिष्यति	11	१७	{{
	कृतं पापिमदं ब्रह्मन् रोषाविष्ठेन चेतसा।	.,	8 .	11
		li	१८	(I
•	अस्त्रं ब्रह्मशिरस्तात विद्वान्पार्थो धनस्रयः।	n	१९	D
	उत्सृष्टवान्न रोषेण न नाशाय तवाहवे	н	12	11

त्थामाने ऋषियोंको अपने आगे खडा देख अस्त्र लौटानेकी इच्छा करी, परन्तु शीघ न लौटा सके, तब अख्वत्थामा दीन होकर व्याससे बोले।(९-१२)

हे मुने ! मैंने मीमसेनके मयसे घोर आपित्तेमं पडकर अपनी रक्षाके लिय इस असको छोडा था, इसने दुर्योधन-को मारते समय बहुत अधर्भ किया था, यह मीमसेन युद्धमें अन्याय करता है, इसी लिये मैंने मीमपर यह अस छोडा था, अब मैं इसको लौटा नहीं सकता । मैंने इस वोर दिन्य असको अधिका मन्त्र पढकर पाण्डवोंका नाश करनेके लिये छोडा था, सो अब यह पाण्डवोंका अवस्य ही नाश करेगा। हे ब्रह्मन् ! मैंने कोघमें भरकर भूलसे युद्धमें जो ये अस्त्र छोडा, सो पाप कि-या। (१३—१८)

श्रीन्यास ग्रानि बोले, हे तात! कुन्तीपुत्र अर्जुन भी इस ब्रह्मिश्चर अस्त-को जानते हैं। उन्होंने जो युद्धमें इस अस्त्रको छोडा था, सो क्रोधमें भरकर

अस्त्रमस्त्रेण तु रणे तव संशमयिष्यता। 11 30 11 विस्टमर्जुनेनेदं पुनश्च प्रतिसंहतम् ब्रह्मास्त्रमप्यवाप्यैतदुपदेशात्पितुस्तव । 11 28 11 क्षत्रधर्मान्महावाहुर्नोकम्पत घनञ्जधः एवं घृतिमतः साघोः सर्वोस्त्रविदुपः सतः। सञ्चातृवन्धोः कसान्वं वषमस्य चिकीर्पसि ॥ २२ ॥ अस्त्रं व्रह्मशिरो यत्र परमास्त्रेण वध्यते । समा द्वादश पर्जन्यस्तद्राष्ट्रं नाभिवर्षति 11 53 11 एतद्रथे महाबाहुः शक्तिमानपि पाण्डवः। न विहन्यात्तदस्त्रं तु प्रजाहितचिकीर्पया 11 88 11 पाण्डवास्त्वं च राष्ट्रं च सदा संरक्ष्यमेव हि । तसात्संहर दिव्यं त्वमस्त्रमेतन्महासुज 11 24 11 अरोषस्तव चैवास्तु पाधीः संतु निरामयाः। न ह्यधमेंण राजिषः पाण्डवो जेतुमिच्छति मणि वैव प्रयच्छाच यस्ते शिरसि तिष्ठति । एतहादाय ते प्राणान्प्रतिदास्यन्ति पाण्डवाः ॥ २७ ॥ पाण्डवैर्घानि रत्नानि यचान्यत्कौरवैर्धनम् ।

द्रीणिरुवाच--

या तुम्हारा नाश करनेके लिये नहीं, वरन् केवल तुम्हारे अखका वल शान्त करने-हीके लिये छोडा था, और फिर उन्होंने उसे लौटा भी लिया, देखो तुम्हारे पिता-हीसे उन्होंने भी सीखा था, महाचाहु अर्जु-न क्षत्रियोंके धर्ममें स्थित हैं, बुद्धिमान साधु और सर्वशक्तिवद्याके पण्डित हैं, तव तुम उन्हें बन्धुओंके सहित क्यों मारना चाहते हो? जहां ब्रह्मशिर इसी अखके तेजसे शान्त किया जाता है, उस देशमें वारह वर्षतक जल नहीं वर्षता, इसी लिये प्रजाका कल्याण चाहनेनाले महा- वाहु अर्जुन समर्थ होनेपर भी इस अस को नहीं काटते (१९-२४)

हे महावाहो ! तुम्हे पाण्डव और राज्य इन सवहींकी रक्षा करनी चाहिये, इसिलये तुम इस अख़को लौटा लो, तुम्हारा कोध शान्त हो, पाण्डवोंका कल्याण हो, क्यों कि राजक्रिप युधिष्ठिर अवर्षसे किसींका जीतना नहीं चाहते, तुम अपने शिरकी मणी पाण्डवोंको दे दो, तब ये तुम्हारे प्राण छोड दें-मे । (२५-२७)

अञ्चत्थामा बोले, हे भगवन् । मैंने

श्वापाय १५] १० संशिष्णमं । ८० ।

शवाण १५ ।

स्विभणो दानवेष्णे वा नागेष्णो वा कथळान ॥ १८ ॥

स्व पक्षोणणमं न तस्कर भणं तथा ।

एवं वीणों मणिरणं न में खाल्या कथळान ॥ ३० ॥

यस्तु में भगवानाह तन्में कार्यमनन्तरम् ।

अगं मणिरणं वाहमीषिका सु पतिष्यति ॥ ३१ ॥

गमंपु पण्डवेपानाममोधं चैतदुत्तमम् ॥ ३२ ॥

गमंपु पण्डवेपानाममोधं चैतदुत्तमम् ॥ ३२ ॥

एतद्क्षमतळेव गमंधु विस्रजामण्डम् ॥ ३२ ॥

श्वास उवाच— एवं कुरु न चान्या सु बुद्धिः कार्या त्वयाऽन्यम् ॥ ३४ ॥

विस्रणायन उवाचन्तता परममस्त्रं सु द्रीणिरुश्चतमाहचे ।

हेत श्रीसहानात्व शक्ताहरूण विस्रजापंत्रवेशवे पंचवशोऽप्यापः ॥ १५ ॥

विश्वमायन उवाचन्तता परममस्त्रं सु द्रीणिरुश्चतमाहचे ।

हेत श्रीसहानात्व शक्ताहरूण विस्रजाणे विस्रज्ञाद्वाण्याः ॥ १५ ॥

विश्वमायन उवाचनका पाण्यवेषणार्थवेषणे विष्यवेषण्याः ॥ १५ ॥

विश्वमायन विस्रक्ष विश्वमायाः १५ ॥

विश्वमायाः होते वेले, व्यासके विश्वमायाः होते वेले, व्यासके विष्या सुनि वोले, व्यासके विष्य मापन सुनि वोले, व्यासके वच्नासुन अवस्वस्वामाने उस छोडे हुए अक्को उत्तराके मर्भमें छोडकर शान्य हो । (३४)

श्वीवेषम्यायन सुनि वोले, व्यासके वच्नासुन अवस्वस्वामाने उस छोडे हुए अक्को उत्तराके मर्भमें जानिकी आहा हो । (३५) [७१४-]

ही क्षीके गर्भमें जाकर विरोग, विश्वम्यमें पंचरह जप्याय सारा। ।

ही विक्रवर्वे पंचरह जप्याय सारा। ।

अवाप्तमि
यमावध्य
देवेभ्यो ह
न च रक्षे
एवं वीर्यो
यम्म भे
पर्म प्राव
परम्
पतदस्त्रमः
न च वाव
व्यास उवाच एवं क्रक न
गभेंषु पा
न च द्रात
श्रीमहामार्त श्रवसा
व्यास उवाच एवं क्रक न
गभेंषु पा
न च वाव
हित श्रीमहामार्त श्रवसा
व्यास जाव क्रात् रस्म
पाण्डवोंसे जितने रस्न पाथे
कौरवोंसे जो धन पाया है, ह
यह मणि अधिक हैं, जिसके प
प्यास, भूख, श्रस्, श्रीर चे
भय नहीं होता, ऐसी उत्तम
पाण्डवोंको नहीं दे सक्ता, परः
वचनोंको टाल भी नहीं सक्ता
यह मणी रक्षी है, और यह
वचनोंको टाल भी नहीं सक्ता
वचनोंको हैं, परन्तु अब यह न्यर्थ अस्त
की स्त्रीके गर्ममें जाकर
विद्वार स्त्रां कि में हसे छोड कर ली

999999999999999999999999999999999999999	999999999999999999999999999999999999999
वैश्वम्यायन उवाच-तदाऽऽज्ञाय ह्विकेशो हृष्यमाण इदं वाक्यं । विराटस्य सुतां पूर्वं स्नु उपष्ठव्यगतां हृष्ट्वा व्रतः परिक्षीणेषु कुरुषु पुत्रस् एतदस्य परिक्षित्त्वं गर्य तस्य तद्भवनं साधोः स् परिक्षिद्भविता होषां पु एवं हृवाणं गोविन्दं स द्रौणिः परमसंरव्धः प्र नैतदेवं यथाऽऽत्थ त्वं वचनं पुण्डरीकाक्ष न पतिष्यति तदस्त्रं हि व विराटवृहितुः कृष्ण यं श्रीमगवानुवाच- अमोधः परमास्त्रस्य प स तु गर्मो मृतो जातं सीव्वक्षपंत्रं सोख्द अध्यायः श्रीवैशम्पायन स्नुनि बोले, हे राजन् जन्नभेजयः । पापी अक्ष्वत्थामाके अमि- प्रायको जानकर श्रीकृष्ण प्रसन्त होकर अववत्थामासे बोले, एक दिन राजा विराटकी पुत्री अभिमन्युकी स्नी उत्तरा अपने परमें वैठी थी, तब उससे एक ज्ञाह्मणने आकर ऐसे वचन कहे, कि जय कुरुकुलका नाश्च हो चुकेगा, तब तुम्हारे पुत्र होगा, वह पहले गर्ममें नष्ट	विसृष्ट पापकमणा।
हृष्यमाण इदं वाक्यं ।	द्वाण प्रसम्बात्तद्। ॥ ६॥
विराटस्य सुतां पूर्वं स्तु	षां गाण्डीवघन्वनः।
उपस्रव्यगतां हन्ना व्रत	वान्त्राह्मणोऽत्रवीत् ॥२॥
परिश्लीणेषु कुरुषु पुत्रस	तव भविष्यति ।
एतदस्य परिक्षित्वं गर	र्भस्यस्य भविष्यति ॥ १॥
तस्य तद्भवनं साधोः स	कालेवकविद्यावि ।
तस्य तद्भूचन साथाः स	<u></u>
परिक्षिद्भविता स्रेपां पु	नर्वशकरः सुतः ॥४॥
एवं ब्रुवाणं गोविन्दं स	
द्रौणिः परमसंरब्धः प्र	त्युवाचेदमुत्तरम् ॥५॥
नैतदेवं यथाऽऽत्थ त्वं	
वचनं पुण्डरीकाक्ष न	
	एर्ने तस्या मयोचतम् ।
विराटदुहितुः कृष्ण यं	
श्रीमगवातुवाच- अमोधा परमास्त्रस्य प	
	ो दीर्घमायुरवाप्स्यति ॥८॥
28 111 211 4111	
सीप्तिकपर्वमें सोछइ अध्याय ।	नामक उत्तराका पुत्र होगा। (१-४
श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्	यदुकुलश्रेष्ठ श्रीकृष्णके ऐसे वच
जनमेजय ! पापी अश्वत्थामाके अभि-	सुन अञ्चत्थामा क्रोधमें भरकर बोहे
प्रायको जानकर श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर	हे कमलनेत्र कृष्ण ! जो तुम पाण्डवों
अञ्चत्यामासे बोले, एक दिन राजा	पक्षपातसे कह रहे हो, सो ऐसा नई
विराटकी पुत्री अभिमन्युकी स्त्री उत्तरा	होगा, क्यों कि हमारा बचन मिध्य
अपने घरमें बैठी थी, तब उससे एक	नहीं होताः जिस विराटपुत्रीके गर्भव
न्नाक्षणने आकर ऐसे वचन कहे, कि	तुम रक्षा करना चाहते हो, यह हमा
जय क्रुक्कलका नाश है। चुकेबा, तन	
तार्था तार कोता वह नारे -22	छोडा हुआ अस्र उसी गर्भका ना
तुम्हारे पुत्र होगा, वह पहले गर्भमें वष्ट	करेगा। (५-७)
राजायगा, । भर उसका जन्म होगा ।	श्रीकृष्ण बोले, अरे क्षुद्र ! यह अ
होजायगा, फिर उसका जन्म होगा। आज उस महात्माका वचन सत्य हुआ, अब कुरुकुलकी रक्षा करनेवाला परिश्वित ecceccecceccccccccccccccccccccccccccc	वृथा नहीं होगा, वह गर्भ मर जायग
अप कुरुकुलका रक्षा करनेवाला परिश्चित	परन्तु फिर जीकर दीर्घाष्ट्र पावेगा, त
	eecececececee6999

यद्कुलश्रेष्ठ श्रीकृष्णके ऐसे वचन धन अध्वत्थामा क्रोधमें भरकर बोले. हे कमलनेत्र कृष्ण ! जो तुम पाण्डवींके पश्चपातसे कह रहे हो. सो ऐसा नहीं, होगा, क्यों कि हमारा वचन मिध्या नहीं होता; जिस विराटपुत्रीके गर्भेकी तुम रक्षा करना चाहते हो, यह हमारा छोडा हुआ अस उसी गर्भका नाश करेगा। (५-७)

श्रीकृष्ण बोले, अरे क्षुद्र ! यह अस्र वृथा नहीं होगा, वह गर्भ मर जायगा; परन्त फिर जीकर दीर्घाष्ट्र पावेगा. तझे

eeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeee

त्वां तु कापुरुषं पापं विदुः सर्वे मनीषिणः। असम्बत्पापकर्माणं बालजीवितघातकम् 11 9 11 तस्यात्त्वमस्य पापस्य कर्मणः फलमाग्रुहि । त्रीणि वर्षसहस्राणि चरिष्यसि महीमिमाम् ॥ १०॥ अप्राप्नुवन्कचित्काश्चित्संविदं जातु केनचित् । निजनानसहायस्त्वं देशान्त्रविचरिष्यसि 11 99 11 भवित्री न हि ते क्षुद्र जनमध्येषु संश्वितिः। प्यशोणितगन्धी च दुर्गकान्तारसंश्रयः 11 88 11 विचारिष्यसि पापात्मा सर्वेच्याधिसमान्वितः। वयः प्राप्य परिक्षित्तु वेदव्रतमवाष्य च 11 88 11 कृपाच्छारद्वताच्छ्राः सर्वोस्त्राण्युपपत्स्यते । विदित्वा परमास्त्राणि क्षत्रधर्मवते स्थितः 11 88 11 षष्टि वर्षाणि धर्मात्मा वसुधां पालयिष्यति । इतश्रोध्वं महावाहुः कुरुराजो भविष्यति 11 24 11 परिक्षित्राम दपतिर्मिषतस्ते सुदुर्मते । अहं तं जीविषयामि दुग्धं शस्त्राग्नितेजसा। पइय में तपसो वीर्य सलस्य च नराधम

न्यास उवाच-ं यस्मादनादृत्य कृतं त्वयाऽस्मान्कर्म दारुणम् ।

सव मनुष्य नपुंसक, पापी, सदा पाप करनेवाला और वालकोंको मारनेवाला कहेंगे, इसलिये इम और भी एक शाप तुझे देते हैं, क्यों कि इस महापापका फल अवश्यही तुझे होना चाहिए। तू तीन हजार वर्षत्क कहीं किसीसे किसी प्रकारकी सम्पत्ति विना पाये एकला और असहाय होकर जगत्में डोलेगा, हे शुद्र! तू मनुष्योंके बीचमें नहीं रहेगा, तेरे शरीरसे पीन और रुधिरकी दुर्गीन्ध आवेगी, मयानक जङ्गलोंमें चूमता फिरेगा और अनेक प्रकारके दु। ख सहेगा, परीक्षित मी दीर्घाष्ठ पाकर नेद पढेंगे, अनेक प्रकारके त्रत करेंगे, और कुपाचायेंसे सब अक्षनिया सीखकर क्षत्रियोंका धर्म पालन करेंगे, वीर धर्मात्मा परीक्षित साठ वर्ष राज्य करेंगे, युधिष्ठिरके पीछे महाबाहु परीक्षित ही कुरुकुलके राजा होंगे, रे नराधम! रे दुर्बुद्ध! तेरे देखते देखते परीक्षित महाराज होंगे, तू हमारे सत्य और तपके बलको देख। तेरे अखकी अभिसे जले हुए परीक्षितको

ब्राह्मणस्य सतश्चैव यसात्ते वृत्तमीदशम् तसाद्यदेवकीपुत्र उक्तवानुत्तमं वचः । असंशयं ते तद्भावि क्षत्रधर्मस्त्वयाऽऽश्रितः ॥ १८॥ अश्वत्थामोवाच- सहैव भवता ब्रह्मन्खास्यामि पुरुषेष्विह । सत्यवागस्तु भगवानयं च पुरुषोत्तमः वैशम्पायन उवाच-प्रदायाथ मार्णि द्रौणिः पाण्डवानां महात्मनाम् । जगाम विमनास्तेषां सर्वेषां पश्यतां वनम् पाण्डवाखापि गोविन्दं पुरस्कृत्य इतद्विषः। क्रचाद्वैपायनं चैव नारदं च महासुनिम् द्रोणपुत्रस्य सङ्जं मणिमादाय सत्वराः। द्रौपदीसभ्यधायन्त प्रायोपेतां मनिखनीम वैश्वस्पायन उवाच-ततस्ते पुरुषव्याद्याः सदश्वैरनिलोपमैः । अभ्ययुः सह दाशाहीः शिविरं प्रनरेव हि अवतीर्य रथेभ्यस्तु त्वरमाणा महारथाः। दरशुद्रींपदीं हृष्टामात्तीमार्ततराः खयम तामुपेख निरानन्दां दुःखशोकसमन्विताम्।

हम जिला देंगे। (८-१६)

श्रीव्यास मुनि बोले, तुमने इमारे वचनोंका निरादर करके ऐसा घोर कर्म किया,तम ब्राह्मण और विशेष कर पण्डित होके ऐसे ऐसे घोर कर्म करते हो और क्षत्रीधर्मका पालन करते हो, इबलिये देवकीपुत्रने जो कुछ तुम्हारे लिये कहा, सो सब सत्य होगा। (१७-१८)

अञ्चत्थामा बोले, पुरुषश्रेष्ठ भगवा-न् कृष्णके वचन सत्य होय, मैं आजसे आपके संगही रहंगा। वैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर अक्वत्थामाने महा-त्मा पाण्डवींकी मणि दे दयी और आप मलीन होकर सबके देखते देखते वनको चले गये। (१९--२०)

पाण्डव लोग भी अध्वत्थामाके संग उत्पन्न हुई मणि लेकर श्रीकृष्ण, वेद-व्यास और महाम्रुनि नारदकी आगे करके शीघ्रता यशस्त्रिनी द्रौपदीके गए। (२१---२२)

श्रीवैश्वम्पायन मुनि बोले,तब पुरुष-सिंह पाण्डन घोडोंको नायके समान दौडते हुए कृष्णके सहित डेरोंको चले गए, वहां जाकर सब लोग रथसे उतरे मरी दीपदीको शोकसे

परिवार्ष व्यतिष्ठन्त पाण्डवाः सहकेशावाः ॥ २५ ॥
ततो राज्ञाऽभ्यतुज्ञातो भीमसेनो महाबळः ॥
पददौ तं मणिं दिव्यं वचनं चेद्रमञ्जवीत ॥ २६ ॥
अयं भद्रे तव मणिः पुत्रहन्तुर्ज्ञिताः स ते ।
उत्तिष्ठ शोकपुत्युक्तय साज्रधममनुस्मर ॥ २७ ॥
प्रयाणे वासुदेवस्य शार्थधमसिते क्षणे ।
यान्युक्तानि त्वया भीरु वाक्यानि मधुषातिनि॥२८॥
नैव मे पतयः सन्ति न पुत्रा आतरो न च ।
न वै त्वमिति गोविन्द शामिच्छिति राजनि ॥ २९ ॥
उक्तवस्रसि तीत्राणि वाक्यानि पुरुषोक्तमम् ।
क्षत्रधमानुरूपाणि तानि संस्मुत्रमहिस ॥ ३० ॥
हतो दुर्योधमा पापो राज्यस्य परिपत्थिकः ।
दुःशासनस्य किष्ठं पीतं विस्कुरतो मया ॥ ३१ ॥
वेरस्य गतमान्छण्यं न स्म वाच्या विवक्षताम् ।
कित्वा सुक्तो द्रोणपुत्रो ब्राह्मण्याद्गीरवेण च ॥ ३२ ॥
यशोऽस्य पतितं देवि शरीरं त्ववशेषितम् ।
व्याकुळ देखा परन्तु द्राँपदी हन्दें देखकर प्रसन्न होगई। तव शीकुण्यके सहित
पांचा पाण्डव द्रावरीके चारां और वैठ
वाये, तव राजाकी आज्ञासे महावर्ज भीन्सि करेने वह मणी द्रीपदीके दी और
देत वचन कहे थे, कि सेरे पति, पुत्र औ
त्यासनका केसे पति, पुत्र औ
वस सम सर गण्,जिस समय महाराज्ञः
श्री ह कमल नयनी ! जिस समय
मधुदैस्यके नाश्च करनेवाले शीकुण्य द्वैतवनसे महाराजसे विदा होकर चले
थे, तस समय तुमने कैसे कैसे कठोर

वचन कहे थे, कि मेरे पति, पुत्र और तुम सब पर गए,जिस समय महाराजने शान्ति करनेकी इच्छा की थी तब तम इनसे कैसे कैसे कठोर बचन कहे थे! वे सब क्षत्राणियोंके घर्मके अनुसार ही थे, क्या तुम उन्हें कुछ भी नहीं स्मरण करती हो ? हमारा राज्य छीननेवाला पापी दुर्योधन मारा गया, मैंने तडफते इए पापी दुःशासनका रुधिर पिया, वैर समाप्त होगया; अब तुम पाण्डवोंसे कुछ नहीं कह सक्ती हो, अञ्चत्थामाको जी-तकर ब्राह्मण और गुरु समझकर जीता

वियोजितश्च मणिना श्रांशितश्चायुधं सुवि ॥ ३३ ॥
द्रौपद्युवाच—कंवलानृण्यमाप्ताऽधि गुरुपुत्रो गुरुपेम ।
श्विरस्येतं मणिं राजा प्रतिबद्यातु भारत ॥ ३४ ॥
तं यहित्वा ततो राजा शिरस्येवाकरोत्तदा ।
गुरोरुच्छिष्टामित्येव द्रौपद्या वचनादिप ॥ ३५ ॥
ततो दिन्यं मणिवरं शिरसा धारयन्त्रसुः ।
शुशुभे स तदा राजा सचंद्र इव पर्वतः ॥ ३६ ॥
उत्तस्यौ पुत्रशोकात्ती ततः कृष्णा प्रनिक्ति ॥ ३६ ॥
वत्तस्यौ पुत्रशोकात्ती ततः कृष्णा प्रनिक्ति ॥ ३७ ॥ [७५१]
श्विश्रीमहामारते शवसाहरूयां संहितायां वैवासिक्यां सौक्षिकपर्यान्तर्गतप्रियो पर्वाण

द्रौपदीसांस्वनायां पोडकोऽध्यायः ॥ १६॥

वैश्वम्यायन उत्राच- इतेषु सर्वसैन्येषु सौप्तिके तै रथैस्त्रिभिः।

शोचन्युषिष्ठिरो राजा दाशाईमिदमद्रवीत् ॥१॥

कथं नु कृष्ण पापेन क्षुद्रेणाकृतकर्मणा।

द्रौणिना निहताः सर्वे मम पुत्रा महारथाः ॥२॥

तथा कृतास्रविकान्ता सहस्रशतयोधिनः।

द्रुपदस्यात्मजाश्चेव द्रोणपुत्रेण पातिताः ॥३॥

होगया, केवल शरीरही वाकी रह गया है, उससे मणि और अस्त्र छीन लिये।(२७—३३)

द्रौपदी बोली, अब में अरिण होगई
गुरुपुत्र तो हमारे गुरुही हैं, अब इस
मणिको राजा अपने शिरमें वांघे। महा
राज युधिष्ठिरने उस मणिको गुरुका
प्रसाद मानकर द्रौपदीकी हठसे अपने
शिरमें बांघा, उस समय उस मणिसे
राजा ऐसे शोमित हुए, जैसे चन्द्रमाके
सहित पर्वत, तब द्रौपदी शोकसे व्याकुल होकर उठीं और महावाह युधिष्ठिरने

श्रीकृष्णसे कुशल पूंछी। (१४-२७)
सीप्तिकपर्वमें सोखह अध्याय समातः। (७५१]
सीप्तिक पर्वमें सतरह अध्याय।
श्रीवैश्वम्पायन मुनि बोले, जब इस
प्रकार तीनों नीरोंने रात्रिको सोते हुए
युधिष्ठिरकी सब सेनाको मारडाला, तब श्रोच करते हुए राजा युधिष्ठिर कृष्णसे बोले, हे कृष्ण! पापी श्लुद्र दुरात्मा अञ्चत्यामाने हमारे सब महारथ पुत्रोंको कैसे मारडाला? सब श्वस्त्रीवद्याके जा-ननेवाले एकले ही सेकडों और सहस्रों वीरोंसे लडनेवाले द्वपदके सब पुत्रोंको

यस्य द्रोणो महेष्वासो न पादादाहवे झुलम्। निजन्ने रथिनां श्रेष्ठं घृष्टद्युम्नं कथं नु सः किं नु तेन कृतं कर्म तथायुक्तं नरर्षभ। यदेकः समरे सर्वानवधीक्षो गुरोः सुतः श्रीमगवानुवाच- नृनं स देवदेवानामीश्वरेश्वरमञ्ययम् । जगाम दारणं द्रौणिरेकस्तेनावधीद्वहन प्रसन्नो हि महादेवो द्याद्मरतामपि। वीर्यं च गिरिशो दद्याचेनेन्द्रमपि शातयेत् वेदाहं हि महादेवं तत्त्वेन भरतर्षभ। यानि चास्य प्राणानि कर्माणि विविधानि च ॥ ८॥ आदिरेष हि भूतानां मध्यमन्तश्च भारत। विचेष्टते जगचेदं सर्वमस्यैव कर्मणा एवं सिसुक्षर्भृतानि ददर्श प्रथमं विसुः। पितामहोऽब्रवीचैनं भृतानि सुज मा चिरम् हरिकेशस्तथेत्युक्तवा भूतानां दोषद्धिंवान्। दीर्धकालं तपस्तेषे मन्नोऽम्भसि महातपाः

कैसे अवदत्थामाने मारडाला ? देखो, जिस महारथको युद्धमें खडा देखकर महाधनुषधारी द्रोणाचार्य युद्धसे हट जाते थे, उस बीर धृष्टशुम्नको एकले अक्वत्थामाने कैसे मार डाला १ हे पुरुष-सिंह ! हमारे गुरुपुत्र अञ्चत्यामाने कौनसा कर्म किया था, जिससे एकलेही ने सबको मारडाला। (१-५)

श्रीकृष्ण बोले, हमे यह निश्रय है कि अञ्चत्थामा निश्चय ही देवतोंके देवता, ईश्वरके ईश्वर, सनातन शिवको शरण गये होंगे, इसीसे उन्होंने सबको मारहाला, शिव प्रसन्न होकर मनुष्यको

अमर कर सकते हैं और ऐसा पराक्रम दे सक्ते हैं, जिससे मनुष्य इन्द्रको भी मार सक्ता है,हम देवतोंके देवता शिवके अनेक पुराने कर्म जानते हैं। हे भारत ! वह जगत्के आदि, अन्त और मध्य हैं, उनकी शक्तिसे सब जगत अपना अपना काम करता है। जिस समय भगवान ब्रह्मा पहिले सृष्टि बनाने लंगे, उन्होंने भी शिवके ऐसे ही प्रमान देखे और शिवसे कहा कि तुम सृष्टि बनाओ, तब शिवने कहा कि अच्छा, और फिर ब्रह्माको जगतके दोष दिखलाये, तब

सुमहान्तं ततः कालं प्रतीक्ष्यैनं पितामहः। स्रष्टारं सर्वभूतानां ससर्जं मनसाऽपरम् 11 88 11 सोऽब्रवीत्पितरं हट्टा गिरिशं सुप्तमंभसि । यदि से नाग्रजोऽस्त्यन्यस्ततः स्रध्याम्यहं प्रजाः॥१३॥ तमत्रवीत्पिता नास्ति त्वद्न्यः पुरुषोऽग्रजः। स्थाणुरेष जले मग्नो विस्नव्धः क्रुरु वैकृतम् 118811 भूतान्यन्वसृजत्सप्त दक्षादींस्तु प्रजापतीन् । यैरिमं व्यक्रोत्सर्वं भूतग्रामं चतुर्विधम् 11 86 11 ताः सृष्टमात्राः श्चिषिताः प्रजाः सर्वाः प्रजापतिम्। विभक्षयिषवो राजन्सहसा प्राद्रवंस्तदा स भक्ष्यमाणञ्जाणार्थी पितामहसुपाद्रवत् । आभ्यो मां भगवांस्त्रातु वृत्तिरासां विधीयताम्॥१७॥ . ततस्ताभ्यो ददावन्नमोषधीः स्थावराणि च । जङ्गमानि च भूतानि दुर्वलानि वलीयसाम् ॥ १८॥ विहितालाः प्रजास्तास्तु जग्मुः सृष्टा यथागतम्। ततो वृष्ट्रिरे राजन्त्रीतिमत्यः ख्योनिषु 11 28 11

इवकर तपस्या करी इस प्रकार बहुत दिनतक तपस्या करते करते त्रम्हा जगत्-कर्ता शिवका मार्ग देखते रहे, फिर उन्होंने अपने मनसे एक मनुष्य उत्पन्न

स्वार तपस्या करी ह स्वकर तपस्या करी ह दिनतक तपस्या करी ह किया । (६-१२) मिता हुआ देख उस स्वकर तपस्या करी ह किया । (६-१२) मिता हुआ देख उस स्वकर तपस्या करी ह किया । (६-१२) मिता हुआ देख उस स्वक्त तपस्या करी ह किया । (६-१२) मिता हुआ देख उस स्वक्त तपस्या करी ह किया । (६-१२) मिता हुआ देख उस स्वक्त तपस्या करी ह किया । (६-१२) मिता हुआ देख उस स्वक्त तपस्या करी ह स्वक्त तपस्या करी ह किया । (६-१२) ब्रह्माने अपने पिता शिवको जलमें सोता हुआ देख उस पुरुषसे कहा यदि मुझसे पहिले कोई उत्पन्न न हुआ हो ता में सृष्टि रचूं, उस पुरुषने कहा कि, तुम विश्वास रक्खो तुमसे पहिले उत्पन्न हुआ कोई नहीं है, ये जो जलमें सोते हैं सो सनातन पुरुष हैं, अब तुम प्रजा उत्पन्न करो। (१३-१४)

तब ब्रह्माने दक्ष प्रजापति आदि लेकर सब जगत् बनाया, फिर स्वेदज, अण्डल, राद्धिल और जरायुल ये चार प्रकारकी सृष्टि रची, हे राजन् ! यह सब प्रजा उत्पन्न होते ही भूखसे न्याकुरु होकर दक्ष प्रजापतिको खाने दौडी।दक्ष प्रजापति अपनी रक्षाके लिये, ब्रह्माके पीछे दौडे और कहा कि, हे भगवन् ! आप इनसे हमारी रक्षा कीजिये और इन्हें खानेको कुछ दीजिये, तब ब्रह्माने उन्हें अन और खावर औषधी दी.और चलनेवालेमें यह नियम कर दिया कि प्रताम (१० सोविक्यवं।

प्रताम विष्टु तु तुष्ट लोकग्रुराविष ।

उदितिष्ठळालाज्येष्ठः प्रजाश्रेमा दृदर्शे सः ॥ २० ॥

यहुरूपाः प्रजा सृष्टा विष्टु स्व चाप्यविष्यत ॥ २१ ॥

तत्प्रविद्धं तथा भूमो तथैव प्रव्यतिष्ठत ।

तसुवाचाव्ययो ब्रह्मा वचोमिः शमयत्रिव ॥ २२ ॥

र्विक्रमर्थ चेदसुत्पाय लिङ्गं स्वो प्रयतिष्ठत ।

तमुवाचाव्ययो ब्रह्मा वचोमिः शमयत्रिव ॥ २२ ॥

र्विक्रमर्थ चेदसुत्पाय लिङ्गं स्वो प्रविश्वतम् ॥ २३ ॥

सोऽब्रवीज्ञातसंरम्भस्तथा लोकग्रहर्गुरुम् ।

प्रजाः सृष्टाः परेणेमाः किं करिष्याभ्यनेन वै ॥ २४ ॥

तपसाऽधिगतं चालं प्रजार्थ मे पितासह ।

अविष्यः परिवत्तरं त्ययेवं सततं प्रजाः ॥ २६ ॥

एवसुक्त्वा स सकोषो जामा विमना भवः ।

गिरेर्सुजवतः पादं तपस्तग्नं महानपः ॥२६॥ [७७७]

श्वीभगवानुवाच—ततो देवयुगेन्दतीते देवा वै समकल्पयय् ।

हे राजन् ! तव वह प्रजा अत्र लेकर अपने घरको चली गर्धः तभीसे अपनी जावियोंमें प्रेम वटने लगा। जव यह सब जगत् उत्पन्न होगया तव समकल्पय् ।

स्वातत पुरुप भी जलते उठ पैटे, और सब प्रजाबो देखने लगे। सब जमत्के अपने वित्रको चले एप्योमें परक सम्मा कर्हणा ! तुमने तपसे अपने लिनक स्वात विवा के स्वात पर्वतपर तप कर्मक चले गए। (२१–२६) [७७७]

सीविक्यवर्थे वत्यत्व ल्याव व्यापः ।

श्वीक्ष्यव्यत्व वित्रत्व प्रवा । स्वर्वतीत चला हत्य व्याव व्याव ।

श्वीक्ष्यव्यत्व वित्रत्व व्याव व्याव ।

सीविक्यवर्थे वत्यत्व व्याव व्याव ।

श्वीक्ष्यव्यत्व वित्रत्व व्याव व्याव ।

श्वीक्ष्यव्यत्व व्यव्याव ।

सीविक्यवर्थे वत्यत्व व्यव्याव ।

श्वीक्ष्यव्य वित् चुका, तब देवतींन व्यव्यव्य अव्यव्यव ।

66666666666666666	96666666666666666666666666666666666666			
यज्ञं वेद्रमाणेन विधि	वेवराष्ट्रमीप्सवा ॥१॥			
कल्पयामासुरथ ते साधनानि हवींषि च !				
भागाही देवताश्चेव यज्ञियं द्रव्यमेव च ॥२॥				
ता वै रुद्रमजानंस्यो याथातथ्येन देवताः।				
माकल्पयन्त देवस्य र				
सोऽकल्प्यमाने भागे तु कृत्तिवासा मखेऽप्ररैः।				
ततः साधनमन्बिच्छ				
लोकयज्ञः क्रियायज्ञो				
पश्चभूतन्यज्ञश्च जज्ञे	सर्वेमिदं जगत् ॥५॥ 🖁			
लोकपज्ञैन्यज्ञैश्च कपर	र्दी विद्धे धनुः।			
धनुः सृष्टमभूत्तस्य प	श्रकिष्कुप्रमाणतः ॥६॥ 🦹			
वषर्कारोऽभवज्ज्या ह	रु धनुषस्तस्य भारत ।			
यज्ञाङ्गानि च चत्वारि	तस्य संनहनेऽभवन् ॥७॥			
ततः कुद्धो महादेवस्त	दुपादाय कार्भुकम् । 🥻			
आजगामाथ तत्रैव यत्र देवाः समीजिरे ॥८॥				
तमात्तकार्मुकं दक्षा ब्रह्मचारिणमन्ययम्।				
विष्यं पृथिवी देवी पर्वताश्च चकारिपरे ॥ १॥ 🥻				
न ववी पवनश्चेव नाग्निर्ज्ञाल वैश्वितः।				
व्यम्रमचापि संविग्नं दिवि नक्षत्रमण्डलम् ॥ १०॥				
विधिपूर्वक यज्ञोंको	यज्ञ और नृयज्ञसे पांच हाथका धनुष			
नुसार ही यज्ञकी सा-	वनाया। हे भारत उस घनुषका रोदा			
। लेने योग्य देवतोंको	वट्पकार हुआ और सब यज्ञकी सामग्रीसे			
यथार्थ रूपसे शिवको	उसे पुष्ट किया, तब महादेव क्रोध करके			
(सलिये उन्होंने मग्-	उस धनुषको लेकर उस स्थानपर आये,			
न दिया, तब शिवने जहां सब देवता यज्ञ कर रहे थे। ब्रह्मचारी				
हिले भनुप बनाया,	सनातन शिवको घतुप लिये देख पृथ्वी			
क्रियायज्ञ, सनातन	और पर्वत कांपने लगे, वायु चलता			
यज्ञ और नृयज्ञ बना-	चलता बन्द होगया, आग जलती			
ात् बनाया, फिर लोक-	जलती बुझ गई, आकाशमें तारे और			
######################################				

वेदोंके प्रमाणसे विधिपूर्वक यज्ञोंको बनाया, उनके अनुसार ही यज्ञकी सा-मग्री भी और भाग छेने योग्य देवतोंको बनाया, परन्तु वे यथार्थ रूपसे शिवको नहीं जानते थे, इसिंठिये उन्होंने मग-वान शिवका भाग न दिया, तब शिवने कोघ करके पहिले धतुप बनाया, फिर लोक यज्ञ, क्रियायज्ञ, सनातन गृहयज्ञ, पश्चभृत यज्ञ और नृयज्ञ बना-

न बभौ भास्करश्चापि सोमः श्रीमुक्तमण्डलः। तिमिरेणाकुलं सर्वमाकाशं चामवद्धतम् 11 88 11 अभिभृतास्ततो देवा विषयान्न प्रजानिरे। न प्रत्यभाच यज्ञः स देवतास्त्रीसरे तथा 11 83 11 ततः स यज्ञं विव्याध रौद्रेण हृदि पत्रिणा। अपकान्तस्ततो यज्ञो सृगो भूत्वा सपावकः स त तेनैव रूपेण दिव्यं प्राप्य व्यराजत । अन्वीयमानो रुद्रेण युधिष्ठिर नभस्तले 11 88 11 अपकान्ते ततो यशे संज्ञानप्रसभातसुरात्। नष्टसंज्ञेषु देवेषु न प्राज्ञायत किंचन 11 84 11 त्रयम्बकः सवितुर्बोह् भगस्य नयने तथा। पूष्पक्ष दशनान् ऋद्धो धनुष्कोट्या व्यशातयत्॥१६॥ प्राद्रवन्त ततो देवा यज्ञाङ्गानि च सर्वेशः। केचित्तत्रैव घूर्णन्तो गतासव इवाभवन् स तु विद्राव्य तत्सर्वे शितिकण्ठोऽवहस्य च। अवष्टभ्य धनुष्कोटिं रुरोध विवुधांस्ततः ततो वागमरैहक्ता इयां तस्य धनुषोऽच्छिनत्। अथ तत्सहसा राजंश्छित्रज्यं विस्फुरद्धनुः ततो विधनुषं देवा देवश्रेष्ठमुपागमन्। शरणं सह यज्ञेन प्रसादं चाकरोत्प्रशः 11 05 11

नक्षत्र घूमने लगे, सर्थ और चन्द्रमाका मण्डल अस्त होगया, जगत् और आ-काश अन्धकारसे भर गया, देवता और सब प्राणी घवडाने लगे। सब देवता घवडा गए, तब शिवने उस यझ के हृदयमें एक बाण मारा, तब यझ और अग्नि हिर्ण बनकर भाग गये, श्चिवभी उस तेजसे प्रकाशित होने लगे, और आकाशमें यझको हुंढने लगे। जब यज्ञ नष्ट होगया, तब सब देवता घवडाने लगे। तब शिवने कोच करके धनुषके कोनेसे सविताके हाथ, भगके नेत्र और प्रशके दांत तोड डाले, तब सब देवता और यज्ञके अङ्ग इघर उघरको माग गये; कोई वहीं मुरदेके समान गिरपडे, तब शिवने देवताँको भागते देख धनुषके कोनेसे सबको रोक दिया, तब देवताँने अपने बचनने इस धनुषके रोदेको

ततः प्रसन्नो भगवान् स्थाप्य कोपं जलाश्ये ।

सजलं पावको भृत्वा शोषयत्यनिशं प्रभो ॥ २१ ॥

भगस्य नपने चैव बाह् च सवितुस्तथा ।

प्रादात्पृष्णश्च दशनान्युनर्पज्ञांश्च पाण्डव ॥ २२ ॥

ततः सुस्थमिदं सर्वं वभूव युनरेव हि ।

सर्वाणि च हर्वीष्यस्य देवा भागमकल्पयन् ॥ २३ ॥

तस्ति कुद्धेऽभवत्सर्वमसुस्थं सुवनं प्रभो ।

प्रसन्ने च युनः सुस्थं प्रसन्नोऽस्य च वीर्यवान् ॥ २४ ॥

ततस्ते निहताः सर्वे तव युत्रा महारथाः ।

अन्ये च बहवः शुराः पांचालस्य पदानुगाः ॥ २५ ॥

न तन्मनसि कर्त्तव्यं न च तद् द्रौणिना कृतम् ।

महादेवपसादेन कुरु कार्यमनन्तरम् ॥ २६॥ (८०३)

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयातिक्यां सातिकपर्यान्तर्गत ऐपीके पर्वणि अष्टानुकोऽध्यायः॥ १८॥

ऐषीकं पर्व समाप्तम् । सौष्तिकं ऐषीकं च पर्वद्वयिमदं संलग्नम् ।

काट दिया तब सच देवता यज्ञकी संगर्मे लेकर धनुपरहित शिवकी शरणमें गपे।(१—२०)

तब शिवने भी उनके ऊपर कृपाकर दी तब भगवान् शिवने अपने कोपको तलावमें गिराय दिया, वहीं क्रोध अव अग्निरूप होकर जलको सुखाता है, शिवने फिर प्रसन्न होकर मगको नेत्र, सविताको हाथ और पूपाका दांत दे दिये। और फिर जगतमें यज्ञ होने लगे। उसी दिनसे सब जगत् सावधान होगया, तमीसे देवतोंने सव यज्ञोंमें शिवका माग दे दिया। (२१-२३)

हे राजन् शिवहीके कोधसे यह सब नाश हुआ और उनहीकी प्रसन्नदासे सुख होगा, इसीसे तुम्हारे सब महारथ पुत्र और साथियोंसहित घृष्टशुद्ध मारे गए। आप उस कर्मको अञ्चल्यामाका किया न मानिये, यह सब शिवकी छुपासे हुआ है, अब आगे जो कुछ काम हो सो कीजिये। (२४—२६) [८०३]

सौष्तिक पर्वमें अठारह अध्याय समास । ऐपीक और सौद्धिक पर्व समास ।

~~~~

अस्यानन्तरं स्त्रीपर्व भविष्यति तस्यायमाद्यः श्लोकः । जनमेजय उवाच-हते दुर्योधने चैव हते सैन्ये च सर्वदाः । धृतराष्ट्रो महाराज श्रुत्वा किमकरोन्मुने ॥ १॥

आदितः श्लोक संख्या--

सर्वयोग ५७२७४



अध्याय

विषय

ā8

अध्याय

विषय

gg

भयभीत १ अभ्यत्थामाप्रसृतिका होके रणभूमिसे अलग जाना, धृतराष्ट्रकां आक्षेप ।

धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा अरवत्थामात्रभृतिका रात्रिके वटवृक्षके तले निवास वर्णन ।

उल्लेक द्वारा सोते हुए कीवाँका मरना देखके अध्यत्थामाका निद्रित शञ्ज पाण्डव तथा पाञ्चालोंको मारनेका विचार करना ।

२-- ३ अक्वत्थामाके अभिप्रायमें क्रवाचार्यकी असम्मति, क्रवाचार्य और कृतवर्मीके समीप अञ्बत्धामाके वचन १ १

The consequences of the c ४ कपाचार्य और अक्वत्थामाकी निज निज मत स्थापित करनेके लिये उत्तम युक्तिपूर्ण वक्तता और तीनो महाराधियोंका रांत्रिके समय पाण्डवोंके शिविरमें जाना ।

५ अञ्चत्थामाका शिबिर द्वारपर जाके यहाभूत देखकर चिन्ता करके महादेवकी उपासना करना, देवी और प्रकट होके अश्वत्थामाको देना ।

६ अङ्गरथामाका शिविरमें प्रवेश करना और शिविरके द्वारपर कुपाचार्य तथा कृतवर्माका स्थित होना,अक्वत्थामा का भृष्टशुस्रके डेरेमें जाना, अक्वत्थामाः के हाथसे घृष्ट्यस्रमभृति तथा बची हुई सेनाके सब प्ररुषोंका मारा जाना। २९

७-८ अक्वत्थामादि तीनों महारथों का ग्रुग्रर्ष दुर्योधनके निकट जाना और उनकी दुरवस्था देखके कुपाचार्यका आक्षेप करना।

९ दुर्योधनको पृथ्वीमें पडे देखके अञ्चत्थामाका विलाप करके शिविरके बीच षृष्टशुम्नादि शत्रुओंके मारनेका सम्बाद कहना और अद्दरशामाकी प्रशंसा करके दुर्योधनका प्राण त्यागना । ६०

१० ऐषिक पर्वारम्भ, धृष्टद्युस्नके सारथिके मुखसे द्रौपदीपुत्रप्रमृति खजनों को मृत्युका सम्वाद सुनके युधिष्टिरका विलाप करना ।

११ नकुलके मुखसे प्रत्रादिका मरना सनके द्वौपदीका विलाप करके यधिष्ठि-

प्रष्र

रसे अञ्चत्थामाको मारनेके लिये अन-रोघ करनां, तथा द्रौपदीके अनुरोधसे भीमसेनका अञ्चत्थामाको मारनेके लिये ९७

१२ कृष्णका युधिष्ठिरका अस्वत्यामा को मारनेके लिये उचत, मीमसेनकी रक्षाके लिये अनुरोध करना और उसही प्रसङ्घमें ब्रह्मशिरनाम असका उपाख्यान 95

अध्याय विषय

रसे अक्ष्यत्थामाको मारनेके लिये अ
रोध करना, तथा द्रौपदीके अनुरो
भीमसेनका अक्ष्यत्थामाको मारनेके।
जाना ।
१२ कृष्णका युधिष्ठिरका अक्ष्यत्थ
को मारनेके लिये उत्थत, मीमसेन
रक्षाके लिये अनुरोध करना और उ
प्रसङ्गमें ब्रह्मशिरनाम अस्कृ जाराख्य
कहना ।
१३ युधिष्ठिर, कृष्ण और अर्जुन
एक रथपर चढके भीमसेनके पास जा
अक्ष्यत्थामाका पाण्डवोंको मारनेके।
ब्रह्मशिरनाम अस्त्र चलाना,अक्ष्यत्था
के अस्त्रको निवारण करनेके लिये अ
नका ब्रह्मशिर अस्त्र छोडना, न्यासदे
अनुरोध से अक्ष्यत्थामाका पाण्डवें
अनुरोध से अक्ष्यत्थामाका पाण्डवें १३ युविष्टिर, कृष्ण और अर्जुनका एक रथपर चढके भीमसेनके पास जाना. अरवत्थामाका पाण्डवींको मारनेके लिये ब्रह्मशिरनाम अस्त्र चलाना,अञ्चत्यामाः के असको निवारण करनेके लिये अर्जु-नका मक्षशिर अस छोडना, व्यासदेवके अत्ररोषसे अरवत्थामाका पाण्डवोंको

ŧ

ãã विषय अध्याय

अपने सिरकी माण देनेमें सम्मत होकर ब्रह्मश्चिर असको उत्तराके गर्भमें छो-हना।

१४-१५ अञ्चत्थामानं सङ्ग कृष्णकी परीक्षितके जन्मादि विषयक वार्चीलाप, अञ्बत्धामाके विषयमें कृष्णका शाप, अञ्चन्थामासे मणि लेकर कृष्णादिका द्वौपदीके समीप जाके, उसे घीरज देना, और उस मणिको युधिष्ठिरके सिरपर वारण करना ।

१६-१८ अज्बत्थामाके हाथसे पाञ्चालादि वीरोंके विनाध विषयमें युधिष्टिर और कृष्णकी वात्तीलाप तथा महादेवका माहात्म्य वर्णन देवताओंके पक्षमें महादेवका फ़ुद्ध होके प्रसन्ध होना, सीप्तिक पर्वकी समाप्ति ।





## [स्रीपर्व १]

# HEIGHTON

भाषा-भाष्य-समेत संपादक श्रीपाद दामोदर सातवरोकर, स्वाध्याय मंडरू, श्रींघ जि. साताग

### छपकर तैध्यार है।

- १ अ।दिएर्त्र । पृष्ठ संख्या ११२५. मूच्य म. आ. से ६) है.
- 🌂 🍕 📢 क्र्राप्त्रं,। पृष्ठ संख्या ३५६. मृत्य म. आ. से२) रु.
- ३ विन्पर्व । पृष्ट संख्या १५३८ मृत्य म. आ. से ८) रु.
- ४ विराटपर्व । पृष्ठ संख्या ३०६ मूल्य. म. आ. से १॥ ) रु.
- प्रद्योगपूर्व। पृष्ट संख्या ९५३ मृत्यः म. आ. से. ५ ) क
- ६ श्रीत्मपूर्व । पृष्ट संस्था ८०० मध्य म. आ.से ४) क
- ७ होपापर्व। पृष्ठ संख्या १३६४ मृत्य म० आ० से आ) र.
- 🔏 ्र प्रिम् र । पृष्ठ संस्था ६३७ म्. म० आ० से ३।। ) ह.

### रि पद्मभारतकी समालीचना।

मंत्री— स्वाध्याय मंडल, औंघ, (जि. सातारा)





श्री-महर्षि-व्यास-प्रणीत

## महाभारत।

(११) स्त्रीपर्व।

( भाषाभाष्य समेत )

सम्पादक और प्रकाशक श्रीपाद दामोदर सातवळेकर स्वाध्यायमण्डल, औंध (जि० साताराः)

> संवत् १९८६, शक १८५१, सन १९२९.







### उत्तम राजा!

राजा हि यः स्थितप्रज्ञः खयं दोषानवेक्षते । देशकालविभागं च परं श्रेयः स विन्दति ॥ स्तीपर्वे अ०१३।६

राज देशक '' जो राजा अपनी बुद्धि देखता है, जगत् में उसीका ६ TO THE TOTAL PROPERTY OF THE P " जो राजा अपनी बुद्धिको स्थिर करके देश और कालके अनुसार सब दोपोंको

भुद्रक तथा प्रकाशः —श्रीपाद दामोदर सातवळेकर, स्वाध्याय मंडलः; मारतसुद्रणालय भौध ( जि. सातारा )



696S.D.

<u>REFERRATION CONTRACTOR CO</u>

#### श्रीमहर्षिच्यासप्रणीतम् ।

### महा भारतम्।

#### स्वीपर्व ।

श्रीगणेद्याय नंमः । श्रीवेद्व्यासाय नमः ।

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुद्दीरयेत् ॥१॥
जनमेजय उवाव-हते दुर्योधने चैव हते सैन्ये च सर्वदाः।
धृतराष्ट्रो महाराज श्रुत्वा किमकरोन्मुने ॥१॥
तथैव कौरवो राजा धर्मधुत्रो महामनाः।
कृपप्रभृतयश्चैव किमकुर्वत ते त्रयः ॥२॥
अश्वत्थान्नः श्रुतं कर्म द्यापादन्योन्यकारितात्।
धृतान्तमुत्तरं बृहि यदभाषत सञ्जयः ॥३॥

स्त्री पर्दमें प्रथम अध्याय ।

नारायण, नरोत्तम नर और देवी सरखवीको नमस्कार करके जय कीर्वन करना चाहिये। (१)

महाराज जनमेजय बोले, हे वैश-म्पायन मुने ! जिस समय राजा दुर्यो-धन सब सेनाके सहित मारे ग्ये, तब महाराज प्रतराष्ट्रने सुनकर क्या किया!
महामनखी कुरुकुलराज महाराज युधिछिरने क्या किया? और कुपाचार्य,
अक्तत्थामा, और कृतवर्याने क्या किया?
हमने यह सुना कि कुष्णने अक्तत्थामाको
भाष दिया था, फिर सञ्जयने राजासे क्या
कहा सो हमसे कहिये ?। (१-३)

वैशम्यायन उवाच-हते पुत्रशते दीनं छिन्नशाखामिव द्वुमम् । पुत्रशोकाभिसन्तप्तं घृतराष्ट्रं महीपतिम् 11811 ध्यानसूकत्वमापन्नं चिन्तया समभिष्ठुतम् । अभिगम्य महाराज सञ्जयो वाक्यमब्रवीत् किं शोचिस महाराज नास्ति शोके सहायता। अक्षौहिण्यो हताश्राष्ट्री दश्चैव विशाम्पते निर्जनेयं वसुमती शून्या संप्रति केवला। नानादिरभ्यः समागम्य नानादेश्या नराधिपाः ॥ ७ ॥ सहैव तव पुत्रेण सर्वे वै निधनं गताः। पितृणां पुत्रपौत्राणां ज्ञानीनां सुद्धदां तथा । गुरूणां चानुपूर्व्येण प्रेतकार्याणि कारय वैश्वम्यायन उवाच-तच्छ्रुत्वाऽकरुणं वाक्यं पुत्रपौत्रवधार्दितः। पपात सुवि दुर्घषों वाताहत इव द्रुमः 11911 धृतराष्ट्र उवाच—हतपुत्रो हतामात्यो हतसर्वसुहुज्जनः। दुःखं नूनं भविष्यामि विचरन्पृथियीमिमाम् ॥ १० ॥ किं तु बन्धुविहीनस्य जीवितेन ममाच वै।

श्रीवैशम्यायन ग्रुनि चोले, हे महा-राज ! सौ पुत्रोंके मरनेसे राजा धतरा-ष्ट्रकी ऐसी दशा होगई जैसे शाखा कट-नेसे वृक्षकी। उस समय पुत्रशोकसे व्याकुल, चिन्तासे भरे राजा धृतराष्ट्रके पास जाकर सञ्जय वोले, हे महाराज ! शोक किसीकी सहायता नहीं करता. इसलिये आप क्यों शोक करते हैं ? देखो अठारह अक्षीहिणी सेना मारी गई, इस समय पृथ्वी मनुष्योंसे रहित होगई है, अब किसी ओर कुछ उत्साह नहीं दीखता, अनेक देशोंसे आये हुये राजा तुम्हारे पुत्रोंके सहित मारे गये.

आप डाठिये, गुरु, बेटे, पीते, जाती और मित्रोंका प्रेतकर्भ कीजिये। (६-८)

श्रीवैशम्पायन मृति बोले, हे राजन - जनमेजय ! सञ्जयके ऐसे दया भरे वचन सुनकर अपने प्रत्र और पाँतांके शोकसे व्याकुल राजा घतराष्ट्र मूर्न्छित होकर पृथ्वीमें गिर गये, उस समय राजाकी ऐसी दशा होगई. जैसे वायुसे उखडे हुए वृक्षकी। (९)

राजा धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय । मेरे सव पुत्र, मन्त्री और मित्र मारे गये, अब मैं जीकर जगत्में केवल दुःख ही मोग्गा। अब मैं बन्धरहित होकर जी-

श्वाप हों।

श्वाप हों।

श्वप पहिणाः ॥ ११ ॥

हतराज्यो हतमन्युर्हतचक्षुश्च वै तथा ।

न भ्राजिष्ये महाप्राज्ञ क्षीणरिक्षमित्वां ग्रामन ॥ १२ ॥

न भ्राजिष्ये महाप्राज्ञ क्षीणरिक्षमित्वां ग्रामन ॥ १२ ॥

न भ्राने सुहृदां वानणं जामदण्नयस्य जल्पतः ।

नारदस्य च देवपेंः कृष्णद्वेपायनस्य च ॥ १३ ॥

सभामध्ये तु कृष्णेन यच्छ्रेपोऽभिहितं मम ।

अलं वैरेण ते राजन्युत्रः सङ्ग्रज्ञातामिति ॥ १४॥

तच्च वाक्ष्यमक्त्रत्वाऽहं भृत्रं तप्पामि दुर्मतिः ।

न हि श्रोताऽिम भीष्मस्य घर्मग्रुत्तं प्रभावितम्॥१५॥

दुर्योधनस्य च तथा वृष्यभस्येव नर्दतः ।

दुःशासनवधं श्रुत्वा कर्णस्य च विषय्यम् ॥ १६ ॥

द्रोणस्योपरागं च हृद्यं मे विदिधिते ।

न साराम्यास्मना किञ्चित्युरा सञ्ज्य दुष्कृतम् ॥१०॥

यस्येदं फलमयेह मया मृदेन सुरुत्ते ।

यस्येदं फलमयेह मया मृदेन सुरुत्ते ।

स्र क्या कर्रंगा भेरीहत समय ऐसी

दशा होगई है, जैसे पञ्च करनेसे वृदे

पश्चीकी । मेरा राज्य नष्ट होगया, आंख

जाती रहीं और सव वन्यु मी मारे गये,

अय वेजरहित सुयेक समान में अव

जीकर क्या कर्रंगा भेरी हत समय ऐसी

द्राग्वामन कर्षेत्र सम् कर्मो मेरे वचन कहे थे,

स्र सुससे जो समाने वीचमें नैठकर

श्रीकृष्णने कर्याण मरे वचन कहे थे,

स्र हुतके वचन नहीं सने, उन्होंने

स्र अप वेर मत कीजिये और अपने

स्र आप वेर मत कीजिये और अपने

स्र अपने कर्मम्य स्र मेरा क्र म्यानक फल

परिणामश्च वयसः सर्वबन्धुक्षयश्च मे 11 99 11 सुहृन्मित्रविनाशश्च दैवयोगादुपागतः । कोऽन्योऽस्ति दुःखिततरो मत्तोऽन्योहि पुमानसुवि॥२०॥ तन्ममाचैव पर्यन्तु पाण्डवाः संशितव्रताः । विवृतं ब्रह्मलेकस्य दीर्घमध्वानमास्थितम् 11 38 11 वैशम्पायन उवाच-तस्य लालप्यमानस्य बहुशोकं वितन्वतः। ज्ञोकापहं नरेन्द्रस्य सञ्जयो वाक्यमब्रवीत् ॥ २२ ॥ शोकं राजन्व्यपनुद श्रुतास्ते वेदनिश्चयाः । शास्त्रागमाश्च विविधा वृद्धेभ्यो चपसत्तम 11 33 11 सञ्जये पुत्रशोकार्ते यदृचुर्सुनयः पुरा । यथा यौवनजं दर्पमास्थिते ते सुते नृप 11 58 11 न त्वया सुहृद्ां वाक्यं ब्रुवतामवधारितम्। खार्थेश्च न कृतः कश्चिल्लुब्धेन फलगृद्धिना 11 39 11 असिनैवैकधारेण खबुद्या तु विचेष्टितम्। प्रायशोऽवृत्तसम्पन्नाः सततं पर्युपासिताः यस्य दुःशासनो मंत्री राघेयश्च दुरात्मवान् ।

परिणाम
सुहृत्मिः
सुहृत्मिः
सुहृत्मिः
सुहृत्मिः
सिन्मान
विवृतं ह्र
वैश्वम्पायन उनाच-तस्य ला
सार्थम्य
सुन्ने
स्क्रिये
स्कृते
स्मान
सुन्ने
स्कृते
सुन्ने
सुन्न
सुन्ने
सुन्ने भोगना पढ़ा। मुझे निश्रय है कि मैंने पहिले जन्मों में कुछ पाप किया था. उसीसे ब्रह्माने मुझे ऐसे ऐसे दुःख दिये। यह बुढापा, बन्धु और मित्रोंका नाश ये प्रारब्धहीसे सब दुःख इकट्टे होगये हैं; अब इस जगतमें हमारे समान दुःसी और कौन है ? इसारुथे त्रवधारी पाण्डंव आज ही हमें बहा लोकके बड़े रास्तेमें नाते देखें, अर्थात् हम इसही समय प्राण त्याग करने हैं। (१८-२१)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,इस प्रकारसे राजाको अनेक प्रकार रोते देख सञ्जय बोले, हे महाराज! आपने वृढाँके मुखसे

वेद और अनेक शास्त्र सुने हैं, इसलिये आप शोकको छोड दीजिए, हे राजन्! जैसे पुत्रके मरनेसे राजा सुझयको शोक हुआ था और उनको मुनियोंने समझा-या था, जैसे उनके पुत्रोंको अभिमान हुआ था, ऐसे ही तुम्हारे पुत्रको भी अभिमान हुआ था, आपने पहिले किसीकी वात नहीं मानी, केवल लोभमें पडके अन्याय करने लगे और अपना मी प्रयोजन कुछ सिद्ध न कर सके, केवल अत्यन्त तेजधारवाली तलवारके समान अपनी महातेज बुद्धिसे काम

राकुनिश्चैव दुष्टात्मा चित्रसेनश्च दुर्मतिः शल्यश्च येन वै सर्वं शल्यभूतं कृतं जगत्। क्करृद्धस्य भिष्मस्य गान्धार्या विदुरस्य च ॥ २८॥ द्रोणस्य च महाराज कृपस्य च शरद्वतः। क्रप्णस्य च महाबाहो नारदस्य च घीमतः ऋषीणां च तथाऽन्येषां व्यासस्यामिततेजसः। न कृतं तेन वचनं तव पुत्रेण भारत। न धर्मः सत्कृतः कश्चित्तित्वं युद्धमभीप्सता अल्पबुद्धिरहङ्कारी नित्यं युद्धिमिति ब्रुवन् । ऋरो दुर्मर्षणो नित्यमसन्तृष्टश्च वीर्यवान् 11 88 11 शृतवानिस मेघावी सलवांश्रेव निलदा। न मुखन्तीह्याः सन्तो बुद्धिमन्तो भवाह्याः ॥३२॥ न धर्मः सत्कृतः कश्चित्तव पुत्रेण मारिष। क्षपिताः क्षत्रियाः सर्वे शत्रूणां वर्षितं यदाः ॥ ३३॥ मध्यस्थो हि त्वमप्यासीन क्षमं किश्चिदुक्तवात्। दुर्धरेण त्वया भारस्तुलया न समं धृतः 11 28 11

आपके पुत्रने सदा ही मुखींको मन्त्री रक्खा, जिसका दुःश्वासन, मुखें राधापुत्र कर्ण, दुष्टात्मा शक्कनी, मन्त्री होय, उसका नाश क्यों न होता? ।जिस ने सब जगत्को जीता था, ऐसे श्रल्य, क्रुक्कलमें बढ़े भीष्म, गान्धारी, विदुर, कुपाचार्य, द्रोणाचार्य, महावाहु कृष्ण, बुद्धिमान नारद और अनन्त तेजस्वी च्यास आदि मुनियोंके वचन दुर्योधनने न माने, कभी किसी धर्मका आश्रय न लिया, केवल सदा युद्ध करनेहीकी इच्छा रक्खी, जैसे वायु तिनकोंको इधर उधर सच जन्तुओंको इधर उधर करता रहता है, दुर्योधन मूर्ख, अभिमानी केवल युद्ध करनेकी इच्छा करनेवाला, दुष्ट, क्षमाहीन. असन्तोषी और बलवान था। (२७-३१)

Nessescence econocean eco तुम विद्वान, बुद्धिमान और सदासे सत्यवादी हो, ऐसे बुद्धिमान मनुष्योंको कभी मोह नहीं होता। हे राजन् ! तुम्हारे पुत्रने धर्मका आदर नहीं किया, सब क्षत्रियोंका नाश कराया और शश्चनोंका यश बढा दिया, तम भी उस समय मध्यस्य थे, परन्तु कोई बात तुमने भी

आढावेव मनुष्येण वर्तितन्यं यथाक्षमम् । यथा नातीतमर्थं वै पश्चात्तापेन युज्यते 11 34 11 पुत्रगृद्ध्या त्वया राजन् प्रियं तस्य चिकीर्षितम् । पश्चात्तापिममं प्राप्तो न त्वं शोचित्रमईसि मधु यः केवलं हट्टा प्रपातं नानुपर्यति । स भ्रष्टो मधुलोभेन शोचत्येवं यथा भवान् ॥ ३७ ॥ अर्थान्न जोचन्प्राप्नोति न जोचन्विन्दते फलम् । न शोचन् श्रियमाञ्चोति न शोचन्विन्दते परम् ॥३८॥ स्वयमुत्पाद्यित्वाऽग्निं वस्त्रेण परिवेष्टयम् । दश्चमानो मनस्तापं अजते न स पण्डितः 11 39 11 स्वयैव सस्रतेनायं वाक्यवायुसमीरितः। लोभाज्येन च संसिक्तो ज्वलितः पार्थपावकः॥४०॥ तिखन समिद्धे पतिताः शलभा इव ते सुताः। तान्वै शराग्निनिर्देग्धान्न त्वं शोचितुमईसि 11 88 11 यबाश्रुपातात्कलिलं चद्नं वहसे नृप । अशास्त्रदृष्टमेतद्धि न प्रशंसन्ति पण्डिताः विस्फ्रलिङ्गा इव ह्येतान्दहन्ति किल मानवान् ।

समान बोझ न रक्खा, मनुष्यको ऐसा उचित है कि पहिले ही श्वक्तिके अनु-सार ऐसा विचारकरे, जिसमें आगे कोई दुःख न भोगना पडे। तुमने मी पुत्रके प्रेममें आकर दुर्योधनके अनुकूल ही वर्षांव किया, फिर अब आपित पडने-से क्यों शोक करते हो ? (३२-३६)

जो केवल शहत देखकर वृक्षपर चढ जाता है और अपने गिरनेका मय नहीं करता, वह वृक्षपरसे गिरकर तुम्हारे ही समान आपाचि मोगता है। शोचसे धन, बल, लक्ष्मी और मोक्ष सिद्ध नहीं होती। जो आप ही आग बनाकर पीछे कपडेसे ढकता है और पीछे जलनेसे ओच करता है, वह पण्डित नहीं कहाता तुमने अपने पुत्रको सङ्ग लेकर वचन रूपी वायुसे घौककर और लोमरूपी घी डालकर युधिष्टिररूपी अग्निको चैतन्य कर दिया, उस बढी हुई अग्निकी बाण-रूपी ज्वालामें तुम्हारे पुत्र पतङ्गिक समान जल गये, अब तुम उनका क्या योच करते हो ? अब जो तुम अपनी आंधुवांसे शरीरको मिगा रहे हो, यह ज्यवहार शास्त्रेस विरुद्ध है, पण्डित ऐसा

16

श्री क्षांपाय २ ]

श्री क्षांपाय २ वा क्षां हि मन्युं बुद्धया वे पारयात्मानमात्मना ॥ ४२ ॥
विदरों मृय एवाइ बुद्धिपूर्व परंतपः ॥ ४४ ॥
इति श्रीमहामारवे कावसाहरणं विहितायां वैपासिक्यां क्षांपविण जलप्रवानिकवर्यणः विद्वारा या ॥ १ ॥
विद्वारा मृय एवाइ बुद्धिपूर्व परंतपः ॥ ४४ ॥
इति श्रीमहामारवे कावसाहरणं विहितायां वैपासिक्यां क्षांपविण जलप्रवानिकवर्यणः ॥ १ ॥
वैद्यायाय उवाच तातोऽमृतस्मैवीक्येम्ह्रीद यन्युक्वपर्वभम् ॥
विच्रज्ञवीर्य विदुरों गदुवाच निवोध तत् ॥ १ ॥
विद्वार उवाच - उत्तिष्ठ राजिन्कि होषे धारयात्मानमात्मना ॥
एषा वे सर्वस्वानां लोकेश्वर परा गतिः ॥ २ ॥
सर्वे क्ष्यान्ता निचयाः पतनान्ताः समुक्त्र्य्याः ॥
संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं च जीवितम् ॥ ३ ॥
यदा शूरं च भीकं च यमः कर्षति भारत ।
तिक्तं न योत्स्यनित हि ते क्षत्रियाः क्षत्रियम् ॥ ४॥
अयुध्यमानो त्रियते युध्यमानश्र जीवितम् ॥ ३ ॥
विद्वर बोले, वे लोकनायः । हि वोले, विज्ञान्ति ।
विदुर बोले, वे लोकनायः । हि वोले, वे त्यान्ति विद्वर राजाको समुद्धाने लगे। (३७ — ४४)
जीवेशस्यायन मृति वोले, हे राजन् वात्में वित्तनी उच्चा कर्ताने विद्वर राजाको प्रमुत्ता ।
स्वत्वमें द्विता अप्याव ।
अत्रवेश ह्याय पर्ता विद्वरे राजाको प्रमुत्ता ।
तुष्ठ प्रताष्ट्रके पास आकर विद्वरे राजाके प्रमुत्त ।
तुष्य वाक्योंके समान जो कुळ कहा सो तुम मुनो, ये वचन विदुर्व राजाके प्रमुत्त ।
होनेके लिये कहा था। (१)

899999999999 कालं प्राप्य महाराज न कश्चिद्तिवर्तते 11 4 11 अभावादीनि भूतानि भावमध्यानि भारत । अभावनिधनान्येव तत्र का परिदेवना 11 4 11 न शोचन्मृतमन्वेति न शोचन्म्रियते नरः। एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमत्रशोचसि 11 9 11 कालः कर्षति भूतानि सर्वाणि विविधान्यत । न कालस्य प्रियः कश्चित्र द्वेष्यः क्रुरुसत्तम 11011 यथा वायुस्तृणाग्राणि संवर्तयति सर्वदाः। तथा कालवदां यान्ति भृतानि भरतर्षभ 11811 एकसार्थप्रयातानां सर्वेषां तत्र गामिनाम् । यस्य कालः प्रयालग्रे तत्र का परिदेवना न चाप्येतान्हतान्युद्धे राजन् शोचितुमईसि । प्रमाणं यदि ज्ञास्त्राणि गतास्ते परमां गतिम्॥ ११ ॥ सर्वे खाध्यायवन्तो हि सर्वे च चरितवताः। सर्वे चाभिमुखाः क्षीणास्तत्र का परिदेवना

जीता रहे, क्यों कि काल आनेसे सब ही मर जाते हैं। जगत्के पहिले ब्रह्म था, अन्तमें ब्रह्म रहेगा, केवल गीचमें शरीर भारण करता है, इसलिये सब शरीर नष्ट होनेवाले हैं। इसमें रोनेसे क्या होगा ? शोच करनेसे मरा हुआ नहीं मिलता और शोचनेसे कोई मर भी नहीं जाता, लोक इस ही प्रकार स्थित है, इसलिये आप शोच करने योग्य नहीं हैं। (४-७)

हे क्रुक्कलश्रेष्ठ ! काल जगत्में सब प्रकारके जीवोंका नाश करता है, उसका कोई मी मित्र और श्रृष्ठ नहीं है, जैसे वायु तिनकोंको इधर उधर उडाया कर-ता है वैसेही कालमी जीवोंको इधर उधर

घुमाया करता है, यद्यपि सब एक रीतिसे उत्पन्न होते हैं, परन्तु मरनेके समय जिस का काल पहिले आता है, वही मनुष्य पाहिले मरता है। इसलिये रोनेसे क्या होगा ? यदि आप जास्त्रोंको प्रमाण मानते हो, तो निश्रयही ये सब क्षत्री स्वर्गको गए इसालिये आप युद्धमें मरे हुए वीरों का ग्रोक न कीजिये, वे सब क्षत्री वेद पाठी, व्रतघारी थे; और सब युद्धमें सन्मुख मरे उनके लिये रोनेसे क्या लाम है ? सन अज्ञानसे यहां आए थे, और अज्ञानसे नष्ट होगए, तुम उनके कोई नहीं हो और वे तुम्हारे कोई नहीं थे,

| | 19866|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1986|| 1

अदर्शनादापतिताः प्रनश्चादर्शनं गताः । नैते तव न तेषां त्वं तत्र का परिदेवना 11 88 11 हतोऽपि लभते खर्ग हत्वा च लभते यदाः। उभयं नो बहुगुणं नास्ति निष्फलता रणे तेषां कामदुघान्लोकानिन्द्रः सङ्कल्पायिष्यति । इन्द्रस्यातिथयो होते भवन्ति भरतर्षभ 11 84 11 न यज्ञैर्दक्षिणावाद्विन तपोभिन विद्यया। खर्ग यान्ति यथा मर्त्या यथा ज्ञूरा रणे हताः॥ १६ ॥ शरीराग्निषु शूराणां जुहुबुंस्ते शराहुतीः। इयमानान शरांश्रीव सेहस्तेजिखनो मिथा एवं राजंस्तवाचक्षे खर्ग्यं पन्धानमुत्तमम्। न युद्धाद्धिकं किञ्चित्क्षत्रियस्येह विद्यते क्षत्रियास्ते महात्मानः शूराः समितिशोभनाः। आशिषः परमाः प्राप्ता न शोच्याः सर्वे एव हि॥१९॥ आत्मानमात्मनाऽऽश्वास्य मा शुचः पुरुषर्धम । नाच शोकाभिभूतस्त्वं कायमुत्स्रष्ट्रमर्हसि मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च

को दोनों ही ओरसे सुख है, अर्थात युद्धमें मरे तो खर्ग और शत्रुधोंको मारा तो यश मिलता है, जो क्षत्रिय युद्धमें मरता है. वह इन्द्रका अतिथि बनता है. इन्द्र उनको इच्छानुसार सुख देनेवाले लोकोंको देते हैं, जिस प्रकार युद्धमें मरनेवाले. श्रियोंको खर्ग मिलता है, ऐसा दक्षिणायुक्त यज्ञ और अनेक तपसा करनेसे भी नहीं मिलता और ऐसा सुख अनेक विद्या पढनेसे भी नहीं मिलता है। (८-१६)

वाणरूपी आहुती छोडी और दूसरोंकी आहुती सहीं, तब ये सब खर्ग को चले गए, हमने यह खर्गका मार्ग आपसे कहा. वास्तवमें क्षत्रियोंका युद्धके समान कल्या-ण और कहीं नहीं है, वे सब समाकी शोमा बढानेवाले, बीर महात्मा, क्षत्री उत्तम लोकोंको गए, इसलिये आप उनका क्रछ बोक न कीजिये। (१७-१९)

हे प्ररुपसिंह ! आप अपने आत्मा-को ज्ञान्त कीजिए और शोकसे व्याक्तल होकर शरीर मत छोडिये, जगत्में सह-

संसारेष्वनुभूतानि कस्य ते कस्य वा वयम् शोकस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च । दिवसे दिवसे मुहमाविदान्ति न पण्डितम् न कालस्य पियः कश्चित्र द्वेष्यः कुरुसत्तम । न मध्यस्थः कचित्कालः सर्वं कालः प्रकर्षति ॥ २३॥ कालः पचित भूतानि कालः संहरते प्रजाः। कालः सुप्तेषु जागतिं कालो हि दुरतिकमः 11 88 11 अनिस्यं यौवनं रूपं जीवितं द्रव्यसञ्जयः। आरोग्यं प्रियसंवासो गृद्धयेदेषु न पण्डितः 11 34 11 न जानपदिकं दुःखमेकः शोचितुमर्हसि । अप्यभावेन युज्येत तचास्य न निवतंते ॥ २६ ॥ अशोचन्प्रतिकुर्चीत यदि पश्येत्पराक्रमम् । भैषज्यसेतहु। खस्य यदेतन्ना नुचिन्तयेत् 11 29 11 चिन्लमानं हि न व्येति भूयश्चापि प्रवर्धते। अनिष्टसम्प्रयोगाच विप्रयोगात्प्रयस्य च 11 26 11 मानुषा मानसैर्दुःखैर्द्दश्चन्ते चाल्पबुद्ध्यः।

चुके। तुम किसके हुंए और तुम्हारा कौन हुआ जगत्में शोकके सहस्रों और भयके सैकडों खान हैं, उनमें प्रतिदिन मुर्ख जाते हैं, पण्डित नहीं। (२०-२३)

हे कुरुकुलश्रेष्ठ ! कालका कोई मित्र, शञ्ज और मध्यस्थ नहीं है, वह समान रूपसे सबका नाज करता है, काल सब जगतका नाज करता है, काल सब जगतके सोनेपर मी जागता है, कालको कोई भी नहीं नांध सका, यौवन रूप, जीवन द्रव्य, सुख और मित्रोंके सङ्ग रहना सब अनित्य हैं, इसलिपेंट्र पण्डित हनकी हन्ला न करे; सब जगतके बोन

चको आप एकले अपने ऊपर न लीजि-ये। क्यों कि जो अभाव होनेवाला होता है, वह किसी के रोके रुकता न-हीं। (२३-२६)

यदि मनुष्य अपना पराक्रम देखे तो विना शोक किये ही शोचका बदला लेय । शोकरूपी दुःखकी यही औषधी है, क्यों कि शोक करनेसे शोक नष्ट नहीं होता, वरन उलटा बढता ही है। दुरा कर्म करने और बन्धुओं के वियोगसे जो शोक उत्पन्न होता है, उससे मूर्ख मनुष्योंका हृदय जला करता है, आप जो शोच करते हैं, इससे धर्म, अर्थ और

नाधीं न धर्मी न सुखं यदेतदनुशोचिस न च नापैति कार्यार्थी त्रिवर्गाचैव हीयते। अन्यामन्यां धनावस्थां प्राप्य वैशेषिकीं नराः। असंतुष्टाः प्रमुद्यन्ति सन्तोषं यान्ति एण्डिताः ॥३०॥ प्रज्ञया मानसं दुःखं हत्याच्छारीरमीषधैः। एतद्विज्ञानसामर्थ्यं न वालै। समतामियात शयानं चानुशेते हि तिष्ठन्तं चानुतिष्ठति । अनुधावति धावन्तं कर्म पूर्वकृतं नरम् 11 59 11 यस्यां यस्यामवस्थायां यत्करोति श्रुभाश्रभम् । तस्यां तस्यामवस्थायां तत्फलं समुपाश्रुते 11 55 11 येन येन शरीरेण यद्यत्कर्म करोति यः। तेन तेन शरीरेण तत्फलं समुपाश्चते 11 88 11 आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः। आत्मैव द्यात्मनः साक्षी कृतस्यापकृतस्य च ॥ ३५ ॥ द्यभेन कर्मणा सौख्यं दुःखं पापेन कर्मणा। कृतं भवति सर्वेत्र नाकृतं विद्यते कचित् 11 35 11

नाथों न न च नार्ष करगमन असंतुष्टा। प्रज्ञाम एतद्विज्ञान च अनुषावां यस्पां यस तस्यां तस येन येन च ने तेन तेन न जारमेन हा अति कारमेन कारमेन हा जात्मेन हा हान तुमसे कहा इसको स्वस्त सकता। पूर्वजन्मका विज्ञानका कोई सुख भी सिद्ध नहीं होगा, इससे जगतुके कार्य सिद्ध नहीं होते और खर्ग भी नष्ट होजाता है। साधारण मनुष्य जब किसी छोटी अवस्थासे बडी अव-स्थाको प्राप्त होता है, अर्थात दरिद्रसे धनी होजाता है, तब उसे सन्तोप नहीं होता और अनेक प्रकारका उपद्रव करता है, परन्तु पण्डित ऋमसे सन्तुष्ट होता चला जाता है। (२७-३०)

मनुष्य मनका बुद्धिसे और शरीरका औषधियोंसे दुश्ख दूर करे। हमने जो यह ज्ञान तुमसे कहा इसको मुर्ख नहीं समझ सकता। पूर्वजन्मका किया हुआ

कर्म सोतेके सङ्ग सोता है, बैठेके सङ्ग बैठता है, चलते हुयेके सङ्ग चलता है; अर्थात् किसी समय सङ्घ छोडता नहीं है। (३१-३२)

मनुष्य जिस जिस अवस्थामें जो जो श्चम या अञ्चम कर्म करता है, उसी उसी अवस्थामें उसका वैसा है। फल मोगता है, जिस जिस शरीरसे मनुष्य जो जो कर्म करता है, उसका उसका फल उसही बरीरसे भोगना पडता है, आत्मा ही आत्माका बन्धु है, आत्मा ही आत्माका शत्रु है और आत्मा ही

#eeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeee न हि ज्ञानविरुद्धेषु वह्नपायेषु कर्मसु । मूलघातिषु सज्जन्ते बुद्धिमन्तो भवद्विधाः ॥ ३७ ॥ [८१] हति श्रीमहासारते० खीवर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि एतराष्ट्रविद्योककरणे हितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ धृतराष्ट्र उवाच-सुभाषितैर्महाप्राज्ञ शोकोऽयं विगतो मम। भूग एव तु वाक्यानि श्रोतुमिच्छामि तत्वतः ॥ १॥ अनिष्टानां च संसर्गोदिष्टानां च विसर्जनात् । कथं हि मानसैर्दुःसैः प्रमुच्यन्ते तु पण्डिताः ॥ २ ॥ विदुर ख्याच— यतो यतो मनो दुःखात्सुखाद्वा विप्रमुच्यते । ततस्ततो नियम्यैतच्छान्ति विन्देत वै बुधः अशाश्वतमिदं सर्वे चिंत्यमानं नरपेश। कदलीसन्निभो लोकः सारो ग्रस्य न विद्यते यदा प्राज्ञाश्च मुढाश्च धनवन्तोऽध निर्धनाः। सर्वे पितृवनं प्राप्य स्वपन्ति विगतज्वराः 11911 निर्मांसैरस्थिम्यियष्ठैर्गात्रैः स्नायुनिवन्धिभः।

किं विशेषं प्रपश्यंति तत्र तेषां परे जनाः

हुए कोई कर्मका फल नहीं मोगता, धर्मका सुख और पापका फल दुःख है, आपके समान बुद्धिमान लोग मूलनाश करनेवाले अज्ञानसे उत्पन हुये पापकर्म नहीं करते हैं। (३३-३७) [८१]

खीपवेंमें द्वितीय अध्याय समास।

स्तीपवंसॅ तृतीय अध्याय ।

महाराज धृतराष्ट्र वोले, हे महाबु-द्धिमान ! तुम्हारे उत्तम बचन सुननेसे मेरा शोक नष्ट होगया। अब कुछ और सुननेकी इच्छा है, इम तुमसे प्रश्न करते हैं, कि प्यारी वस्तुओंके छूटने और अनिष्ट वस्तुओंके मिलनेसे पण्डितोंके मनमें दुःख क्यों नहीं होता ? विदुर

बोले, हे राजन्! जिस जिस वस्तुसे मनमें सुख वा दुःख होय, पण्डित उनहीसे दूर रहे और अपने मनको वश्चमें रक्खे वो शान्ति प्राप्ति होती है। (१- ३)

11 8 11

हे प्ररुपसिंह! आप अत्यन्त विचार कर देखिये तो यह अनित्य जगत् केलेके वृक्षके समान सारहीन मिलेगा, देखी सब पण्डित, मूर्ख, घनी और निर्धन व्मशानमें जाकर एक समान सो रहते हैं, देखो उस समय मांसरहित इड़ी और नाडियोंसे वन्धे हुए शरीरोंमें मजुष्यका मेद देखता है, अर्थात् मरे हुए दरिद्र और घनीके शरीरमें कुछ

येन प्रत्यवगच्छेयुः कुल्रूपविशेषणम्।
कस्मादन्योन्यमिच्छन्ति विप्रलच्घियो नराः॥७॥
गृहाणीव हि मर्लानामाहुर्देहानि पण्डिताः।
कालेन विनियुज्यन्ते सत्वमेकं तु शाश्वतम् ॥८॥
यथा जीर्णमर्जाणं वा वस्त्रं त्वक्त्या तु पूरुषः।
अन्यद्रोचयते वस्त्रमेवं देहाः शरीरिणाम् ॥९॥
वैचित्रवीर्य साध्यं हि दुःषं वा यदि वा सुखम्।
प्राप्तवन्तीह भूतानि सकृतेनैव कर्मणा ॥१०॥
कर्मणा प्राप्यते स्तर्भः सुसं दुःषं च भारत।
ततो वहति तं भारमवशः स्वश्लोऽपि वा ॥११॥
यथा च मृन्मयं भाण्डं चक्रारूढं विषयते।
किञ्चित्पिक्यमाणं वा कृतमात्रमथापि वा ॥१२॥
छन्नं वाष्यवरोष्यन्तमवतीर्णमथापि वा।
आईं वाष्यययोष्यन्तमवतीर्णमथापि वा।

आदिके विशेष भाव होते हैं, वह प्रारइच सदा ही सब कामों में सक्क रहती
हैं, तब मूर्ख मनुष्य दृथा क्यों श्लोक
करते हैं। पण्डितोंने शरीरोंको घरके
समान कहा है, जैसे घर ट्रटनेसे घरका
खामी नहीं मर जाता; ऐसे ही शरीर नष्ट
होनेसे नित्य जीवका नाश नहीं होता।
जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र छोडकर नवीन
वस्त्र पहिननेकी इच्छा करता है, ऐसे
ही जीव एक श्ररीरको छोडकर दूसरे
श्ररीरमें चला जाता है। (४-९)

हे विचित्रवीर्यपुत्र ! मनुष्य विना कुछ कर्म किये फल नहीं मोगता। सुख अथना दुःख अपने ही किये कर्मोंसे मिलता है, कमेंसे स्वर्ग, सुख, दु।ख, स्वतन्त्रता और परतन्त्रता प्राप्त होती है, जैसे कोई मिट्टीका बरतन चाक पर चढते ही फूट जाता है, कोई पकते और कोई बहुत दिनमें टूटता है, ऐसे ही किसी कमेंका फल उसी समय, किसीका कुछ दिनमें और किसीका फल बहुत दिनमें होता है, कोई कमें किसी कमेंसे ढक जाता है, कोई करते ही मात्र और कोई पीछे फल देता है। (१०-११)

हे राजन् ! मजुष्योंके श्रारोंकी ऐसी गति है, जैसे कोई फल होते ही, कोई सखा और कोई पकता पकता गिर पहता है, जैसे किसी अन्नकी हाण्डी अथवा परिभृजन्तमेवं देहाः शरीरिणाम् ।। ४४ ॥ गर्भस्थो वा प्रसूतो वाडप्यथवा दिवसान्तरः । अर्धमासगतो वाऽपि मासमात्रगतोऽपि वा ॥ १५॥ संवत्सरगतो वापि द्विसंवत्सर एव वा । यौवनस्थोऽथ मध्यस्थो वृद्धो वाऽपि विपद्यते ॥ १६ ॥ प्राक्तमभिस्तु भूतानि भवन्ति न भवन्ति च । एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमतुतप्यसे 11 20 11 यथा तु सलिलं राजन् कीडार्थमनुसन्तरत्। उन्मजेच निमजेच किश्चित्सत्वं नराधिप 11 28 11 एवं संसारगहने उन्मज्जननिमज्जने । कर्मभोगेन वध्यन्ते क्लिइयन्ते चाल्पबुद्धयः ॥ १९ ॥ ते तु प्राज्ञाः खिताः सत्वे संसारेऽसिन् हितैषिणः । समागमजा भूतानां ते यान्ति परमां गतिम् ॥ २० ॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिक्यां खीपर्वणि जलप्रदानिक विण विशोकहरणे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ [ १०१ ]

ष्टतराष्ट्र उवाच-कथं संसारगहनं विज्ञेयं वदतां वर । एतद्च्छाम्यहं श्रोतुं तत्त्वमाख्याहि पृच्छतः

चुल्हेपर वढी, कोई उत्तरी, कोई उत्तरती, कोई आधी पकी और पूरी पककर फुटवी है, ऐसेही किसीका शरीर गर्भहीमें उत्पन्न होते ही, किसीका एक दिनमें. किसीका दूसरे दिन, किसीका एक पक्षमें, किसीका एक महीनेमें, किसीका एक वर्षमें, किसीका दो वर्षमें, किसीका जवानीमें, किसीका बुढापेमें नष्ट होजा-ता है, पहिले कर्मों के वश्चमें होकर मनुष्य उत्पन्न होते हैं और मस्ते हैं, यह संसार अपने स्वभावसे ऐसे ही चलता है, जैसे कोई जन्त खेलनेके लिये

पानीमें तैरता है, उसमें कभी ह्रवता है और कभी उछलता है, ऐसे ही इस गम्भीर जगत्में मुर्ख कमेंके वशमें होकर बन्धते हैं और दुःख भोगते हैं, परनत कल्याण चाहनेवाले पण्डित इन सब दुःखोंसे छूटकर मोक्ष पदको पाते है। (१२-२९) [१०१]

छी पर्वमें तोन अध्याय समाप्त । की पर्वमें चार अध्याय ।

महाराज धृतराष्ट्र वोले, हे कहनेवा. लोंमें श्रेष्ठ विदुर ! इस संसाररूपी वन-

| _ |              |                                                 |     |    |      | _ |
|---|--------------|-------------------------------------------------|-----|----|------|---|
| 9 | 999999999999 | 9933338533333333333366666666666666666666        | 999 | 66 | 6666 |   |
|   | विदूर उवाच   | जन्मप्रभृति भूतानां क्रिया सर्वोपलक्ष्यते।      |     |    |      |   |
|   |              | पूर्वमेवेह कलिले वसते किश्चिदन्तरम्             | H   | २  | II   |   |
|   |              | ततः स पञ्चमेऽतीते मासे वासमकलपयत्।              |     |    |      |   |
| 1 |              | ततः सर्वोङ्गसम्पूर्णो गर्भो वै स तु जायते       | n   | R  | n    |   |
|   |              | अमेध्यमध्ये वसति मांसशोणितलेपने।                |     |    |      |   |
|   |              | ततस्तु वायुवेगेन जर्ध्वपादो श्वघः श्विराः       | 11  | ß  | 11   |   |
|   |              | योनिद्वारसुपागम्य बहुन् क्वेशान्स मृच्छति ।     |     |    |      |   |
| ĺ |              | योनिसम्पीडनाचैव पूर्वकर्पभिरन्वितः              | N.  | Ģ  | 11   |   |
|   |              | तस्मान्धुक्तः स संसारादन्यान्पइयत्युपद्रवान्    | 1   |    |      |   |
|   |              | ग्रहास्तमनुगच्छन्ति सारमेया इवामिषम्            | 11  | Ę  | IJ   |   |
|   |              | ततः प्राप्तोत्तरे काले व्याधयश्चापि तं तथा।     |     |    |      |   |
| 1 |              | उपसर्पन्ति जीवन्तं वध्यमानं खकर्मभिः            | 11  | 9  | 11   |   |
| h |              | तं वद्धमिन्द्रियैः पाशैः सङ्गखादुभिराष्ट्रतम् । |     |    |      |   |
| 9 |              | व्यसनान्यपि वर्तन्ते विविधानि नराधिप            | Ų.  | 6  | 11   |   |
|   |              | वध्यभानश्च तैर्भुयो नैव तृष्तिसुपैति सः।        |     |    |      |   |
|   |              | तदा नावैति चैवायं प्रकुर्वन्साध्वसाधु वा        | 11  | ?  | lì   |   |

इस विषयको सुनना चाहते हैं तुम

विदूर उवाच विदूर उवाच विदूर उवाच सि विपयको सि विदूर वोले इस विपयको किया करनी थे किया करनी हैं, तब उ को जोते हैं, तब उ हो जोते हैं, तब उ हो जोते हैं। (२. इस विद्युष्ट के स्टूर्स के स्टूर के स विदुर बोले, इस जीवको जन्महीसे किया करनी होती है, पहिले जब स्नीके गर्भमें वीर्थ और स्त्रीका रज मिलता है, तब ही जीव आकर उसमें वास करता है, फिर ऋमसे जब पांच महीने बीत जाते हैं, तब उस बालकके सब अङ्ग प्रेर होजाते हैं, उस समय वह अपवित्र मांस और ऊपरको पैरके अनेक क्रेश सहता हुआ वायुके वेगसे योनीके द्वारमें टंगा रहता है। (२ - ५)

Secretates a transport of the contract of th जनमके कमेंसि अनेक कप्ट मागने पहते हैं, जब उस घोर आपित्तसे छटता है. तव संसारमें आकर अनेक उपद्रव करता और देखता है। उसके पास अनेक वन्धु चान्धव ऐसे आते हैं, जैसे मांसकी ओर कुत्ते । फिर जब कुछ समय बीत जाता है. तब पहिले कर्मींसे अनेक रोग आकर अनेक पीडा देते हैं, जब वह मनुष्य इद्वियोंकी फांसीमें फसकर विषयोंके स्वादमें पहता है, तब ही उसे अनेक प्रकारके विषय आकर घेर लेते हैं, उन विषयोंसे बार बार दुःख पानेपर भी आपत्तिसे नहीं छटता, जब प्ररा

सहामरव। [र जटमहानिक्टर

श्वायायं ५] ११ कीपवं। १६ विष्टं। १६ विष्टं। १६ विष्टं। १६ विष्टं। विशेषं न प्रपश्चित तत्र तेषां परे जनाः। येन प्रस्वानच्छेयुः कुळरूपविशेषणम् ॥ १७ ॥ यदा सर्वे समं न्यस्ताः स्वपन्ति घरणीतले । कस्मादन्योग्यिच्छन्ति प्रलच्छन्ति प्रत्याम्॥१८ ॥ अध्रुवे जीवलोकेऽस्तिन् यो घर्ममनुपालयम् ॥ १९ ॥ पत्रं सर्वे विदित्वा वै यस्तत्त्वमनुवर्तते । स्प्रमोक्षयते सर्वोन्त्र्यामा मनुलेश्वर ॥ २० ॥ [१२१] हित धोमहाभारते सर्वादन्त्वं वे यस्तत्त्वमनुवर्तते । स्प्रमोक्षयते सर्वोन्त्र्याच्या ॥ १९ ॥ विदुर उवाच—पदिदं धर्मगहनं नुद्धया समनुगम्यते । तद्धि विस्तरताः सर्व नुद्धिमागं प्रशास मे ॥ १ ॥ विदुर उवाच—अक्र ते वतिपपामि नमस्कृत्वा स्वयंस्वे । यधा संसारगहनं वदन्ति परमर्पयः ॥ २ ॥ स्वश्चरमहित कान्तारे वर्तमानो द्विजः। किल । मनुष्योक्षो धनी और दिद्रमें कुछ मी मनुष्योक्षो धनी और दिद्रमें कुछ मी मनुष्योक्षो पनी और दिद्रमें कुछ मी मनुष्योक्षो एक्षाने हित्त्वा वाहती ही कुलीन यह अकुलीन, स्वयान वाहता ही कुलीन यह अकुलीन, स्वयान वाहता है १ (१५—१८) हे एथनीनाथ । जो हस तत्वको जाकन पूर्वं प्रस्ते पाल कर्ते होन्द्र । विद्रं बोले, हे महाराज ! हम ज्ञाको । (१) विद्रं बोले, हे महाराज ! हम ज्ञाको पालत है, वह परम पालको हो प्रकार वर्णन करते हम जो सुलो पालत है, वह परम पालको हो जो हम तत्वको जान- विद्वा प्रमाप करके यात हम व्यान करते हो एक्स मान्त्र वर्णन करते हैं, जैसे महार्थेगिन कहा है।(१) एक महाक्षा कर्मो अनेक गोस खा-व्यान करव्यान करविल्या करविल्यान करवे हो।(१) एक महाक्षा कर्मो अनेक गोस खा-व्यान करवे हो।(१) एक महाक्षा कर्मो अनेक गोस खा-व्यान करवे हो। हो सहरव्यान करवे हो। हो स्वानं करा है।(१) एक महाक्षा करा विद्यान करवे हो।(१) एक्स महाक्योन करा है।(१) एक्स महाक्योन करा है।(१) एक्स महाक्योन करा है।(१) एक्स महाक्योन करा है।(१) एक्स महाक्योन करा है।(१)

26666866686666<u>6</u>

| 99999966669999999999999999999999                 | 336666666 |
|--------------------------------------------------|-----------|
| महद्दर्गसन्प्राप्तो वनं कव्याद्संकुलम्           | 11 3 11   |
| सिंहच्याघ्रगजक्षीं घरतिचार महास्वना ।            |           |
| पिकातादैरति अयैभेहोत्राकृतिभिस्तथा               | 11.8.11   |
| समन्तात्सम्परिक्षिप्तं यत्स्म दृष्ट्वा त्रसेचमः। |           |
| तदस्य हृष्टा हृद्यमुद्देगमगमत्परम्               | 11 5 11   |
| अभ्युच्छ्यं च रोम्णां वै विकियाश्च परन्तप        | 1         |
| स तद्भनं व्यनुसरन्संप्रधावन्नितस्ततः             | 11 8 11   |
| वीक्षमाणो दिशः सर्वाः शरणं क भवेदिति             |           |
| स तेषां छिद्रमन्विच्छन्प्रहुतो अयपीडितः          | 11 9 11   |
| न च निर्याति वै दूरं न चातिर्विप्रसुच्यते ।      |           |
| अधापर्यद्वनं घोरं समंताद्वाग्ररावृतम्            | 11 2 11   |
| वाहुभ्यां सम्परिक्षिप्तं स्त्रिया परमघोरया।      |           |
| पश्चर्यार्पधरेनींगः शैलैरिव समुक्रतैः            | 11 9 11   |
| नभःस्पृशैर्महाष्ट्रक्षैः परिक्षिप्तं महावनम् ।   |           |
| वनमध्ये च तत्राभृदुद्पानः समावृतः                | (  १०     |
| वह्रीभिस्तृणजन्नाभिईहाभिरभिसंवृतः ।              |           |
| पपात स द्विजस्तत्र निग्हे सिललादाये              | 11        |
| विलग्नथाभवत्तासिल्लतासन्तानसंकुले ।              |           |
| पनसस्य यथा जातं वृन्तवद्धं महाफलम्               | ॥ १२ ॥    |

नेवाले, भयरूप महाञञ्दवाले वाघ,हाथी और ऋच्छोंके झण्डोंसे मरे, मयानक, गर्जने योग्य, वनमें पहुंच गया, जिस वनको देखकर साक्षात् यमराज भी डरे. वहां जाकर इस बाह्मणका हृदय कांपने लगा, रोएं खडे होगये और सब काम भूल गया। फिर चारों ओर देखता हुआ। मैं किघर जाऊं" ये विचारता हुआ, उन जन्तुवोंसे बचता हुआ मयसे व्याकुल होकर इघर उधर बनमें घुमने लगा।

उस वायुसे भरे वनसे विषयोंसे व्याकुल ब्राह्मण दूर न जा सका, फिर पर्वतों के समान ऊंचे पांच विपीले सांपके सहित एक स्त्रीको देखा, फिर आकाशके समान वृक्षोंसे पूरित वेत और बडे बडे तिन-कोंसे मरे एक तालावको देखा, ब्राह्मण उस गहरे तलावमें गिर पडा, फिर एक तिनकेको पकडकर उस लवा मरे तलावमें अभिमान सहित इस प्रकार

eeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeeee

स तथा लम्बते तत्र ह्यूर्ध्वपादो ह्यधः शिराः। अध तत्रापि चान्योऽस्य भूयो जात उपद्रवः ॥ १३ ॥ कूपमध्ये महानागमपद्यत महाबलम् । क्रुपवीनाहवेलायामप्रयत महागजम् 11 88 11 षड्वक्त्रं कृष्णशुक्कं च द्विषट्कपदचारिणम् । क्रमेण परिसर्पन्तं ब्ह्रीबृक्षसद्यावृतम् ॥ १५॥ तस्य चापि प्रशासासु वृक्षशासावलम्बिनः। नानारूपा मधुकरा घोररूपा भयावहाः 11 25 11 आसते मधु संवृत्य पूर्वमेव निकेतजाः। भूयोभ्यः समीहन्ते मधूनि भरतर्षभ 11 69 11 स्वादनीयानि भृतानां यैवीलो विप्रकृष्यते। तेषां मधूनां बहुधा घारा प्रस्नवते तदा 11 28 11 आलम्बमानः स पुमान् धारां पिबति सर्वेदा । न चास्य तृष्णा विरता पिषमानस्य सङ्कटे 11 29 11 अभीष्सति तदा निखमतृष्ठः स पुनः पुनः। न चास्य जीवित राजन्निर्वेदः समजायत 11 20 11 तन्नैव च मनुष्यस्य जीविताशा प्रतिष्ठिता। क्रुष्णाः श्वेताश्च तं वृक्षं कृष्टयन्ति च मुषिकाः ॥२१ ॥ व्यालैश्च वनदुर्गान्ते स्त्रिया च परमोग्रया ।

वह जिस डालमें लटकता था, वहां इसका शिर नीचेको पैर उपरको थे, तव वहां उसने फिर एक उपद्रव देखा कि क्षेत्रके बीचमें सांप बैठा है और उपर एक मतवाला हाथी खडा है, उस हाथी के छ: मुह, सफेद और काला रह्न और चार पैर हैं, और कमसे उसहीकी ओर चला आता है, उस क्षेत्रके उपर जो वश्च था, उसकी डालियोंमें भयानक अनेक रूपवाली मखियोंका छाता लगा है, उससे बार बार थोडा सहत गिरता
है, और उसीको खाकर वह मुर्ख ब्राह्मण
उस सङ्गद्रशीम प्रसन्न होरहा है और
उसकी प्यास नहीं बुझती और उसकी
यही इच्छा होती है, कि मैं सदा यही
शहत पीता रहूं। कभी उससे निराध
नहीं होता, फिर उस ब्राह्मणने देखा कि
कई सफेद और कई काले मूसे जिस
लताको में पकडे रहा हूं, उसे काट रहे
हैं, परन्तु तौभी उस ब्राह्मणको जीनेकी

| 666666666666666666666                   |             |
|-----------------------------------------|-------------|
| कूपाधस्ताच नागेन पीनाहे कुज्जरेण च      | ॥ २२ ॥      |
| वृक्षप्रपाताच भयं मूषिकेम्यश्च पश्चमम्। |             |
| मघुलोभान्मधुकरैः षष्टमाहुर्महद्भयम्     | ॥ २३ ॥      |
| एवं स वसते तत्र क्षिप्तः संसारसागरे ।   |             |
| न चैव जीविताशायां निर्वेदसुपगच्छति      | ાર૪ ॥ [१४५] |
|                                         | 50.         |

इति श्रीमहासारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिरयां खीपवंणि जलप्रदानिकपर्यणि विशोककरणे पंचमोऽध्यायः॥ ५ ॥

ष्टतराष्ट्र उवाच- अहो खलु महदुःखं कुञ्जूवासश्च तस्य ह। कथं तस्य रतिस्तंत्र तुष्टिवी वदतां वर 11 8 11 स देशः क नु यत्रासी वसते धर्मसङ्करे। कथं वा स विमुच्येत नरस्तसान्महाभयात् 11 2 11 एतन्मे सर्वमाचक्ष्व साधु चेष्टामहे तदा । कृपा मे महती जाता तस्याभ्युद्धरणेन हि 11 & 11 उपमानमिदं राजनमोक्षविद्धिरुदाहृतम्। सुकृतं विन्दते येन परलोकेषु मानवः 0811 उच्यते यत्तु कान्तारं महासंसार एव सः। वनं दुर्गं हि यज्ञैतत्संसारगहनं हि तत् 11 4 11

आशा न छूटी, भयानक सांप, घोर स्त्री, वनके जन्तु, नीचेवाला सांप, ऊपर वाला हाथी, लता काटनेवाले दोनों मूसे और मधुमक्खी इन छह महासर्योको भूलकर भी वह ब्राह्मण केवल शहतके स्वादको लेने लगा, और जीनेसे निराश न हुआ और इस ही प्रकार कूबेरूपी संसारमें पड़ा रहा। (३--२४) [१४५]

स्रीपर्वमें पांच सध्याय समाप्त ।

स्त्रीपर्वमें छः अध्याय ।

महाराज घृतराष्ट्र बोले, हे कहने-वालोंमें श्रेष्ठ विद्र ! कष्टकी बात है

वह त्राक्षण महाकृष्टमें पढ़ा कही वहां कैसे प्रसन्न और तृप्त होता वह देश कहां है, जहां ब्राह्मण धर्मके सङ्कटमें पडा था, वह उस दुःखंस कैसे छ्टेगा, मुझे उसके ऊपर बहुत कुपा आई है, तुम यह मुझसे सब वर्णन करो । (१-३)

विदुर बोले, हे महाराज ! मोक्ष जाननेवाले महात्माओंने यह वृत्तान्त कहा है, इससे मनुष्यका परलोकमें क च्याण होता है। हमने जो भयानक वन कहा, वहीं घोर संसार है। जङ्गली जन्त

<u>PAGA BERTONE PAGA BERTONE PAGA</u>

ये च ते कथिता व्याला व्याघयस्ते प्रकीर्तिताः। या सा नारी बृहत्काया अध्यतिष्ठत तत्र वै तामाहुस्तु जरां प्राज्ञा रूपवर्णविनाशिनीम् । यस्तत्र कूपौ न्यते स तु देहः शरीरिणाम् 11 9 11 यस्तत्र वसतेऽधस्तान्महाहिः काल एव सः। अन्तकः सर्वभूतानां देहिनां सर्वहार्यसौ 11 6 11 कूपमध्ये च या जाता बल्ली यत्र स मानवः। प्रताने लम्बते लग्नो जीविताशा शारीरिणाम स यस्तु कूपवीनाहे तं वृक्षं परिसर्पति । षड्वक्त्रः कुञ्जरो राजन्स तु संवत्सरः स्मृतः ॥१०॥ मुखानि ऋतवो मासाः पादा द्वादशकीर्तिताः। ये तु बृक्षं निकृत्तन्ति मृषिकाः पन्नगास्तथा ॥ ११ ॥ . रात्र्यहानि तु तान्याहुर्भृतानां परिचिन्तकाः । ये ते मधुकरास्तत्र कामास्ते परिकीर्तिताः चास्तु ता बहुशो धाराः स्रवन्ति मधुनिस्रवम्। तां स्तु कामरसान्विचाचत्र मजनित मानवाः॥ १३॥ एवं संसारचकस्य परिवृत्तिं विदुर्देधाः। येन संसारचकस्य पादाांदिछन्दन्ति वै बुधाः ॥ १४ ॥ [१५९]

इति श्रीसहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैदयासिनयां स्त्रीपर्वेणि जलप्रदाविकपर्वेणि विशोककरणे पछोऽध्यायः ॥ ६ ॥

कहे वे सब रोग हैं, बडी श्रारेखाली जो स्त्री कही वह यौनन और रूप नाश करनेवाला बुढापा है, जो सांप कहा सौ श्रीरमें नीचे रहनेवाला सांप काल है, वह सब श्रीरधारियोंका नाश करता है, उस क्षेमें जो घास लटकती है, जिस को मतुष्य पकडकर लटक रहा है; वही अवस्था जीनेकी आशा है, जो हस चुक्षकी और छह मुख्वाला हाथी दौडा आता है, वही वर्ष है; ६ ऋतु उसके
मुख और चार महीने उसके पैर हैं और
जो मुसे उस इक्षको काट रहे हैं, पण्डित,
उन्हें दिन रात कहें हैं; इसमें जो सहत
की मक्खी है, वे अभिलाप हैं; जो सहत-की घार वहती है, वेही इच्छाओं के रस हैं; मनुष्य उसीमें इचता और उछलता है। पण्डितोंने इस प्रकार इस संसार
चक्रका वर्णन किया है, इसी प्रकार प-

अहोऽभिहितमारूयानं भवता तत्त्वदर्शिना। भ्रष एव तु में हर्षः श्रुत्वा वागमृतं तव विदुर उवाच— श्रृणु भूयः प्रवक्ष्यामि मार्गस्यैतस्य विस्तरम् । यच्छ्रुत्वा विष्रमुच्यन्ते संसारेभ्यो विचक्षणाः॥ २ ॥ चथा तु पुरुषो राजन्दीर्घमध्वानमास्थितः । कचित्कचिच्छ्रमाच्छ्रान्तः क्रक्ते वासमेव वा एवं संसारपर्याये गर्भवासेषु भारत । क्कर्वन्ति दुर्वुधा चासं मुच्यन्ते तत्र पण्डिताः तसाद्ध्वानमेवैतसाहुः शास्त्रविदो जनाः। यत्तुषंसारगहनं वनमाह्यमेनीषिणः 11411 सोऽयं लोकसमावत्तीं मलीनां भरतर्षभ । चराणां स्थावराणां च न गृध्येत्तत्र पण्डितः शारीरा मानसाश्चैव मर्लीनां ये तु व्याधयः। प्रत्यक्षाश्च परोक्षाश्च ते न्यालाः कथिता वुधैः क्विश्यमानाश्च तैर्नित्यं वार्यमाणाश्च भारत ।

ण्डित लोग संसारकी फांसी काटकर सुख पाते हैं। (४---१४) [१५९]

(श्रीपर्वमें छः अध्याय समाप्त।

स्त्रीपवंभें सात अध्याय।

महाराज धतराष्ट्र बोले, हे विदुर ! तुम बहुत पण्डित हो, तुमने जो भित्रके समान बचन कहे इनको सुनकर में बहुत प्रसन्न हुआ, अब तुम कुछ और वर्णन करो । (१)

विदुर बोले, हे राजन् ! अब हम इस ही विषयको फिर विस्तारसे वर्णन करते हैं, आप सुनिये इस ही तत्वको जानकर पाण्डित लोग संसारबन्धनसे छट जाते हैं, जैसे मनुष्य बहुत द्रके मार्गको चला जाता है और थक थक-कर कहीं कहीं बैठ जाता है। हे भारत! इसही प्रकार मनुज्य गर्भवासमें आकर मुखे फिर भी उसी बन्धनमें पडते हैं और पण्डित लोग उसी बन्धनको काट-कर सुख मोगते हैं, जिस संसारको बन-रूपसे वर्णन किया था; उसीको यहां पर मार्ग कहा हैं। (२-५)

हे भरतसिंह ! चर और अचर जी-वोंसे भरा हुआ यह लोक अनेक चक्रके समान है, पण्डित इस संसारकी कभी भी इच्छा नहीं करते, इस जगत्में जिन मजुष्योंको संसारमें मन और शरीरके रोग होते हैं, वेही सांप हैं। हे भारत!

සිසිසි දෙසියි. මෙය සිසිය ස

खकर्मभिर्महाच्या**ले**नीद्विजन्लल्प<u>नु</u>द्धयः 1161 अथापि तैर्विमुच्येत व्याधिभिः पुरुषो तृप । आवृणोत्येव तं पश्चाजरा रूपविनाशिनी 11 8 11 शब्दरूपरसस्पर्शैर्गन्धेश्च विविधेरपि । मज्जमांसमहापङ्के निरालम्बे समन्ततः 11 80 11 संवत्सराश्च मासाश्च पक्षाहोरात्रसन्धयः। क्रमेणास्योपयुक्जन्ति रूपमायुस्तयैव च 11 88 11 एते कालस्य निषयो नैतान् जानन्ति दुर्वेधाः। धात्राऽभिलिखितान्याहुः सर्वभृतानि कर्मणा ॥ १२॥ रथः शरीरं भूतानां सत्वमाहुस्तु सारथिम्। इन्द्रियाणि हयानाहुः कर्मबुद्धिस्तु रदमयः तेषां हयानां यो वेगं धावतामनुषावति। स तुं संसारचकेऽसिंधकवत्परिवर्तते 11 88 11 यस्तान्संयमते बुद्धधा संयतो न निवर्तते । ये तु संसारचकेऽसिश्वकवत्परिवर्तिते 11 24 11 भ्रममाणा न मुद्यन्ति संसारे न भ्रमन्ति ते।

TO THE PROPERTY OF THE PROPERT उन सांपोंसे मनुष्य बार बार दुःख पा-ता है, और बार बार कमोंके वशमें होकर फिर वही कर्म करता है, उन्हें छोडनेकी इच्छा नहीं करता है, इसीसे मनुष्य सदा मूर्ख वना रहता है, यदि उनसे भी मनुष्य किसी प्रकार बच जांय, तो रूप और यौवन नाम करनेवाले बुढापेसे किसी प्रकार नहीं बच सक्ता। शब्द, रूप, रस, गन्ध और अनेक प्रकारके स्पर्धके वश्चमें होकर मांस और चर्नीके मयानक की चडमें फसता है. वर्ष, महीने, पक्ष, रात्रि, दिन और सन्ध्या ही ऋमसे मन्द्रध्यको रूप

आयुको नष्ट करते हैं, यही समयका विचार है, युंख लोग उसे नहीं जानते। निकान, पहिले ही सब सुख, दु! ख अव खा चुढापा और रोग लिख दिये हैं, शरीर रथ, मन सारथी, इन्द्रिय घोडे, चुिंद्ध और कर्म रास है, जो इस रथमें बैठनेवाला अर्थात जीव उन दौड़ते हुए घोडोंके सङ्ग दौड़ता है, वह संसार चक्रमें चाकके समान घूमता है, जो पण्डित अपनी चुिंद्धि उन घोडोंको अपने वशमें रखकर घूमते हुए इस संसार चक्रमें आप स्थिर होता है, और किसी प्रकार मोहमें नहीं पड़ता वह उस

संसारे भ्रमतां राजन् दुःखमेतद्धि जायते 11 38 11 तसादस्य निवृत्त्वर्थं यत्नमेवाचरेद वुधः। उपेक्षा नात्र कर्तव्या शतशाखः प्रवर्धते 11 89 11 यतेन्द्रियो नरो राजन् कोषलोभनिराकृतः। सन्तुष्टः सत्यवादी यः स ज्ञान्तिमधिगच्छति॥ १८॥ याम्यमाह रथं होनं मुह्यन्ते येन दुर्दुधाः। स चैतत्प्राप्रयाद्वाजन्यत्त्वं प्राप्तो नराधिप 11 89 11 अनुत्रषुंलमेवैतदाःखं भवति मारिप। राज्यनाशं सुहन्नाशं सुतनाशं च भारत। साधुः परमदुःलानां दुःलभैषज्यमाचरेत् 11 20 11 ज्ञानौषधमवाष्येह दूरपारं महौषधम्। छिन्चादुःखमहाब्याधि नरः संयतमानसः न विक्रमो न चाप्यथीं न मित्रं न सुहुज्जनः। तथोन्मोचयते दुःखाद्यथाऽऽत्मा स्थिरसंयमः ॥ २२॥ तसान्मेत्रं समाखाय जीलमापय भारत। दमस्यागोऽप्रमाद्श्च ते त्रयो ब्रह्मणो ह्याः ॥ २३॥

घूमनेसे बचता है। (५-१५)

हे राजन् ! संसारमें घूमनेवालोंको बार बार यही दुःख भोगने पडते हैं, इसलिये पण्डित इनको छोडनेहीका उपाय करे, इसके छोडनेमें विलम्ब नहीं करना चाहिये, क्यों कि विलम्ब करनेसे यह वृक्ष वढता ही जाता है। हे राजन्! जो मनुष्य इन्द्रियोंको वशमें करके कोध और लोभको छोड देता है, सन्तोप करके सत्य घोलता है, वही शान्ती और सुख पाता है। (१५-१८)

हे महाराज ! यह श्वरीर यमराजका रथ है, इसमें बैठकर मूर्ख लोग पागल

होजाते हैं और उनहीं दुःखोंने पड़ते हैं, जिनमें आप पहे हैं। पुत्र, राज्य और मित्रोंका नाश होना ये सब दु।ख उन्हें ही होते हैं। जो वहुत लोभ करते हैं, इसलिये पण्डितको उचित है कि अपने दुःखोंकी ओपधिकरे, संसाररूपी रोगकी औषधि मनुष्य अपने मनको वशमें करके करे ! इसकी औपधि ब्रह्म-ज्ञान ही है, मनुष्यको जैसे मनकी स्थि-रता शक्ति उसको जैसे छुडा सक्ती है, तैसे वल, धन, मित्र और बन्धु, बान्धव नहीं छुडा सकते । इसलिये आप अपने

श्वािलराईमसमायुक्तः श्वितो यो मानसे रथे।

स्वक्त्वा मृत्युभयं राजन्ब्रह्मलोकं स गच्छिति ॥ २४ ॥
अभयं सर्वभूतेभ्यो यो ददाति महीपते ।
स गच्छित परं स्थानं विष्णोः पद्मनामयम् ॥ २५ ॥
न तत्क्रतुसहस्रेण नोपवासैश्व निस्त्राः ।
अभयस्य च दानेन यत्फलं पाष्ट्रयात्ररः ॥ २६ ॥
न स्वात्मनः प्रियतरं किञ्चिद्भूतेषु निश्चितम् ।
अनिष्टं सर्वभूतानां मरणं नाम भारत ॥ २७ ॥
तसात्सर्वेषु भूतेषु द्या कार्या विपश्चिता ।
नानामोहसमायुक्ता बुद्धिजालेन संवृताः ॥ २८ ॥
अस्क्ष्मदृष्ट्यो मन्दा भ्राम्यन्ते नत्र तत्र ह ।
सुस्क्ष्मदृष्ट्यो राजन्ब्रजन्ति ब्रह्म शाश्वतम् ॥ २९ ॥ १८८०

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिक्यां खीववीण जरूप्रदानिकवर्वीण विशोककरणे सहमोऽध्यायः ॥ ७॥

वैश्वम्यायन उवाच-विदुरस्य तु तद्वाक्यं निशस्य कुरुसत्तमः। पुत्रशोकाभिसन्तप्तः पपात सुवि सूर्विज्ञतः ॥१॥

इन्द्रियोंको वशमें रखना, त्याग और सावधानी ये तीनों मसके घोडे हैं, जो मनुष्य इन घोडोंकी लगामको पकडकर शीलरूपी रथमें वैठकर चलता है, वह मृत्युके डरको पार होके मसलोकको चला जाता है। (१९-२४)

हे पृथ्वीनाथ ! जो सब भनुष्योंको अभय दान करनेसे मनुष्योंको अभय दान करनेसे मनुष्यको फल मिल्ला है, वह सहस्रों यज्ञ और जत करने से भी नहीं मिलता है। ऐसी कोई बात नहीं है, जो निश्चय करके मनुष्योंके लिये मरना ही अहित है, इसलिये पण्डित

मजुष्यको उचित है, कि सदा प्राणियोंपर कृपा करें, परन्तु मूर्ख मजुष्य अनेक प्रकारके मोह और बुद्धिके जालमें फंस-कर संसारमें भूमते हैं, परन्तु पण्डित संसारकों छोडकर सनातन ब्रह्मको प्राप्त होते हैं। (२४-२९) [१८८]

स्त्रीपर्वमें सात मध्याय समाप्त स्त्रीपर्वमें बाठ अध्याय ।

श्रीनैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! कुरुकुलराज धृतराष्ट्र विदु-रके ऐसे वचन सुन पुत्रोंके शोकसे न्या-कुल होकर मूच्छी खाकर पृथ्वीमें गिर पढे। राजाको पृथ्वीमें पढे और मूर्च्छ-

तं तथा पतितं भूमौ निःसंज्ञं प्रेक्ष्य वान्धवाः। कृष्णद्वैप।यनश्चेव क्षत्ता च विदुरस्तथा 11 2 11 सञ्जयः सहदश्चान्ये द्वाःस्वा ये चास्य संमताः। जलेन सुखशीतेन तालवृन्तैश्च भारत 0 3 0 परपर्शिश्व करैगीत्रं वीज्यमानश्च यत्नतः। आश्वास्य तु चिरं कालं घृतराष्ट्रं तथागतम् 11811 अथ दीर्घस्य कालस्य लन्धसंज्ञा महीपतिः। विरुहाप चिरं कालं पुत्राधिभिरभिष्ठुतः 11911 धिगस्तु खलु मानुष्यं यानुपेषु परिग्रहे । यतो मूलानि दु।खानि सम्भवन्ति मुहुर्मुहुः 11 8 11 पुत्रनादोऽर्थनादो च ज्ञातिसम्यन्धिनामथ। प्राप्यते सुमहद्युः विपाग्निप्रतिमं विभो 1101 येन दह्यन्ति गात्राणि येन प्रज्ञा विनर्यति । येनाभिभूतः पुरुषो मरणं बहु मन्यते 11611 तदिदं व्यसनं प्राप्तं मया भाग्यविपर्ययात्। तस्यान्तं नाधिगच्छामि ऋते प्राणविमोक्षणात्॥ ९ ॥ तथैवाहं करिष्यामि अयैव द्विजसत्तम। इत्युक्त्वा तु महात्मानं पितरं ब्रह्मवित्तमम् ॥ १०॥

दुःख और विपाप्तिके समान महादुःख मोगने पडते हैं। जिनको सहते सहते गरीर जलने लगते और बुद्धिका ना**श** होजाता है, उस 'समय जीनेसे मरना अच्छा समझते हैं। आज प्रारब्ध उलटी होनेसे मुझे भी वैसाही सयानक दु!ख हुवा है। मुझे निश्रय होता है, कि, विना प्राण छोडे इस दुःखंके पार नहीं जा सक्तंगा, हे त्राह्मणश्रेष्ठ च्यास मुने! अब में अपना प्राण छोड द्ंगा । (१-९)

श्रेष्ठावं।

श्रेष्ठावं।

श्रुतराष्ट्रोऽभवन्मुहः सद्योकं परमं गतः।

श्रम्य तृष्णीं राजाऽसीः ध्यायमानो महीपते ॥ ११ ॥
तस्य तह्यचं श्रुत्वा कृष्णद्वैपायनः प्रसुः।
पुत्रद्योकाभिसन्तरं पुत्रं वचनमञ्जवीत ॥ १२ ॥
व्यास उवाय— धृतराष्ट्र महावाहो यन्त्वं वध्यामि तच्हरुणु ।
श्रुतवानिस मेघावी धर्मार्थकुरालः प्रसो ॥ १३ ॥
न तेऽस्त्यविदितं किञ्चिद्वेदित्वयं परन्तप ।
अनिव्यतां हि मत्र्यांनां विजानासि न संद्रायः॥ १४ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते सति ।
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने वा शास्त्रते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने विज्ञानासि न संद्रायाः॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने विज्ञानासि न संद्रायाः॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने विज्ञानासि न संद्रायाः॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने विज्ञानासि न संद्रायाः॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने विज्ञते च स्थाने विज्ञते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने विज्ञते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने विज्ञते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके विज्ञते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके विज्ञते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके च स्थाने ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके विज्ञते ॥ १६ ॥
अधुवे जीवलोके ॥ १६ ॥
अध व्यास उवाच — व्यास प्राप्त अपने हो, त्राम कहते हैं त्राम कहते

यतितं सर्वयत्नेन शर्म प्रति जनेम्बर न च दैवकृतो मार्गः शक्यो भूतेन केनचित्। घटताऽपि चिरं कालं नियन्तुमिति मे मितः ॥ १९॥ देवतानां हि यत्कार्यं मया प्रत्यक्षतः श्रुतम् । तत्तेहं सम्प्रवक्ष्णामि यथा स्थैर्य भवेत्तव प्रराऽहं त्वरितो यातः सभामैन्द्रीं जितक्रमः । अपर्यं तत्र च तदा समवेतान्दिवौकसः नारदप्रमुखाञ्चापि सर्वे देवपयोऽनघ। तत्र चापि मया दृष्टा पृथिवी पृथिवीपते 11 22 11 कार्यार्थेसुपसम्बाहा देवतानां समीपतः। उपगम्य तदा घात्री देवानाह समागतान् यत्कार्यं मम युष्माभिर्द्रिह्मणः सद्ने तद्र।। प्रतिज्ञातं महाभागास्तच्छीद्यं संविधीयताम् ॥ २४ ॥ तस्यास्तद्वचनं अत्वा विष्णुर्लोकनमस्कृतः। उवाच वाक्यं प्रहस्त पृथिवीं देवसंसदि धृतराष्ट्स्य पुत्राणां यस्तु ज्येष्ठः दातस्य वै । दुर्योधन इति ख्यातः स ते कार्य करिष्यति ॥ २३॥ तं च प्राप्य महीपालं कृतकृत्या भविष्यासि ।

रने शान्तिके लिये वहुत यस्त भी किये, परन्तु कोई मनुष्य वहुत दिनतक वहुत यस्न करनेपर भी प्रारम्धको नहीं रोक सक्ता, हभने जो देवतोंकी बात अपने कानसे सुनी थी सो तुमसे कहते हैं, उसके सुननेसे तुम कुछ सावधान होगे। (१३-२०)

पहिले में एकदिन बहुत शीघ्रतासे सावधान होकर इन्द्रकी समामें गया, वहां जाकर सब देवतोंको इकटे देखा। ह पापरहित ! वहां नारद आदि सव देव ऋषि भी बैठे थे, मेंने वहाँ
पृथ्वीको भी देखा, पृथ्वी कुछ कामके
लिये देवतोंके यहां गई थी, उमने सम
देवतोंसे कहा, तुम लोगोंने जो मेरे काम
के लिये कहा था, और घमसे जो प्रतिज्ञा की थी, उसे सत्य करो । पृथ्वीके
ऐसे वचन सुन देवतोंकी समामें बैठे
हुए जगत वन्दित विष्णु इंसकर पृथ्वी
से वोछे, हे पृथ्वी ! जो ध्तराष्ट्रके सो
वेटोंमें वडा दुर्योधन है, वह तुम्हारे
कामको सिद्ध करेगा, उस है। राजाने

तस्यार्थे पृथिवीपालाः क्रस्क्षेत्रसमागताः अन्योन्यं घातियष्यन्ति हतैः शक्तैः प्रहारिणः। ततस्ते भविता देवि भारस्य युधि नाशनम् ॥ २८ ॥ गच्छ शीघं स्वकं स्थानं लोकान्धारय शोभने। य एष ते सुतो राजन लोकसंहारकारणात् कलेरंशः समुत्पन्ना गान्धार्या जठरे ऋप । अमर्षी चपलश्चापि क्रोधनो दुष्प्रसाधनः दैवयोगात्समुत्पन्ना भ्रातरश्चास्य तादशाः। राक्रानिर्मातुलश्चैव कर्णश्च परमः सखा समुत्पना विनाशार्थं पृथिव्यां सहिता सृपाः। याहको जायते राजा ताहकोऽस्य जनो भवेत् ॥३२॥ अधर्मी धर्मतां याति स्वामी चेद्धार्मिको भवेत्। स्वामिनो गुणदोषाभ्यां भृत्याः स्युनीत्रसंदायः ॥३३॥ दुष्टं राजानमासाच गतास्ते तनया दप। एतमर्थं महाबाहो नारदो वेद तत्त्ववित् आत्मापराघात्पुत्रास्ते विनष्टाः पृथिवीपते ।

तुम्हारे सब काम सिद्ध होंगे; उसके लिये सब महाशक्ष्मशरी राजा क्रुल्क्षेत्रमें इकट्टे होंकर एक द्सरेको मारेंगे। हे देवि! उस ही युद्धमें तुम्हारा भार उतरेवा, इसलिये तुम अपने घरको जावो और सब जगत्को घारण करो। हे राजन्! तुम्हारा बेटा दुर्योधन जगत्का नाश करनेके लिये गान्धारीके पेटसे उत्पन्न हुआ था, वह कोधी, चश्चल, किसीकी बातको न माननेवाला और कलियुगका अवतार था, प्रारम्धने उसके माई, उसका मामा शक्कनी और परमित्र कर्ण मी वैसे ही उत्पन्न होगये थे, जब

जैसा राजा होता है, तब उसके सब मजुष्य भी वैसे ही होजाते हैं। सब राजा जगत्के नाश करनेहीको इकट्टे हुए थे। (२१-३२)

जब राजा धर्मात्मा होता है, तब अधर्मी भी धर्मात्मा होजाते हैं, इसमें कुछ सन्देह नहीं, कि खामीके दोष और गुण नौकरमें भी आजाते हैं। हे राजन् ! हे महाबाहो! दुष्ट राजा दुर्योधनके वशमें होकर तुम्हारे सब बेटे मारे गये। कुरुकुः लका इस प्रकार नाश होगा, यह वात हमसे वेदका तत्व जाननेवाले. नारद पहिले ही कह गये थे। हे प्रथ्वीनाथ!

मा तान द्योचस्व राजेन्द्र न हि द्योकेऽस्ति कारणम्॥३५॥ न हि ते पाण्डवाः स्वल्पमपराध्यन्ति भारत। धुत्रास्तव दुरात्मानो यैरियं घातिता मही नारदेन च भद्रं ते पूर्वमेव न संशयः। युधिष्टिरस्य समितौ राजसूये निवेदितम् 11 20 11 पाण्डवाः कौरवाः सर्वे समासाद्य परस्परम् । न भविष्यन्ति कौन्तेय यसे कृत्यं तदाचर 11 36 11 नारदस्य वचः श्रुत्वा तदाङ्गोचन्त पाण्डवाः। एवं ते सर्वमाख्यातं देवगुद्धं सनातनम् 11 \$9 11 कथं ते शोकनाशः स्यात्प्राणेषु च द्या प्रभो। सेह्य पाण्डुपुत्रेषु ज्ञात्वा दैवकृतं विधिस् 11 80 11 एष चार्थी महाबाही पूर्वमेव मया श्रुतः। कथितो धर्मराजस्य राजस्ये कतृत्तमे 11 88 11 यतितं धर्मपुत्रेण मधा गुह्य निवेदिते । अविग्रहे कौरवाणां दैवं तु वलवत्तरम् 11 85 11 अनतिकमणीयो हि विधी राजन्कथञ्चन। कृतान्तस्य तु भूतेन स्थावरेण चरेण च 11 88 11 भवान्धर्मपरो यत्र बुद्धिश्रेष्ठश्च भारत।

तुम्हारे पुत्रोंकि ही देखते नाश हुआ, इसलिये तुम उनका शोक मत करो। क्यों कि शोकसे कुछ होता नहीं। (२३-३५)

हे भारत ! तुम्हारे दुष्ट पुत्रोंने इस जगत्का नाश किया, अव भी पाण्डव तुम्हारा कुछ अपराध नहीं करेंगे। हे राजन् ! तुम्हारा क्रल्याण हो। युधिष्टिर-की राजस्य यज्ञमें नारदने ये सब पहिले ही कह दिया था, कि कौरव और पाण्डन परस्पर लडके मर जांयगे,

SECRETERISCHE CONTROL लो । नारदके ऐसे वचन सुन पाण्डवॉने उस ही समय वहुत शोच किया था, हमने ये सब गुप्त बात तुमसे कही। अब तुम ये सब प्रारव्धसे हुआ ऐसा विचार कर शोक छोड दो, सब पर कुपा करो। हे महाबाहो ! हमने युधिष्टिरके राजध्य यज्ञमें ये सब समाचार पहिले ही सुना था, जब मैंने यह गुप्त वात युधिष्टिरसे कही थी, तसीसे उन्होंने शान्तिके लिये बहुत यत्न किया, परन्तु प्रारम्थ बडी ही

स्वाय ८ ] ११ क्षीपर्व ।

स्वाय प्राणिनां ज्ञात्वा गर्ति चागतिमेव च ॥ ४४ ॥
त्वां तु श्रोकेन सन्तमं मुद्यमानं मुद्रुमुँहुः ।
ज्ञात्वा युषिष्ठिरो राजा प्राणानिष परिव्यजेत् ॥ ४५ ॥
कृपालुनिव्यज्ञो चीरस्तिर्यग्योनिगतेष्वि ॥ ४६ ॥
स्व प्रालुनिव्यज्ञो चीरस्तिर्यग्योनिगतेष्वि ॥ ४६ ॥
सम चैव नियोगेन विषेखाण्यनिवर्तनात् ।
परण्डवानां च कारुण्यात्प्राणान्धारय भारत ॥ ४७ ॥
एवं ते वर्तमानस्य छोके कीर्तिर्भविष्यति ।
धर्मार्थः मुमहांसात तम्रं स्थाच तपिखरात् ॥ ४८ ॥
पुत्रशोकसम्रत्यमं हुताशं ज्वलितं यथा ।
प्रज्ञाऽम्भसा महाभाग निर्वापय सदा सदा ॥ ४९ ॥
वैश्वस्पायन उवाच- तच्च्रुत्वा तस्य वचनं च्यासस्यामिततेजसः ।
महता शोकजालेन प्रणुन्नोऽस्य द्विजोत्तम ।
नात्मानम्वयुष्यायि मुख्यमानो मुहुर्युहुः ॥ ५१ ॥
हदं तु चचनं श्रुत्वा तव देव नियोगजम् ।
घारिष्याम्यहं प्राणान् घटिष्ये न तु शोचितुम्॥६२॥
सकता, सप चर और अचर यमलोकको
लोयो,तव तुम ऐसे धर्मात्मा बुद्धिमानों
को प्राणियोंकी गति और अगति
ज्ञानकर भी ऐसा शोच होता है। तुमको
वार वार शोक च्याकुल देखकर
राजा युविष्ठिर प्राणतक भी दे सक्ते
हैं। (३६ —४५)
हे राजेन्द्र! जो वीर राजा युविष्ठिर
सदा पहुर्वोपर भी कृपा करते हैं, सो
तुम्हते अपर कृपा वर्यो न करते हैं, सो
तुम्हते अपर कृपा वर्यो न करते हैं हो
पाउदोंकी कृपासे तुम प्राणोंको धारण
है हे देव ! अप आपके वचन सुनकर
स्वर्वाक्ति कृपासे तुम प्राणोंको धारण
है हे देव ! अप आपके वचन सुनकर
स्वर्वाचित्रभवित्व वित्रम्ति सुम शाणोंको धारण
है हे देव ! अप आपके वचन सुनकर

एतच्छ्रत्या तु वचनं व्यासः सत्यवतीसृतः । ॥ ५३ ॥ [२४१] घृतराष्ट्रस्य राजेन्द्र तत्रैवान्तरघीयत

इतिक्री सहासारते शवसाहरूपां सीहिनायां वैयासिक्यो स्वीपवैति सलप्रवृतिकार्वेनि

इत्राष्ट्रविगेत्क्हरो सहनोऽच्यायः ॥ ८ ॥

जनमेजय उनाच- गते भगवति व्यासे घृतराष्ट्रो महीपतिः । क्रिमचेष्टन विप्रपें तन्मे व्याख्यातुमहिस 11 8 11 तथैव कौरवो राजा धर्मपुत्रो महामनाः। क्रपप्रभृतयञ्जैव किमकुर्वत ते त्रयः। 11 ? 11 अवत्यातः भूतं कर्म शापश्चांन्यान्यकारितः । वृत्तान्तमुत्तरं बृहि यद्भाषत सञ्जयः 11 ₹ 11

वैशम्यायन उवाच-हते दुर्योश्वने चैव हते सैन्ये च सर्वशः। सञ्जयो विगतप्रज्ञो घृतराष्ट्रसुपास्यतः

11811

सञ्जय उदाच- आगम्य नानादेशेभ्यो नानाजनपदेश्वराः।

11911

पितृलोकगता राजन् सर्वे तव सुतै। सह याच्यमानेन सनतं तव पुत्रेण भारत ।

घातिता पृथिदी सर्वा वैरस्यान्तं विधित्सना

11 5 11

में होक छोड़ने और मन सावधान करनेकः यत्र करंगा । राजा ऋतराष्ट्रके ऐंदे बचन सुन सत्यवतीके पुत्र व्यास मृति वहीं अन्तर्घान होगये।(५०-५३) की पर्वेमें साठ सच्याय समात । [२४१]

प्तच्छ्ना तु

प्तच्छ्ना तु

प्तच्छ्ना तु

प्तच्छ्ना तु

प्तच्छ्ना तु

प्तच्छ्ना त्र स्वार्थ राजे

हिन्छी महामारे का का हरणां

के स्वत्याक्षः शुः

प्रतान्त सुर्ता है

के स्वत्याक्षः शुः

प्रतान्त सुर्ता है

के स्वत्याक्षः शुः

प्रतान सुर्ता है

के स्वत्याक्षः शुः

के स्वत्याक्षः सुर्ता है

के स्वत्याक्षः सुर्ता है

के स्वत्याक्षः सुर्ते है

क महाराज जनमेजय बोले, हे झाहाण-श्रेष्ठ वेशम्यायन मुने, जब इतराष्ट्रके पास मगवान वेद्व्यास चले गये, तव उन्होंने क्या किया ? कुरुक्क श्रेष्ट महा-त्मा वर्मराज युधिष्टिरने तथा वर्चे हुए कृपाचाये, अस्वत्यामा और कृत्वम्माने

और श्रीकृष्णके परस्पर शापकी कथा सुनी इसके पथात् सञ्जयने राजा घतः राष्ट्रसे क्या कहा सो कहिये।(१-३)

श्रीवेशस्यायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! जब राजा दुर्योधन मारे गये और सब सेनाका नाश हो चुका तव सञ्जय शोकसे न्याकुल होकर राजा **ष्ट्रतराष्ट्रके पास आकर कहने** लगे। स**ञ्ज**य बोले, हे राजन् ! अनेक देशोंके राजा इरुश्चेत्रमें इक्टे होकर तुम्हारे पुत्रोंके सहित मारे गये। अनेक बार पाण्डवोंने पृथ्वी मांगी तो भी दुर्योघनने वैरका

पुत्राणामथ पौत्राणां पितृणां च महीपते। आनुपूर्व्येण सर्वेषां प्रेतकार्याणि कारय 11 9 11 वैशम्पायन उवाच- तच्छूरुत्वा बचनं घोरं सञ्जयस्य महीपतिः। गतासुरिव निश्चेष्टो न्यपतत्पृथिवीतले 11611 तं शयानसुपागम्य पृथिव्यां पृथिवीपतिम् । विदुरः सर्वधर्मज्ञ इदं वचनमन्नवीत् 11911 उत्तिष्ठ राजन् किं शेषे मा श्रूचो भरतर्षभ। एषा वै सर्वसत्वानां लोकेश्वरपरा गतिः 11 80 11 अभावादीनि भूतानि भावमध्यानि भारत। अभावनिधनान्येव तत्र का परिदेवना 11 88 11 न शोचन मृतमन्वेति न शोचन भ्रियते नरः। एवं सांसिद्धिके लोके किमर्थमनुशोचिस 11 88 11 अयुष्यमानो म्रियते युष्यमानस्तु जीवति । कालं प्राप्य महाराज न कश्चिदातिवर्तते 11 83 11 कालः कर्षति भूतानि सर्वाणि विविधानि च। न कालस्य प्रियः कश्चित्र द्वेष्यः कुरुसत्तम

नाश कराया, अब आप ऋमसे बेटे, पोते, पिता, बन्धु और बान्धवींके प्रेत-कर्भ कीजिंये। (४-७)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सञ्जयके ऐसे मयानक वचन छुनते ही राजा ध्वराष्ट्र मरे हुए मनुष्यके समान मृ चिलत होकर पृथ्वीमें गिर पडे । राजा-को पृथ्वीमें पडा देख सब धर्म जानने वाले विदुर उनके पास आकर ऐसा वचन कहने लगे, हे भरतकुलश्रेष्ठ महाराज । आप क्या पृथ्वीमें पडे हैं, उठिये और कुछ शोचन कीजिये। हे लोकनाथ ! जगतके सब

यही दशा होती है, हे राजन्! जगत् पहिले नहीं था, केवल बीचमें हो गया है जार अन्तमें भी नहीं रहेगा, इसलिय उसका शोच क्याँ करना ? कोई रोनेसे मरे हुएके सङ्ग नहीं जाता, न रोनसे मरा दुआं मिलता ही है, इसलिये आप शोच क्यों करते हैं ? (८-१२)

कमी ऐसा होता है, कि मनुष्य विना युद्ध किये ही मर जाता है और कभी युद्ध करनेसे भी बचता है परनतु काल आनेसे कोई नहीं बचता, कालका कोई मित्र या शत्रु नहीं है, इसलिये

在外生化并不不外外的分配化的现在分词 医克勒奇氏征 医马克克氏氏征 医克勒氏病 医克勒氏病 医多种氏病 医多种氏病 医克勒氏病 医克勒氏病 医多种氏虫素 医克勒氏虫素

विकास काल पहिले आता है, पहिले जात है है साजन ! जिन यु. मरे हुए महात्माओंका आप भोच का का में हुए महात्माओंका आप भोच का में हुए महात्माओंका सुने मरनेसे महिल संस्ट्रिक्ट स्ट्रिक्ट स्ट्र स्ट्रिक्ट स्ट्रिक्ट स्ट्र स्ट्र स्ट्रिक्ट स्ट्र स्ट् यथा वायुस्तृणाग्राणि संवर्तयति सर्वतः। तथा कालवरां यान्ति भृतानि भरतर्पभ 11 89 11 एकसार्थप्रयानानां सर्वेषां तत्र गामिनाम् । यस्य कालः प्रयाखग्रे तत्र का एरिटेवना 11 88 11 यांश्चापि निहतान्युद्धे राजंस्त्वमनुकाचिस । न शोच्या हि महात्मानः सर्वे ते त्रिदिवं गता।॥१७॥ न यज्ञैदेक्षिणाचक्रिने तपोभिने विद्या। तथा खर्गमुपायान्ति यथा जूरास्तनुव्यजः 11 86 11 सर्वे वेदविदः शुराः सर्वे सुचरितव्रताः । सर्वे चाभिमुखाः क्षीणास्तत्र का परिदेवना 11 28 11 शरीराग्निषु शूराणां जुहुनुस्ते शराहुनीः । ह्यमानान शरांश्चेव सेहुस्त्तमपृस्पाः 1 00 1 एवं राजंस्तवाचक्षे खग्यं पन्धानमुत्तमम् । न युद्धाद्धिकं किञ्चित्स्वत्रियस्येह विद्यते 11 38 11 क्षत्रियास्ते महात्मानः श्रुराः समितिकोभनाः। आशिपं परमां प्राप्ता न शोच्याः सर्व एव हि॥ २२ ॥ आत्मनाऽऽत्मानमाश्वास्य मा शुचः पुरुपर्पेभ । नाद्य शोकाभिभृतस्त्वं कार्यमुत्स्रप्रुमहिस ॥ २३ ॥ [२६४]

इति श्रीमहामारते० वैशासिक्यां स्त्रापर्वणि जलप्रदानिकः वैणि बिदुरवाक्ये नवसोऽध्यायः ॥ ६ ॥

यज्ञ, और अनेक तप करनेसे भी नई। मिलती। उन वीरोने ग्रञ्जओंकी ग्रीरहरी अप्रिमें वाणरूपी आहुती छोडी और तेज वाणों को सहा। हे राजन्! क्षत्रियोंक लिये शुद्धसे वचका और कोई स्वर्गका मार्ग नहीं है। सब महात्मा वीर क्षत्री उत्तम स्वर्गको गये इसलिये उनका शोच नहीं करना चाहिये। हे मरत-सिंह! आप अपनी बुद्धिसे अपना घीरज वांधिये, क्यों कि जोचसे व्याकुल होकर

श्वापाय र ० ] ११ क्षेपवं । ११ क्षेपवं । ३०

क्षेप्राया उपाय निवदुरस्य तु तद्वाफ्यं श्रुत्वा तु पुरुषर्थमः । युज्यतां यानिमत्युक्त्वा पुनर्वचनमन्नवीत् ॥१॥ प्रवस्त्रस्य स्वाध्रमाय याम्पारीं सर्वोश्र मरतस्त्रियः । वर्ष् कुन्तीस्रपादाय याश्रान्यासत्त्र योषितः ॥२॥ एवसुक्त्वा स घर्मोत्मा विदुरं धर्मवित्तमम् । शोकविप्रहतज्ञानो यानमेवान्वपयत ॥३॥ गान्यारी पुत्रशोकार्ता भर्तुवचननोदिता । सह कुन्त्या यतो राजा सह स्त्रीभिरुपादवत् ॥४॥ ताः समासाय राजानं सृत्रां शोकसमन्वताः । अण्याप्यायम्योप्यायम्योप्यायम्यात्रस्य स्वयम् । अश्रुकप्रदीः समारोप्य ततोऽसी निर्धयो पुरात्॥६॥ ततः प्रणादः सम्रहोत्य तत्रस्य स्वयम् । अश्रुकप्रदीः समारोप्य ततोऽसी निर्धयो पुरात्॥६॥ ततः प्रणादः सम्रहोत्य तत्रस्य स्वयम् । अश्रुकप्रदीः समारोप्य ततोऽसी निर्धयो पुरात्॥६॥ ततः प्रणादः सम्रहोत्य तत्रस्य स्वयम् । अश्रुकपर्योः समारोप्य तत्रस्य विद्यापे । ए। आश्रुमरं पुरं सर्वम भवच्छोककिरितम् ॥७॥ आश्रुवस्त्रस्य तास्त्रदा निहतेश्वराः ॥८॥ आश्रुवस्त्रस्य विद्यापे स्वयम् । अश्रुवस्त्रस्य । ॥८॥ आश्रासे पुरं से वेषम् मवच्छोककिरितम् ॥ ८॥ आश्रुवस्त्रस्य । ॥८॥ आश्रासे पुरं से वेषम् सव्यापे । ॥८॥ आश्रुवस्त्रस्य । ॥८॥ आश्रुवस्त्रस्य । ॥८॥ आश्रुवस्त्रस्य । ॥८॥ अश्रुवस्त्रस्य । ॥८॥ ॥

प्रकीर्य केलात् सुशुभान् भूषणान्यवसुच्य च। एंकवस्त्रधरा नार्यः परिपेतुरनाथवत् 11911 श्वेतपर्वतस्त्येभ्यो गृहेभ्यस्तास्त्वपाक्रमत्। ग्रहाभ्य इव शैलानां प्रवलो हतयूथपाः 11 80 11 तान्युदीर्णानि नारीणां तदा वृन्दान्यनेकदाः । शोकार्तान्यद्रवन् राजन्किशोरीणामिवाङ्गने ॥ ११ ॥ प्रगृश्च बाह्न कोशन्यः पुत्रान् भ्रातृत्वितृनपि । दर्शयन्तीव ता इ सा युगान्ते लोकसंक्षयम् ॥ १२ ॥ विलयन्त्यो रुद्रन्त्यक्ष धावमानास्ततस्ततः। शोकेनोपहतज्ञानाः कर्तव्यं न प्रजजिरे ब्रीडां जग्मुः पुरा याः स सलीनामपि योषितः । ता एकवस्त्रा निर्रुजाः श्वश्रृणां पुरतोऽभवन् ॥ १४॥ परस्परं सुसूक्ष्मेषु शोकेष्वाभ्वासर्यस्तदा । ता शोकविह्नला राजन्नवैक्षन्त परस्परम् ताभिः परिवृतो राजा रुदताभिः सहस्रकाः। निर्ययौ नगराद्दीनस्तुर्णमायोधनं प्रति 11 88 11

देखा था, वेही स्वामियोंके मरनेसे साधारण मतुष्यके आगे कुरुक्षेत्रको वर्ली, किसीने अपने बाल खोल दिये और कोई अपने गहने उतार उतार कर फेंकने लगीं, सब खी एक एक घोती पहिन-कर अनाथके समान घरसे निकली जैसे हाथियोंके न रहनेसे उनकी हथनी रोती हुई गुफाओंसे निकली हैं, ऐसे ही सब खी सफेद पर्वतके श्विखरके समान घरोंसे निकलीं। (६-९)

उस समय रोती हुई क्षियोंके झुण्ड चारों ओर नगरमें दीखते थे, कोई दूसरी का हाथ पकडकर माई, बेटे, पति आदिको रोती थी। उस समय ऐसा जान पडता था कि जगत्में प्रलय होगया। कोई रोती थी, कोई चिछाती थी, कोई ज्ञानस्त्य होकर इधर उधरको दौडती थी। उस समय उन्हें यह नहीं जान पडता था कि हमें क्या करना चाहिये, जो स्त्री पहिले सिखयोंसे भी लिखत होती थीं, सो निर्लेख होकर एक घोती पहिनकर श्रम्भाके आगे घूमने लगी, तब एक द्सरीको समझाने लगी और एक दुसरीको देखने लगी। (१०-१५)

राजा उन सहस्रों रोती हुई स्त्रियोंकी सङ्गमें लेकर बोकसे व्याद्धल होकर <del>COCOMO DE COCOMO DECOCOMO DE COCOMO DE COCOMO</del>

. इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां झिहितायां वैज्यासिक्यां खीपर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि धतराष्ट्रिनेर्गमने दक्षमोऽण्यायः ॥ १० ॥

वैशम्पायन उवाच-कोशामात्रं ततो गत्वा दहशुस्तान्महारथान् ।
रारद्वतं कृपं द्रौणि कृतवमाणमेव च ॥१॥
ते तु हष्ट्रैव राजानं प्रज्ञाचक्षुषमीश्वरम् ।
अश्रुकण्ठा विनिःश्वस्य स्दन्तमिद्मत्रुवन् ॥२॥
पुत्रस्तव महाराज कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ।
गतः सानुचरो राजन् शक्रोकं महीपते ॥३॥
दुर्योधनवलान्मुक्ता वयमेव श्रयो रथाः ।

शीघ्रता सहित कुरुक्षेत्रको चले, उनके पीछे शिल्प बनानेवाले बनिये और सब जीविकाके लोग चले, इस प्रकार महाराज सबको सङ्ग लेकर नगरसे बाहर निकले, उस समय कुरुकुलका नाश होनेके प्रयाद उन स्त्रियोंके रोनेका घोर शब्द उठा, उससे सब जगत् कांपने लगा उस समय ऐसा जान पडता था मानों सब जगत् मस्स हो गया, सब लोग जानते थे कि जब सब जगत्को नाश हो जुका उस समय राजमक्त सब नगरवासी शोकसे अल्यन्त ही ज्याकुल थे। (१६-२०)

स्रीपर्वमें दस अध्याय समास। [२८४] स्रीपर्वमें ग्यारह अध्याय।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब महाराज एतराष्ट्र नगरसे निकलके एक कोस पहुंचे तब उन्हें कृपाचार्य, अञ्चल्यामा और कृतवमी मिले, अन्ये जगत्के स्वामी राजा एतः राष्ट्रको देखके ये वीर रोकर कहने लगे, हे महाराज! आपके पुत्र महा घोर कर्म करके अपने सब सहायकोंके सहित इन्द्रलोकको चले गये। हे महाराज दुर्योच्यनकी सेनासे केवल हम ही तीन वीर

सर्वप्रन्यत्परिक्षीणं सैन्यं ते भरतर्षभ 11811 इत्येवमुक्त्वा राजानं कृपः शारद्वतस्ततः । गान्धारीं पुत्रशोकार्तामिदं वचनमत्रवीत् 11 4 11 अभीता युध्यमानास्ते व्रन्तः शत्रुगणान्बहुन् । वीरकमीणि क्रवीणाः पुत्रास्ते निधनं गताः 11 & 11 भुवं संपाप्य लोकांस्ते निर्मलान् शस्त्रनिर्जितान्। भारवरं देहमास्थाय विहरन्समरा इव 11011 न हि कश्चिद्धि ज्ञूराणां युद्धवमानः पराङ्मुखः। शक्षेण निधनं प्राप्तो न च्राक्षित्क्रताञ्जलिः 1121 एवं तां क्षत्रियस्याहः पुराणाः परमां गतिम्। शस्त्रेण निघनं संख्ये तम्न शोचितुमईसि 11911 न चापि वास्त्रवस्तेषामृद्धयन्ते राज्ञि पाण्डवाः । शृणु यत्कृतमस्माभिरश्वत्थामपुरोगमैः 11 80 11 अधर्मेण इतं श्रुत्वा भीमसेनेन ते सुतम्। सुप्तं शिविरमासाच पाण्डूनां कदनं कृतम् 11 88 11 पत्राला निहताः सर्वे घृष्टसुम्नपुरोगमाः। द्रपदस्यात्मजाश्चेव द्रौपदेयांश्च पातिताः 11 55 11

बचे हैं और आपकी सब सेना भर गई, राजा धृतराष्ट्रसे ऐसा कहकर पुत्रशोकसे व्याकुल गान्धारीसे कुपाचार्य ऐसे बोले। हे गान्धारी, तुम्हारे सब पुत्र निर्भय होकर शत्रवाँका नाश करके अपनी बीर कीर्तीको जगत्में स्थापन करके युद्धमें मारे गये। (१-६)

अपने निर्मल देह धारण करके अपने शसोंके बलसे उत्तम लोकमें देवतोंके समान विद्वार करते हैं, उन वीरोंमें ऐसा कोई न था, जो युद्धसे फिरा हो। सब अखोंसे मारे गये: किसीने

आगे हाथ नहीं जोडे अर्थीत कोई दीन होकर नहीं मरा, उन महात्माने क्षत्रिः योंके लिये यही गति कदी है, शससे मरना ही परम गति है, इसालिये तम इनका श्रोच मत करो। (७-९)

हे रानी, तुम्हारे पुत्रोंके शश्च पाण्डवीं-की भी बृद्धि नहीं होगी; देखो अञ्च-त्थामाकी सहायतासे इम लोगोंने जो कुछ किया है सो सुनो; जब हम लोगों-ने सुना कि तुम्हारे पुत्र राजा दुर्यो-घनको मीमसेनने अधर्मसे मारा तब

प्राच्याय ११ ]

प्राच्याय ११ विषयं।

प्राट्याम रणे स्थातुं न हि श्रास्यामहे त्रयः ॥ १३ ॥
ते हि श्रा महेष्यासाः स्रिप्रमेष्यति पाण्डवाः।
अप्रयंवशमापन्ना वैरं प्रतिजिहीषेवः ॥ १४ ॥
ते हतानात्मजान श्रुत्या प्रमत्ताः प्रसर्पमाः।
निरीक्षन्तः पदं श्राः क्षिप्रमेष यशिक्षिन ॥ १५ ॥
तेषां तु कदनं कृत्वा संस्थानुं नोत्महामहे ॥
अनुजानीहि नो राज्ञि मा च शोके मनः कृष्याः॥१६॥
राजंस्त्वमनुजानीहि वैर्थमातिष्ठ चोत्तमम्।
दिष्टान्तं पहेष चापि त्वं क्षात्रं धर्म च केवलम् ॥१७॥
इत्येषकुक्त्वा राजानं कृत्वा चाभिमदक्षिणम्।
स्वेषकुक्त्वा राजानं कृत्वा चाभिमदक्षिणम्।
सङ्गममु महाराज नृणीमभ्यानचोदणन् ॥ १९ ॥
अवक्षमाणा राजानं श्रुतराष्ट्रं मनीषिणम्।
सङ्गममु महाराज नृणीमभ्यानचोदणन् ॥ १९ ॥
अवक्षमणा राजानं श्रुतराष्ट्रं मनीषिणम्।
अवक्षमणा राजानं श्रुतराष्ट्रं मनीषणम्।
अवक्षमणा राजानं श्रुतराष्ट्रं सनीषणम्।
अवक्षमणा राजानं श्रुतराष्ट्रं मनीषणम्।
अवक्षमणा राजानं श्रुतराष्ट्रं मनीषणम्।
अवक्षमणा राजानं श्रुतराष्ट्रं सन्ति एव महार्याः।।
अवक्षमण्य तु रे राजन् सर्व एव महार्याः।।
अवक्षमण्य तु राजन् सर्व एव महार्याः।।
अवक्षमण्य तु रे राजन् सर्व एव महार्याः।।
अवक्षमण्य ते प्रस्ति विर्व हे रानीः।
अवक्षमण्य से कृष्ण श्रे क्षा स्व प्रस्ति केवल वे ये यारण कीजिये और दिख्ये केवल वे ये यारण कीजिये और दिख्ये केवल वे ये यारण कीजिये और दिख्ये केवल वे यारण कीजिये और विर्व हे यारण कीजिये और विरा ति स्व वार्य की केवल विरा ति वाराः।
विरा सर्व विरा ति विरा ति वे लोग्य विरा कृष्य यो विरा कृष्य यो यारण कीजिये और विरा ति विर

ाल आ में में मार्क मार्क में मार्क मार्क

जगाम हास्तिनपुरं कृपः शारद्वतस्तदा ।
स्वभेव राष्ट्रं हार्दिक्यो द्रौणिव्यासाश्रमं पर्या॥ २१ ॥
एवं ते प्रययुर्वीरा वीक्षमाणाः परस्परम् ।
भवाताः पाण्डुपुत्राणामागस्कृत्वा महात्मनाम् ॥२२॥
समेख वीरा राजानं तदा त्वनुदिते रवा ।
विप्रजग्मुर्महात्माना यथेच्छकमरिन्द्माः ॥ २३ ॥
समासाद्याथ वै द्रौणिं पाण्डुपुत्रा महारथाः ।
टयजयंस्ते रणे राजन् विकम्य तद्नन्तरम् ॥ २४ ॥ [३०८]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां वैयासिक्यां स्त्रीपर्वणि जलप्रदानिकपर्वणि कृपद्गौणिभोजदर्शने एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

वैश्वम्पायन उवाच-हतेषु सर्वसैन्येषु धर्मराजो युधिष्ठिरः।
ग्रुश्वे पितरं वृद्धं निर्यान्तं गजसाह्नयात् ॥१॥
सोऽभ्ययात्युत्रज्ञोकार्तः युत्रज्ञोकपरिष्ठुतम्।
शोचमानं महाराज भ्रातृभिः सहितस्तदा ॥२॥
अन्वीयमानो वीरेण दाज्ञाहेंण महात्मना।
युयुधानेन च तथा तथैव च युयुत्सुना ॥३॥

उत्रे और घगडाकर एक द्सरेसे सम्मती करने लगे फिर तीनों एक दसरेसे पूछकर तीन ओरको चले गये, कृपाचार्य हस्तिनापुरको, हृदीकपुत्र कृतवर्मी अपने देश अर्थात् द्वारकाको और द्रोणाचार्यके पुत्र अश्वत्थामा व्यासमुनीके आश्रमको चले गये, इस प्रकार ये तीनों चीर महात्मा पाण्डवोंके वैरसे व्याकुल होकर एक दूसरेकी और देखते हुए तीन और को चले गए, जिस समय ये तीनों वीर राजा प्रतराष्ट्रसे मिले थे, उस समय स्र्ये अस्त होना चाहते थे। जब अक्व-त्थामा व्यासम्रुनिके आश्रम पर

तम ही महारथ पाण्डवोंने अपने चलसे उनको जीत लिया। कीपवेंम ग्यारह अध्याय समात। [३०८] कीपवेंमें बारह अध्याय।

श्रीवैश्वम्पायन स्नुनि बोले, हे राजन् जनमेजय । जब सब सेना मारी गई तब अश्वत्थामाको जीतके धर्मराज युधिष्ठिरने सुना कि हमारे बृढे पिता हित्तनापुरसे चले जाते हैं, तब पुत्र-शोकसे व्याकुल राजा युधिष्ठिर, पुत्र शोकसे व्याकुल राजा घतराष्ट्रके पास-चले, उसके सङ्ग महावीर श्रीकृष्ण साल्यकि और युयुत्सु मी चले, उनके पीले

<del>666669333399933333399</del>

तमन्वगात्सुद्धालानी द्रौपदी शोककशिता। सह पात्रालयोषिद्धियीसत्रासनसमागताः 11 8 11 स गङ्गामनु धृन्दानि स्त्रीणां भरतसत्तम । क्रररीणामिवातीनां कोशन्तीनां ददर्श ह 11911 ताभिः परिवृतो राजा कोशन्तीभिः सहस्रशः। जर्ध्ववाहुभिरार्ताभी स्दतीभीः प्रिचाप्रियैः क नु धमें जता राज्ञा क नु साऽचानुशंसता। यचावधीत्पितृन् भ्रातृन् गुरुपुत्रान् सखीनपि घातियत्वा क्यं द्रोणं भीष्मं चापि पितामहम्। मनस्तेऽसून्महावाहो हत्वा चापि जयद्रथम् किं नु राज्येन ते कार्यं पितृन् भ्रातृनपद्यतः। अभिमन्युं च दुर्धर्षं द्रौपदेयांश्च भारत अतील ता महावाद्वा क्रोशन्तीः क्रुररीरिव। बबन्दे पितरं ज्येष्ठं धर्मराजो युधिष्टिरः ततोऽभिवाद्य पितरं धर्मेणामित्रकर्षणः। न्यवेदयन्त नामानि पाण्डवास्तेऽपि सर्वशः ॥ ११ ॥

वदां आई हुई पाञ्चालदेशके क्षत्रियोंकी स्त्रियोंके सङ्घ शोकसे व्याकुल द्रौपदी भी चली। (१-४)

अपेन हैं जिल्ला कर के साथ कि राजा युधिष्ठिरने क्रररीयोंके समान रीती हुई खियोंके झण्डोंको गङ्गाकी और जाते हुए देखा, वे सब ऊपरकी हाथ उठाये, राजा युधिष्ठिरकी निन्दा करती, अनेक झुठे और कठोर चचन कहती हुई गङ्गाको जाती थीं। उस समय वे सब सियाँ ही कहती थी कि, हे महाराज युधिष्ठिर ! आपने अपने पिता, माई, गुरुपुत्र और मित्रोंको मारडाला

चली गई, आपने द्रोणाचार्य, भीष्म वितामइ और जयद्रथको मारकर राज लेनेकी कैसी इच्छा करी ? (५--८)

हे महाराज ! महावलवान् अभिमन्यु और द्रौपदीके पांचो पुत्र आदि बन्धु और वान्धवोंका नाश करके अब राज्य लेके क्या सुख भोगियेगा ? महाराज युधिष्ठिर ! कुरुरीयोंके समान रोती हुई उन स्त्रियोंको छोड कर चले और जाकर अपने पिता धृतराष्ट्रको प्रणाम किया। पीछे सब शत्रनाशन पाण्डवींने अपना अपना नाम लेके महा-

तमात्मजान्तकरणं पिता पुत्रवधार्दितः। अवीयमाणः शोकार्तः पाण्डवं परिषखजे धर्मराजं परिष्वज्य सांत्वियत्वा च भारत। द्रष्टात्मा भीममन्वैच्छद्दिषश्चरिव पावकः स कोपपावकस्तस्य क्रोकवायुसमीरितः। भीमसेनमयं दावं दिधश्चारिव दृश्यते तस्य सङ्करपमाज्ञाय भीमं प्रत्यशुभं हरिः। भीममाक्षिप्य पाणिभ्यां प्रददौ भीममायसम्॥१५॥ प्रागेव तु महाबुद्धिर्बुद्ध्वा तस्येङ्गितं हरिः। संविधानं महाप्राज्ञस्तत्र चक्रे जनार्दनः तं गृहीत्वैव पाणिभ्गां भीमसेनमयसयम्। वञ्ज वलवान् राजा मन्यमानो वृकोद्रम् ॥ १७ ॥ नागायुतवलप्राणाः स राजा भीममायसम्। भक्कत्वा विमथितोरस्कः सुस्राव रुधिरं मुखात्॥१८॥ ततः पपात मेदिन्यां तथैव रुधिरोक्षितः। प्रपुष्पिताग्रशिखरः पारिजात इव द्वमः

फिर महार के नाग करने के नाग करने के नाग करने के नाग करने काया, फिर मह मीठे वचनसे जा मारनेकी इच्छासे महाराज प्रतराष्ट्रवे दीखता या जैसे प्र जलानेवाली अधिकाः क्यों वायुके चलनेसे भीमसेनस्वी वृक्षको थी। (१२-१४) महाराज! घतराष्ट्रवे फिर महाराज धृतराष्ट्रने अपने प्रश्नों-के नाश करनेवाले युधिष्ठिरको शोकसे न्याकुल होके विना प्रेम अपनी छातीसे लगाया, फिर महाराज युधिष्ठिरको अपने मीठे बचनसे शान्त करके भीषसेनको मारनेकी इच्छासे हृढने लगे, उस समय महाराज धतराष्ट्रके श्वरीरका तेज ऐसा दीखता था जैसे प्रलयकालमें जगत्को जलानेवाली अभिका; उस समय शोक रूपी वायुके चलनेसे ऋोध रूपी अग्नि भीमसेनरुपी वृक्षको जलाने चाहती

महाराज। घृतराष्ट्रकी भीमसे

मारनेकी इच्छा जान कर श्रीकृष्णने मीमसेनको अपने हाथोंसे पकड कर उन-के आगेसे हटा दिया और एक लोहेकी वनी भीमसेनकी मृतिं राजाके आगे खडी करदी । महाबुद्धिमान श्रीकृष्णने उनकी इच्छा जान कर पहिले ही यह उपाय कर रखा था। (१५-१६)

राजा धृतराष्ट्रने उस मृत्तिको भीम-सेन जानकर हाथोंमें दवाकर पीस दिया. दश हजार हाथियोंके समान बलवान राजा धृतराष्ट्र जब उस भीमसेनकी मृर्त्तिको तोड चुके, तब उनका हृदय फट गया और मुहके खून गिरने लगा





प्रत्यगृह्णाच तं विद्वान सृतो गावल्गणिस्तदा । मैवमिखब्रवीचैनं शमयन्सांत्वयन्निव स तु कोपं समुत्सुज्य गतमन्युर्महामनाः। हाहा भीमेति चुन्नोश चपः शोकसमन्वितः ॥ २१ ॥ तं विदित्वा गतकोधं भीमसेनवधार्दितम्। वासुदेवो वरः प्रंसामिदं वचनमब्रवीत मा शुचो धृतराष्ट्र त्वं नैष भीमस्त्वया हतः। आयसी प्रतिमा होषा त्वया निष्पातिता विभो ॥२३॥ त्वां क्रोधवदामापन्नं विदित्वा भरतर्षभ । मयाऽपकृष्टः कौन्तेयो ऋत्योर्देधान्तरं गतः न हि ते राजशाईल बले तुल्योऽस्ति कश्चन। कः सहेत महाबाहो बाह्वोर्विग्रहणं नरः ॥ २५ ॥ यथान्तकमनुप्राप्य जीवन्कश्चित्र मुच्यते। एवं बाह्यन्तरं प्राप्य तव जीवेन्न कश्चन 11 25 11 तस्मात्वन्नेण या तेऽसौ प्रतिमा कारिताऽऽयसी। भीमस्य सेयं कौरव्य तवैवोपहृता मया ॥ २७ ॥

फिर जैसे फला हुवा कल्पन्नस पृथ्वीमें गिर जाता है, वैसे ही रुधिरमें भीगे राजा धृतराष्ट्र पृथ्वीमें गिर पढ़े। तब महा विद्वान सक्षयने उनको पकडा और उनको ज्ञान्त करनेके लिये कहने लगे कि आप ऐसा मत कीजि॰ ये। (१७-२०)

त्व राजा धृतराष्ट्रका क्रोध शान्त हुआ और शोकसे व्याकुल होकर, हा भीम हा भीम कहके रोने लगे। जब श्रीकृष्णने देखा, अब राजाका क्रोध शांत होगया, तत्र पुरुषश्रेष्ठ श्रीकृष्ण बोले, हे महाराज धृतराष्ट्र! आप कुछ भोच मत कीजिये; आपने मीमसेनको नहीं मारा, आपने यह लोहेकी बनी भीमसेनकी मृतिं तोडी है, हमने आपको कोधके वश्चमें देखकर अपने हाथसे खींचकर भीमसेनको मृत्युके मुहसे निकाला है। (२१—२४)

है राजशार्द्छ ! जगत्में आपके समान बलवान् कोई नहीं है, जो आपके हाथों के बलको सह सके ऐसा जगत्में कीन है? जैसे यमराजके पास जाकर कोई जीता नहीं बच सक्ता, तैसेही आपके हाथों के बीचमें आकर कोई नहीं बच सक्ता? इसी लिये हमने राजा दुर्योधनने

प्रज्ञशोकाभिसन्तर्धं धर्माद्रपकृतं मनः। तव राजेन्द्र तेन त्वं भीमसेनं जिघांससि न त्वेतत्ते क्षमं राजन् इन्यास्त्वं यद्वकोद्रम् । न हि पुत्रा महाराज जीवेयुस्ते कथश्रन तसायत्कृतमसाभिर्मन्यमानैः शमं प्रति । अनुमन्यस्व तत्सर्वे मा च शोके मनः कृथाः॥३०॥ [३३८]

इति श्रीगृहाभारते शतसाहरूषां लंहितायां वैयासिक्यां खीपविणि जलप्रदानिकपर्वणि

व्यायसभीमभंगे हादबोऽध्याय:॥ १२॥

वैश्वम्पायन उवाच-तत एन घुपातिष्ठन् शौचार्थं परिचारिकाः। कुतशौचं पुनश्चैनं प्रोवाच मधुसूद्रनः H 8 H राजन्नधीता वेदास्ते शास्त्राणि विविधानि च । श्रुतानि च पुराणानि राजधर्माश्च केवलाः 11 9 11 एवं विद्वानमहाप्राज्ञः समर्थः स्वलावले । आत्मापराधात्कस्मारवं क्रुरुषे कोपमीददाम् उक्तवांस्त्वां तदैवाहं भीष्मद्रोणी च भारत। विदुरः सञ्जयश्रेव वाक्यं राजन्न तत्क्रधाः 11811

बनाई हुई भीमसेनकी छौहेकी मुर्ति आपके आगे रख दई थी। आपका मन पुत्रोंके शोकसे न्याकुल होगया है, अव आप के मनमें कुछ भी धर्म नहीं रहा. इसलिये भीमसेनको मारना चाहते हैं: आपकी यह शक्ति नहीं है जो मीमसेन-को मार सके। आपके पुत्रोंकी अवस्था नष्ट हो चुकी थी, वह कदापि नहीं जी सक्ते थे, इमने जो पहिले शान्तिके लिये कहा था, उन सबको सरण करके शान्त होहये और शोकको द्र कीजि-ये।(२५-३०)[३३८]

स्त्रीपवंगं तेरह अध्याय ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले; हे राजन् जनमेजय ! इसके पंथात् महाराज धृत-राष्ट्रके पास गौच कर्म करानेके लिये बहुत सेवक आये । जब राजा पवित्र हो चुके तब श्रीकृष्ण उनसे बोले, हे राजन्! आपने सब वेद और अनेक शास्त्र पहे हैं, अनेक पुराण सुने हैं और सब धर्म अधर्मको आप जानते हैं इस प्रकार महा बुद्धिमान और सब कार्यों में समर्थ होकर मी अपने दोषको विना विचारे ऐसा कोध क्यों करते हैं, हे भारत ! शकनी.

स वार्यमाणो नास्माकमकार्पीर्वचनं तदा। पाण्डवानाधिकान् जानन्यले शौर्ये च कौरव 11 4 11 राजा हि यः स्थिरप्रज्ञा खयं दोषानवेक्षते । देशकालविभागं च परं श्रेयः स विन्दति 11 8 11 उच्यमानस्तु यः श्रेथो गृह्णीते नो हिताहिते। आपदा समनुपाष्य स शोचलनये स्थिता 11 0 11 ततोऽन्यवृत्तमात्मानं समवेक्षस्य भारत। राजंस्त्वं छविषेयात्मा दुर्योषनवशे स्थितः 1101 आत्यापराधादापन्नस्तर्तिक भीमं जिघांसिस । तसारसंयच्छ कोपं त्वं स्वमनुसार दुष्कृतम् यस्त तां स्पर्धया श्चद्रः पाश्चालीमानयत्सभाम् । स हतो भीमसेनेन वैरं प्रतिजिहीर्षता आत्मनोऽतिक्रमं पर्य पुत्रस्य च दुरात्मनः। यदनागसि पाण्डुनां परित्यागस्त्वया कृतः

वैशम्यायन उवाच-एवमुक्तः स कृष्णेन सर्व सत्यं जनाधिप।

जी आपसे पहिले कहा था, सो आपने नहीं किया, जब अपने हम लोगों के रोकने पर भी और पाण्डवों को अपनेसे बल और कोधक तान कर भी इन बचनोंका नहीं ग्रहण किया हसीसे यह आपचि पडी। जो राजा अपनी बुद्धिको स्थिर करके देश और काल के अनुसार सप दोपों को देखता है; जग तमें उसीका कल्याण होता है और जो बार बार कहनेपर भी सुख और दु: खके बचनों को ग्रहण नहीं करता; वह पीछे आपित्र में पडके शोचता है। (१—७)

हे राजन् ! आपने अपनी बुद्धि को

नाय कर दिया और केवल दुर्योधनके वसमें पह गये, उसहीके अपराधसे आप इस आपितमें पडे हैं, तब मीमसेनसे वैर क्यों करते हैं! आप अपने अपराधको सरण करके कोधको त्याग कीजिये! जिस दुएने देपके वसमें होकर द्रीपदीको समामें बुलाया था, भीमसेनने वैर समाप्त होनेके लिये उसे मार डाला। (८—१०)

हे राजन् ! आप अपने और दुष्ट पुत्रके कर्मका सारण कीजिये आपने अपराध रहित पाण्डनों को निकाल दिया था। (११)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,हे राजन्

उवाच देवकीपुत्रं धृतराष्ट्रो महीपतिः ॥ १२ ॥
एवमेतन्महाबाहो यथा वदसि माघव ।
पुत्रलेहस्तु वलवान्धेर्यान्मां समचालयत् ॥ १३ ॥
दिष्ट्या तु पुरुषव्याघो बलवान्सत्यविक्रमः ।
त्वद्गुप्तो नागमत्कृष्ण भीमो बाह्यन्तरं मम ॥ १४ ॥
हदानीं त्वहमव्यग्रो गतमन्युर्गतज्वरः ।
मध्यमं पाण्डवं वीरं द्रष्टुमिच्छामि माघव ॥ १५ ॥
हतेषु पार्थिवेन्द्रेषु पुत्रेषु निहतेषु च ।
पाण्डुपुत्रेषु वै शर्म प्रीतिश्राप्यवातिष्ठते ॥ १६ ॥
ततः स भीमं च घनझयं च माद्राश्च पुत्री पुरुषप्रवीरौ ।
परपर्श्व गात्रैः प्रस्टन सगात्रानाश्वास्य कल्याणस्वाच चैतान ॥ १७

ततः सं भाभ च वनञ्जय च भाष्ट्राश्च पुत्रा पुरुषप्रवारा । परंपरी गात्रैः प्ररुद्त सुगात्रानाश्वास्य कल्याणमुवाच चैतान् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते शतसाहरूवां संहितायां वैवासिक्यां स्वीपर्वाण जलप्रदानिकपर्वाण स्तराष्ट्रकोपविमोचने पाण्डवपरिष्वक्षो नाम त्रयोदशोऽप्यायः॥ १३ ॥ [३५५]

वैशम्पायन स्वाच- धृनराष्ट्राभ्यनुज्ञातास्ततस्ते कुरुपाण्डवाः । अभ्ययुर्जातरः सर्वे गान्धारीं सह केशवाः ॥१॥ ततो ज्ञात्वा हतामित्रं युषिष्ठिरसुपागतम्।

जनमेजय! श्रीकृष्णके ऐसे सचे वचन सुनकर महाराज प्रतराष्ट्र श्रीकृष्णसे बोले, हे कृष्ण! जो तुम इस समय कहते हो, सो सब ऐसेही है। परन्तु प्रश्नोंका प्रेम बहुत बल्नान् है, इससे मेरा घीरज नष्ट होगया था, प्रारव्यहीसे महापराक्रमी पुरुषसिंह भीमसेन आपसे रक्षित होकर मेरे हार्थोंके बीचमें नहीं आये, अब मेरा सब कोच जान्त होगया और अब मुझे कुल दुःख मी नहीं रहा। इसलिये अब में महाबल्नान् मीमसेन-को देखना चाहता हूं। हे कृष्ण! सब राजा और दुर्योघन आदि अपने बेटोंके

मरनेके पीछे अब मेरा प्रेम पाण्डवेंसि अधिक वढ गया है, में उनका कल्याण चाहता हूं। (१२---१६)

त्व महाराज धृतराष्ट्रने रोकर सुन्दर खरीरवाले भीमसेन, अर्जुन, नकुल और वीर सहदेवका शरीर स्पर्श किया। (१७) [३५५]

> श्वीपर्वमें तेरह अध्याय समाप्त । श्वीपर्वमें चौदह अध्याय ।

श्रीवेशम्पायन म्रानि बोले, हे राजन् जनमेजय ! इसके पश्चात् महाराज धृत-राष्ट्रकी आज्ञासे श्रीकृष्णके सहित पांचो पाण्डन गान्धारीके पास गये, तब

स्वित्ता ॥ २ ॥

श्वान्त्रता ॥ २ ॥

श्वान्त्रता ॥ ३ ॥

तेन च ॥

स्वान्त्राः ॥ ६ ॥

सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामुहि ॥
सममामु गान्धारी पुत्रशोकार्ती श्रप्नमैच्छद्निन्द्ता तस्याः पापमभिप्रायं विदित्वा पाण्डवान्त्रति । ऋषिः सत्यवतीपुत्रः प्रागेव समबुध्यत स गङ्गायामुपस्पृद्य पुण्यगन्धि पद्यः शुचि । तं देशमुपसम्पेदे परमर्षिर्मनोजवः दिव्येन चक्षुषा पश्यन् मनसा तद्गतेन च। सर्वेपाणभृतां भावं स तत्र समवुष्यत स स्तुषामब्रवीत्काले कल्पवादी महातपाः। शापकालमवाक्षिप्य शमकालमुदीरयन् न कोपः पाण्डवे कार्यो गान्धारि शपमाप्तृहि। वचो निगृह्यतामेतच्छुणु चेदं वचो मम्र उक्ताऽस्यष्टादशाहानि पुत्रेण जयमिन्छता । जयमाशास्व मे मात्युध्यमानस्य शत्रुभिः सा तथा याच्यमाना त्वं काले काले जयैषिणा। उक्तवत्यसि गान्धारि यतो धर्मस्ततो जयः न चाप्यतीतां गान्वारि वार्च ते वितथासहम्।

व्याकुल निन्दारहित गान्धारीने शश्चरहित युधिष्ठिरको आते हुए देखकर शाप देनेकी करी।(१---२)

पुत्रशेकसे व प्रतिक्रित समावार अपने और अकर महाव गान्धारीके मनमें पाण्डवोंकी ओरसे पाप जानकर मगवान सत्यवती प्रत्र व्यास आये । मगवान व्यासने ये सब समाचार अपने आश्रमहीमें ज्ञाननेत्र और शुद्ध मनकी शक्तिसे जान लिये थे, अनन्तर भगवान न्यास पवित्र सुगन्ध से भरे गङ्गाजलको स्पर्ध करके मनके समान शिघ्र चलकर उस स्थानमें आए और आकर महातपस्वी वेदप

ने बान्ति करनेके लिये मान्धारीसे ऐसे वचन कहे। (३--६)

हे गान्धारी! तुम ज्ञान्त हो,पाण्डवों. के ऊपर कोध मत करो और हमारे वचन सुनो। जिस समय विजयकी इच्छा-से महाराज दुर्योधनने तुमसे कहा था कि. हे माता ! मैं अञ्चओंसे युद्ध करने-को जाता हूं, तुम हमारे जयकार की बात करो, इस प्रकार १८ वीं बार मौगने पर भी तुमने बार बार यही कहा था? कि जिघर धर्म होगा उधर ही विजय होगी, सो तुम्हारी बात झुठ हुई। तुमको

साराधि तोषमाणायास्तथा प्रणिहिता ह्यासि 11 80 11 विग्रहे तुमुले राज्ञां गत्वा पारमसंशयम्। जितं पाण्डुसुतैर्युद्धे नृनं धर्मस्ततोऽधिकः क्षमाशीला पुरा भृत्वा साड्यान क्षमसे कथम्। अधर्म जिह धर्मे इं यती धर्मस्तती जयः स्वं च धर्मं परिस्मृत्य वाचं चोक्तां मनखिनि । कोपं संयच्छ गान्धारि मैवं सूः सलवादिनि ॥ १३ ॥ भगवन्नाभ्यसूयामि नैतानिच्छामि नर्यतः। पुत्रशोकेन तु बलान्मनो विह्नलतीव मे 4 88 11 यथैव कुंत्या कौन्तेया रक्षितव्यास्तथा मया। तथैव धृतराष्ट्रेण रक्षितव्या यथा त्वया द्योधनापराधेन शक्कनेः सौबलस्य च। कर्णदुःशासनाभ्यां च कृतोऽयं कुरुसंक्षयः नापराध्यति बीभत्सुर्ने च पार्थो वृकोदरः। नकुलः सहदेवश्च नैव जातु युधिष्टिरः 11 89 11 युष्यमाना हि कौरव्याः कुतमानाः परस्परम्।

मान्य म चाहिये, इस घोर युद्धमें पाण्डवोंने अनेक राजोंको मारकर विजय पाई है, इससे यही निश्रय होता है, कि इस युद्धमें विजयका मूल धर्मही था, तुम पहिले बहुत ही क्षमा करनेवाली थी, सो अब क्षमा क्यों नहीं करती हो ? (७-११)

हे धर्म जाननेवाली गान्धारी ! हे सत्य वचन कहनेवाली ! तुम अधर्मकी छोडो, तुम अपने कहे दुए उस वचनको स्मरण करो कि जहां धर्म है वहां विजय होगी अब तुम क्रोधको छोड दो और ऐसी बुद्धिको दूर करो। (१२-१३)

गान्धारी बोली, हे सगवन ! में

पाण्डवोंकी निन्दा नहीं करती और न उनका नाश करंना चाहती हूं, परन्तु मेरा यन पुत्रोंके शोकसे व्याकुल होगया है, इसीसे इतना क्रीध आगया था, जैसे क्वन्तीको पाण्डबोंकी रक्षा करनी चाहिये ऐसे ही पृतराष्ट्र और ग्रुझको भी उनके अपर ऋपा करनी चाहिये। दुर्योधन, मेरे माई बकुनी, कर्ण और दुःशासनके अपराधिस यह कुरुकुलका नाग्र होगया। युधिष्ठिर, भीमसेन, नक्कल, अर्जुन और सहदेवने मेरा कुछ अपराध नहीं किया, सब वीर परस्पर लडकर भर गये, इससे मुझे कुछ दु।ख नहीं हुआ, परन्तु भीम

प्रशास है।

प्रशा

| 999996666666666666666666666666666666666                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                       | <del></del>                           |  |
|-------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------|--|
| क्षेन्यस्यैकोऽचिश्रिष्टोऽयं                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | गदायुद्धेन वीर्घवान् ।                |  |
| 🧣 मां हत्वा न हरेद्राज्यि                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | निति वै तत्कृतं मया ॥ ५॥              |  |
| राजपुत्रीं च पाञ्चालीमेकवस्त्रां रजखलाम्।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     |                                       |  |
| 🧣 भवत्या विदितं सर्वमुक्तवान्यत्सुतस्तव ॥ ६॥                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                  |                                       |  |
| हुयोघनमसंगृह्य न शक्या भू। ससागरा।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                            |                                       |  |
| 🖁 केवला भोक्तुमसाभिरतश्चैतत्कृतं मया ॥ ७॥                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     |                                       |  |
| तथाऽप्यवियमसाकं पुत्रस्ते समुपाचरत्।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                          |                                       |  |
| हैं द्रौपचा यत्सभामध्ये सन्यमूरुमदर्शयत् ॥ ८॥                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                 |                                       |  |
| है तदैव वध्यः सोऽसाकं दुराचारश्च ते सुतः।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     |                                       |  |
| 🧣 धर्मराजाज्ञया चैव स्थिताः सा समये तदा ॥ ९ ॥                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                 |                                       |  |
| 🖁 वैरमुईीपितं राज्ञि धुत्रेण तव तन्महत् ।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     |                                       |  |
| 🖁 क्वेशिताश्च वने नित्यं तत एतत्कृतं मया ॥ १०॥                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                |                                       |  |
| सैन्यस्पैकोऽचिश्चष्ठोऽयं गदायुद्धेन वीर्यवान् ।  सां हत्वा न हरेद्राज्यमिति वै तत्कृतं मया ॥ ५॥  राजपुत्रीं च पाश्चालीमेकवस्तां राजस्वलाम् ।  सवत्वा विदितं सर्वमुक्तवान्यत्मुतस्तव ॥ ६॥  सुयोघनमसंग्रह्म न शक्या म्। ससागरा ।  केवला भोक्तुमसाभिरतस्त्रैतत्कृतं मया ॥ ७॥  तथाऽप्पियमसाकं पुत्रस्ते समुपाचरत् ।  द्रौपचा यत्सभामध्ये सन्यम्हर्मद्रश्चित् ॥ ८॥  तदैव वध्यः सोऽसाकं दुराचारश्च ते सुतः ।  धर्मराजाञ्चया चैव स्थिताः स्म समये तदा ॥ ९॥  वरसुद्दीपितं राज्ञि पुत्रेण तव तन्महृत् ।  छेशिताश्च वने निस्यं तत एतत्कृतं मया ॥ १०॥  वैरस्यास्य गताः पारं हत्वा दुर्योधनं रणे ।  राज्यं पुधिष्ठरः प्राप्तो वयं च गतमन्यचः ॥ ११॥  कृतवांश्चापि तत्सर्वं चिदंदं भाषसे मया ॥ १०॥  यह अधर्भ किया। अपनी सव सेनामेसे  केवल वल्लान दुर्योधनही वच गये थे,  ये अच हमको न मार डाले हसिलेये  मैने यह अधर्म किया। राजपुत्री रजस्वला  द्रौपदीको समामें खुलाकर लो कुल वचन कहा था, सो सव हम जानती  देशः इस्र लिये मैने थे अधर्म किया। दुर्योग्धनके विना जीते हम समुद्र पर्यन्त  पुध्यीक राजा नहीं वन सकते, इसिलेये  मैने यह अधर्म किया। (१-७)  द्रौपदीको अनेक वचन कहनेपर  मी दुर्योघन शान्त न हुमा और उसने  समाके वीचमें द्रौपदीको अपनी वाहें  वाह कहते हो कि हमने लमको सम्राम् स्वाह्म स्वाहें हम को हमारे प्रकृती प्रश्नि सम्राम् स्वान्त हुए। (८—११)  वाहचारी बोली, हे ध्योर भीमसेन  द्रुम जो हमारे प्रकृती प्रश्नि सम्राम् करते हो स्वाह्म स्वाहें सम्रामे त्रुमकी प्रश्नि सम्राम् त्रुमकी प्रश्ना करते हो स्वाह्म स्वाहें हम करते हो हमने लमको स्वाह्म स्वाहें सम्राम् व्याह्म स्वाह्म स |                                       |  |
| 🧣 ्र राज्यं युधिष्ठिरः प्राप्तो व                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             | वयं च गतमन्यवः ॥ ११॥                  |  |
| 🥻 गांधायुंबाच — न तस्येष वधस्तात् यत्प्रशंसिस मे सुतम्।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                       |                                       |  |
| है कृतवांश्चापि तत्सर्वे यदिदं भाषसे भिय ॥ १२ ॥                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                               |                                       |  |
| 🦹 यह अधर्म किया। अपनी सब सेनामेंसे                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                            | जांघ दिखलाई, उस दृष्टको हम चार        |  |
| हैं केवल बलवान दुर्योधनही बच गये थे,                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                          | याई उस ही समय मार डालते. परन          |  |
| 🥻 ये अब हमको न मार डाले इसलिये                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                | धर्मराज युधिष्ठिरकी आज्ञाके वर्श      |  |
| 🥻 मैने यह अधर्म किया। राजपुत्री रजस्वला                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                       | होकर कुछ न कर सके । हे रानी ! इर      |  |
| क्ष्रु द्रीपदीको समामें बुलाकर जो कुछ                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                         | घोर वैरको दुर्योधनहीने बढाया, देखे    |  |
| क्षे वेचन कहा था, सो सब तुम जानती                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             | हम लोगोंने वनमें कैसे कैसे दुःख       |  |
| है हा; इस लिंग मेंने ये अधमें किया। दुर्यों-                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                  | उठाये इसलिये मैंने अधर्म किया। दुर्यो |  |
| क्ष धनका विना जीते हम समुद्र पर्यन्त                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                          | धनके मरनेसे युधिष्ठिरको राज्य मिल     |  |
| है उच्चाक राजा नहीं बन सकते, इसलिये                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                           | और हम चारों माई भी वैर समार           |  |
| क नग यह अधम । क्या । (१-७)                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                    | करके शान्त हुए।(८—११)                 |  |
| भ शापदाका अनक वचन कहनेप्र<br>भी शोधन सरका -                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | गान्धारी बोली, हे प्यारे भीमसेन       |  |
| के पा उपावन शान्त न हुआ और उसने<br>के सभाके वीचमें द्रीपदीको अपनी बांई                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                        | तुम जो हमारे पुत्रकी प्रशंसा करते है  |  |
| विश्वविद्यालय प्रापदाका अपनी बहि                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                              | और करते हो कि स्मने जयको मार          |  |

गान्धारी बोली, हे प्यारे भीमसेन! तुम जो इमारे पुत्रकी प्रशंसा करते हो श्राचि । श्री विषय । सज्जांने विल्द स्वार वे श्री स्वार के श्री से सहस्वार वे श्री से सहस्वार वे श्री से सहस्वार वे श्री से सार मामहें से महस्वार वे श्री से सार मामहें स

| 99 555666666666666666666666666666666666                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | <del>*************************************</del> |
|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------|
| अनिगृह्य पुरा पुत्रानग                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                    | स्राखनपकारिषु <b>।</b>                           |
| अधुना किं नु दोषेण                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                        | परिवाङ्कितुमहास ॥ २०॥                            |
| गान्धार्युवाच- बृद्धस्यास्य कातं पुत्राा                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                  | न्नेप्रंस्त्वमपराजितः।                           |
| कस्मान्न शेषयेः किश्चि                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                    | चेनाल्पमपराधितम् ॥ २१ ॥                          |
| सन्तानमावयोस्तात                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                          | •                                                |
| कथमन्धद्वयस्थास्य य                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                       |                                                  |
| शेषे ह्यवस्थिते तात !                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | पुत्राणामन्तके त्वधि।                            |
| न मे दुःखं भवेदेतद्य                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                      |                                                  |
| वैश्वम्पायन उवाच ए <b>यसु</b> कत्वा तु गान्धार                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                            | ी युधिष्ठिरमष्ट्चत ।                             |
| क स राजेति सकोषा                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                          |                                                  |
| ता <b>म</b> भ्यगच्छद्राजेन्द्रो                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                           | वेपमानः कृताञ्जलिः।                              |
| युधिष्ठिरस्तिवदं तत्र ।                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   |                                                  |
| पुत्रहन्ता रंशसोऽहं र                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | तव देवि युधिष्ठिरः।                              |
| शापाहं: पृथिवीनाशे                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                        | हेतुभूतः शपख माम् ॥ २६॥                          |
| न हि मे जीवितेनाथी                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                        | न राज्येन घनेन वा।                               |
| ताह्यान सुहदो हत्व                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                        | ।। मृहस्यास्य सुहृद्धृहः ॥ २७॥                   |
| हे गान्धारी! तुमने पहिले अपने                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             | दुःख न होता। (२१-२३)                             |
| पुत्रोंको हमारा अपराध करते देखकर                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                          | श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, फिर                     |
| भी न रोका और अब हमपर दोप                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                  | और पोतोंके शोकसे व्याकुल गान्धार                 |
| लगाती हो, सो यह दोप लगाना द्रथा                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                           | कोधमें मरकर पूंछा की राजा गुधि।                  |
| है।(२०)                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   | कहां हैं ? (२४)                                  |
| गान्धारी बोली, हे भीम! तुमने बूढे                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                         | तब राजोंके महाराज युधिष्ठिर डर                   |
| राजाके सौ पुत्रोंको मार डाला, जिसने                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                       | कांपते हुए हाथ जोडकर उनके प                      |
| तुम्हारा कम अवराध किया था, उस                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                             | गये और इस प्रकार मीठे वचन बो                     |
| एकको भी क्यों न छोडा, इम दोनों                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                            | हे माता ! तुम्हारे पुत्रोंको मारनेवा             |
| बुढे और अन्धोंका राज्य भी छिन गया                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                         | सब जगत्के नाश करनेका मूल कार                     |
| बौर लाठीके समान एक सन्तान सी                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                              | युधिष्ठिर में ही हूं, निश्चय ही में तुमा         |
| अनिगृद्ध पुरा पुत्रान्य अधुना किं नु दोषेण अधुना किं नु दोषेण गान्धार्युवाच इद्धरणस्य अतं पुत्रां कस्मान्न शेषयेः किञ्चि सन्तानमावयोस्तात कथमन्यद्वयस्थास्य य शोषे द्यवस्थिते तात प्र ने से दुःखं भवेदेतय वैश्वरणायन उवाच एवसुक्त्वा तु गान्धारं क स राजेति सकोधा तामभ्यगच्छद्राजेन्द्रो युधिष्ठरस्त्वदं तन्न य पुत्रहन्ता दंशसोऽहं स् शुत्रहन्ता दंशसोऽहं स् शुत्रहन्ता दंशसोऽहं स् शुत्रहन्ता दंशसोऽहं स् शुत्रहन्ता सहदो हत्व वितेनाथों न हि मे जीवितेनाथों है। योका और अव हमपर दोष लगाती हो, सो यह दोप लगाना वृथा है। (२०)  गान्धारी बोली, हे मीम! तुमने बृढे राजाके सौ पुत्रोंको मार डाला, जिसने तुम्हारा कम अपराध किया था, उस एकको भी क्यों न छोडा, इम दोनों वृढे और अन्धोंका राज्य भी छिन गया और लाठीके समान एक सन्तान भी न रही। यदि तुम धमेसे मेरे सब पुत्रोंको मारकर मेरे पास आहे, तो ग्रेक्के इतना ह्व्व्व्व्वव्यव्वव्यव्वव्यव्वव्यव्यव्वव्यव्वव्यव्वव्यव्य | अपराधी हूं, इसलिये मुझे छाप दो, म                |
| :१९६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६६                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                     | ऐसे मित्रोंके मरनेके पीछे राज्य, ध               |

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, फिर बेटे और पोर्तोंके शोकसे व्याकुल गान्धारीने कोधमें भरकर पूंछा की राजा युधिष्ठिर कहां हैं ? (२४)

तव राजोंके महाराज युधिष्ठिर डरसे कांपते हुए हाथ जोडकर उनके पास गये और इस प्रकार मीठे वचन बोले, हे माता ! तुम्हारे पुत्रोंको मारनेवाला सब जगतके नाश करनेका मूल कारण युधिष्ठिर में ही हूं, निश्रय ही में तुमारा अपराधी हूं, इसलिये मुझे छाप दो, मुझे

त्याव १५ ]

११ व्याप्त १५ ]

स्वित्त वादिनं भीतं संक्षिक्षंगतं तदा ।

नोवाच किश्चिद्धान्धारी निश्चासपरमा भृष्ठाम् ॥ २८ ॥

तस्यावनतदेहस्य पाद्योर्निपतिष्यतः ।

पुधिष्ठिरस्य च्पतेर्धर्मेज्ञा दीर्घदर्शिनी ॥ २९ ॥

अङ्गुल्पग्राणि दृदशे देवीपद्दान्तरेण सा ।

ततः स कुनस्वीभृतो दृर्शनीयनस्वो चृपः ॥ ३० ॥

तं दृष्ट्वा चार्जुनोऽगच्छद्वासुदेवस्य पृष्ठतः ।

एवं सश्चेष्ठमानांस्तानितश्चेतश्च भारत ॥ ३१ ॥

गान्धारी विगतकोषा सांत्वपामास मानृवत् ।

तया ते समनुज्ञाता मातरं वीरमातरम् ॥ ३२ ॥

अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः ।

विरस्य दृष्ट्वा पुत्रान् सा पुत्राधिमिरमिष्ठता ॥ ३३ ॥

अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः ।

विरस्य दृष्ट्वा पुत्रान् सा पुत्राधिमिरमिष्ठता ॥ ३३ ॥

अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः ।

विरस्य दृष्टा पुत्रान् सा पुत्राधिमिरमिष्ठता ॥ ३३ ॥

अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः ।

विरस्य दृष्टा पुत्रान् सा पुत्राधिमरिमिष्ठता ॥ ३३ ॥

अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः ।

विरस्य दृष्टा पुत्रान् सा पुत्राधिमरिमिष्ठता ॥ ३३ ॥

अभ्यगच्छन्त सहिताः पृथां पृथुलवक्षसः ।

विरस्य दृष्टा पुत्रान् सा पुत्राधिमरिमिष्ठता ॥ ३३ ॥

अपद्यदेतान् काक्षीविद्धा सत्विक्षतात् ।

सा तानेकैकशः पुत्रान् संस्पृत्रान्ता पुषा ॥ ३४ ॥

अपद्यदेतान् काक्षीविद्धा सत्विक्षतात् ।

सा तानेकैकशः पुत्रान् संस्पृत्रान्ता पुनः । १५ ॥

और जीनेसे इन्छ प्रयोजन नहीं है,

में बहा पूर्व और मित्रोंका द्रोही

इं। (२५-२७)

राजा युधिष्ठरको ढरे देख और

उनके ऐसे वचन सुन गान्धारीने इन्छ

नकहा, केवल च्याकल बहुत दिनों

सम्य महाराज युधिष्ठर दरसे कांपते

हुए उनके पैरापर गिरर है, तब धर्म

तव पुत्रोके द्राख्व च्याकुल बहुत दिनों

स्वार्याम्वाविद्यान

हुए उनके पैरोंपर गिर पडे, तब धर्म जाननेवाली गान्धारीने उन्हें अपने कपडोंके भीतरसे अंगुली दिखाई, उसी समय सुन्दर नखुनवाछे महाराज युधि-ष्टिरके नखून विगड गये, महाराजकी यह दशा देखके अर्जन श्रीकृष्णके पीछे

तब प्रत्रोंके दुःखसे न्याकुल बहुत दिनों से पुत्रोंसे छूटी फ़न्ती, अपने आंसुओंको कपडेसे पोंछती हुई आई और बार उनके शरीरोंको स्पर्ध करके अनेक प्रकारके अस्त्रोंसे कटे हुए शरीरोंको

rece sees sees accommendation of the sees of the sees

999999 17 C559999 17 C569999 6668999 666698999 66666989 17 C56988 <sub>යුවෙට වර්දුව අත්තම සහ අත්තම අත්තම සහ අත්තම සහ අ සූ සුව සහ අත්තම අත්තම අත්තම සහ අත්තම ස</sub> अन्वज्ञोचत दुःखार्ता द्रौपदीं च हतात्मजाम्। रुद्तीमथ पात्रालीं दद्शी पतितां सुवि आर्थे प्रचाः क ते सर्वे सौभद्रसहिता गताः। द्रीपद्यवाच--न त्वां तेऽद्याभिगच्छन्ति चिरं हट्टा तपखिनीम्॥ ३७॥ किं नु राज्येन वै कार्य विहीनायाः सुतैर्भम । तां समाश्वासयामास पृथा पृथुललोचना उत्थाप्य याञ्चसेनीं तु रुदतीं शोककर्शिताम् । तयैव सहिता चापि पुत्रैरनुगता रूप 11 38 11 अभ्यगच्छत गान्धारीमार्तामार्ततरा खयम् । वैश्वम्पायन उवाच-तासुवाचाथ गान्धारी सह वध्वा यशस्विनीम्॥४० ॥ मैवं पुत्रीति शोकार्ता पर्य मामपि दुःखिताम्। मन्ये लोकविनाशोऽयं कालपर्याय नोदितः अवइयभावी सम्प्राप्तः स्वभावाळोमहर्षेणः । इदं तत्समनुप्राप्तं विदुरस्य वचो महत् असिद्धानुनये कृष्णे यदुवाच महामतिः। तिसन्नपरिहार्येऽर्थे व्यतीते च विशेषतः मा शुचो न हि शोच्यास्ते संग्रामे निघनं गताः।

द्रौपदी ग्रोच करने लगी, फिर भूमिमें पड़ी और रोती हुई द्रौपदीको देखा। द्रौपदी बेाली, हे माता! अभिमन्युके सहित तुझारे सब पोते कहां चले गये? तुमकी बहुत दिनके पीछे यहां आई हुई देकखर भी वे तुझारे पास अभी तक क्यों नहीं आते? विना पुत्रोंके मैं इस राज्यको लेकर क्या करूंगी? (३३-३७)

रोती हुई शोकसे व्याकुल द्रौपदीको उठाकर वहे बहे नेत्रवाली क्रुन्ती सम-झाने लगी। फिर अपने पुत्र और द्रीपदीके सहित रोती हुई क्रन्ती, रोती

हुई गान्धारीके पास गई। (३८-३९) अविशम्पायन म्रानि बोले, यशस्त्रिनी क्रन्तीको द्रोपदीके सहित रोते हुए देख गान्धारी बोली, तुम कुछ शोच मतकरो। देखों मैं भी कैसे शोकमें पड़ी हुई हूं, मयानक समय खमावहीसे आगया था. महाबुद्धिमान विदुरने जैसे कहा था, सो सब वैसे ही हुआ, यह कर्म अवश्य होनेवाला था, सो समाप्त होगया। वे सब युद्धमें मारे गये, उनका सोच करना अब वृथा है, जैसे शोकमें तम पडी हो

शरीरेरशिरस्कैश्च विदेहैश्च शिरोगणैः 11 8 11 गुजाश्वनरनारीणां निःस्वनैरभिसंवृतम् । **सृगालबककाकोलकङ्ककाकनिषे**वितम् 11 9 11 रक्षसां प्रस्वादानां मोदनं क्ररराक्कलम् । अशिवाभिः शिवाभिश्च नादितं गृप्रसेवितम् ॥ ८॥ ततो व्यासाभ्यनुज्ञातो धृतराष्ट्री महीपतिः। पाण्डुपुत्राश्च ते सर्वे युधिष्ठिरपुरोगमाः वासुदेवं पुरस्कृत्य इतबन्धं च पार्थिवम् । कुरुस्त्रियः समासाच जग्मुरायोधनं प्रति समासाय कुरुक्षेत्रं ताः स्त्रियो निहतेश्वराः। अपरयन्त हतांस्तत्र पुत्रान् भ्रातृन्पितृन्पतीन् ॥ ११ ॥ कव्यादैर्भक्ष्पभाणान्वै गोमायुवलवायसैः। भृतैः पिशाचै रक्षोभिर्विविधैश्र निशाचरैः 11 88 11 रुद्राक्रीडनिभं स्ट्टा तदा विश्वसनं स्त्रियः। महाँहेभ्योऽथ यानेभ्यो विकोशंखो निपेतिरे ॥ १३ ॥ अदृष्टपूर्वं पद्दयंखो दुःखाती भरतस्त्रियः। शरीरेष्वस्वलन्नन्याः पतत्यश्चापरा सुवि 118811

कर्णा होने हमे। (१—८ तम मना न्यासकी प्राण, युद्ध मुन्दि महाराज स्था होने हमे। १९—८ तम मना न्यासकी प्राण, युद्ध मुन्दि अर्जुन, नज्ज और सही अर्जुन, नज्जल अर्जुन, नज्जल अर्जुन, नज्जलल अर् के शरीरका पता भी नहीं था, वह युद्ध भूमि हाथी, घोडे, मनुष्य और ख्लियोंके शब्दसे मर गई, चारों ओर शियार षगुरुं और गिद्ध आदि मांस खानेवाले प्राणी दीखने लगे, मनुष्योंका मांस खानेवाले राक्षस कुरुरी भयानक सियारी और गिद्ध उस युद्धभूमिको देखकर प्रसन्न होने लगे। (१-८)

तव मगवान् व्यासकी आज्ञासे महा-राज, धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव, श्रीकृष्ण आगे करके क्रुक्कलकी स्त्रियोंको सङ्ग लेकर युद्धभूमिमें गये। (९-१०)

क्ररु क्षेत्रमें जाकर पतिरहित स्त्रियों ने मरे हुए अपने अपने पति, पिता, पुत्र और भाइयोंको देखा। और देखा की वहां उनके शरीरके मांसको कौवे, सियार, गिद्ध, भृत,विश्वाच और राक्षस खा रहे हैं, उस समय उस युद्धभूमिको सियोंने महाकालके अखाडेके समान देखा, फिर अनेक बहुत मृल्यवाले वाहनोंसे रोती हुई उतरीं। जिन कुरु क्रलकी स्त्रियोंने दश्ख कभी न**हीं** देखा-

श्रान्तानां चाप्यनाथानां नासीत्काचन चेतना । पात्रालकुरुयोषाणां कृपणं तदभून्महत् 11 24 11 दुःखोपहताचित्ताभिः समन्तादनुनादितम् । दृष्ट्वाऽऽयोधनमत्युग्रं धर्मज्ञा सुवलात्मंजा 11 28 11 ततः सा पुण्डरीकाक्षमामंत्र्य पुरुषोत्तमम् । कुरुणां वैशसं स्ट्रा इदं वचनमत्रवीत 11 89 11 पद्यैता। पुण्डरीकाक्ष स्तुषा मे निहतेश्वराः । प्रकीर्णकेशाः कोशन्तीः क्ररंरीरिव माधव अमुस्त्वभिसमागम्य स्मरंखो भर्तजान् ग्रणान् । पृथगेवाभिधावंत्यः पुत्रान्म्रातृन्पितृन्पतीन् वीरसभिर्महाराज इतपुत्राभिरावृतम्। कचिच वीरपत्नीभिईतवीराभिरावृतम् 11 30 11 शोभितं पुरुषव्याष्टैः कर्णभीष्माभिमन्युभिः। द्रोणद्रपद्दशरुपेश्च ज्वस्तद्विरिव पावकैः 11 98 11 काश्रनैः कवचैनिष्कैर्मणिभिश्च महात्मनाम्। अङ्गदैईस्तकेयुरैः स्रिभश्च समलंकृतम् 11 22 11 वीरबाहुविसृष्टाभिः शक्तिभिः परिघैरपि।

था, वे दुःखसे व्याकुल होकर पृथ्वीमें लोटने लगीं। (११--१४)

उस समय नाथ रहित, रोती हुई, चेतना रहित, दुःखसे व्याक्तल, दुखित पांचाल और कीरवोंकी स्त्रियोंके शब्दसे वह युद्ध भूमि पूरित हो गई। उस पुद भूमिको देखकर धर्म जाननेवाली सुबल गान्धारी महात्मा श्रीकृष्णका वुलाकर ऐसे वचन बोली। हे कमल नेत्र कृष्ण ! हे माधव ! देखो हमारे बेटोंकी स्त्री विधवा होकर वाल खोले कुररीके समान रो रही हैं. ये अपने अपने पति-

योंके गुण सारण करके रो रही हैं, वे अपने अपने पति पुत्र और पिताको ढ़ंढ रही हैं। ये युद्धमृमिमें अनेक बीर माता और अनेक बीरोंकी स्त्री अपने अपने पुत्र और पतियोंको देख रो रही हैं।(१५---ं२०)

ये देखो पुरुषसिंह कर्ण, मीध्म, अभिमन्यु, द्रोचाणार्यं, महाराज द्रपद और महाराज श्रन्य आदि वीर, जलती हुई अग्निके समान मरे हुवे पडे हैं।यह युद्धभूमिमें सोनेके कवच, निष्क्रमणि, वीरोंके बाजूबन्द, अङ्गठी, माला,वीरी-

खड़ैश्च विविधस्तीक्ष्णैः सशरैश्च शरासनैः ॥ २३ ॥ कव्यादसङ्केर्सदितैस्तिष्ठद्भिः सहितैः कचित्। कचिदाकी डमानैश्च दायानैश्वापरैः कचित् 11 88 11 एतदेवंविधं वीर सम्पर्यायोधनं विभो। पश्यमाना हि दश्चामि शोकेनाहं जनार्दन 11 29 11 पश्चालानां क्ररूणां च विनाशे मधुसदन। पत्रानामपि भूतानामहं वधमचिन्तयम् ॥ २६॥ तान्सुपर्णाञ्च गुन्नाञ्च कर्षयंत्यसुगुक्षिताः। विगृह्य चरणैर्गृष्टा भक्षयन्ति सहस्रशः 11 29 11 जयद्रथस्य कर्णस्य तथैव द्रोणभीष्मयोः। अभिमन्योर्विनाशं च कश्चिन्तयितुमहित 11 25 11 अवध्यकल्पान्निहतान् गतसत्वानचेतसः। गृथकङ्कवरर्येत्रश्वसृगालादनीकृतान् 11 99 11 अमर्षवशमापन्ना<sup>न्</sup> दुर्योधनवशे स्थितान्। पद्येमान्पुरुषव्याञ्चान् संज्ञान्तान्पावकानिव ॥ ३० ॥ शयाना ये पुरा सर्वे मृदूनि शयनानि च।

के हाथसे टूटे हुये सांगी, परिव, खड़ अनेक प्रकारके वाणवान वृतुष पहे हैं। (२१--२३)

नहीं मांस खानेवाले पक्षी प्रसन्न होकर वैठे हैं, कहीं खेल रहे हैं और कहीं ख़खसे सो रहे हैं। हे बीर! हे भगवन् ! हे जनार्दन ! उनको देखकर मेरा हृदय श्रोकसे जला जाता है। इस पाश्चाल और कुरुकुलके नाशसे हमें ऐसा जान पडता है, कि सव जगत्का नाश हो गया। देखो इन वीरोंके रुधिरमें भीगे बरीरोंको सहस्रों गिद्ध आदि पक्षी

वीरका पेट बींचे लिये जाते हैं।(२४-२७)

जयद्रथ, कर्ण, भीष्म और अभिमन्यु आदि वीरोंके मृत्यु देखकर किसे शोच न होगा । जिनको कोई नहीं मार सका था, आज उनको चैतन्यरहित निरख-कर, मनुष्यके समान मरा हुआ देखकर कौने, सियार और गिद्ध खारहे हैं। ये सब बीर क्रोधके वशमें होकर दुर्योधनकी आज्ञासे युद्धमें मारे गये, ये पुरुषसिंह वीर इस समय जलती हुई अधिके समान पृथ्वीमें पहे हैं। (२८-३०)

विपन्नास्तेऽच वसुषां विवृतामिषि शेरते 11 38 11 वन्दिभिः सततं काले स्तुवद्भिरभिनन्दिताः। शिवानामशिवा घोराः शृण्वान्त विविधा गिरः**॥३२॥** ये पुरा दोरते वीराः द्यायनेषु यदाखिनः। चन्दनागुरुदिग्धाङ्गास्तेऽद्य पांसुषु दोरते 11 33 11 तेषामाभरणान्येते गृधगोमायुवायसाः। आक्षिपन्ति शिवा घोराः विनदंखः पुनः पुनः ॥६४॥ बाणान्विनिशितान्पीतान्निस्त्रिशान् विमला गदाः। युद्धाभिमानिनः सर्वे जीवन्त इव विम्रति 11 39 11 सुरूपवर्णा बहवः ऋष्यादैरवघटिताः। ऋषभप्रतिरूपाश्च शेरते हरितस्रजः 11 35 11 अपरे पुनरालिङ्गच गदाः परिघवाहवः। शेरतेश्भिमुखाः शुरा द्यिता इव योषितः विभ्रतः कवचान्यन्ये विमलान्यायुषानि च। न धर्षयन्ति कव्यादा जीवन्तीति जनार्दन .क्रड्यादैः क्रुष्यमाणानामपरेषां महात्मनाम् । शातकौम्भ्यः स्रलिश्चत्रा विप्रकीणीः समन्ततः॥३९॥

थे सो आज पृथ्वीमें ग्रह फैलाये पडे हैं, पहिले जो सदा भाटोंके मुखसे स्तुति सुनकर प्रसन्न होते थे, वे आज अनेक प्रकारके भयानक सियारियोंके शब्द सुन रहे हैं। जो पहिले यशस्वी वीर श्रीरमें चन्दन और अगर लगा-कर पलङ्कपर सोते थे, सो आज धृलमें लोटते पृथ्वीमें पहे हैं। उनके भूपणोंको घोर शब्द करते युद्धमें सियार और कीवे इधर उधर खींच रहे हैं, ये अभि-. मानी वीर अब तक भी तेजवान खड़ग

जैसे जीते हुए लिये रहते थे, अनेक सुन्दर वीरोंके हाथोंको मांस खानेवाले जन्तु इधर उधर लिये घूमते हैं, इस समय भी उनका तेज सर्यके समान दिखाता है, कोई परिचके समान सुन्दर हाथवाले वीर गदाको छातीसे लगाये युद्धकी और मुख किये इस प्रकार सोते हैं, जैसे अपनी प्यारी स्त्रीके सङ्ग सोते थे। किसी वीर को कवच, विमल शस्त्र घारण किये देख और उन्हें जीता जान कोई मांस खानेवाला जन्तु उनके पास

पते गोमायवो मीमा निहतानां यद्याखिनाम् ।

कण्ठान्तरगतान्हारानाक्षिपन्ति सहस्रद्याः ॥ ४० ॥

सर्वेष्वपरराञ्चेषु या ननन्दन्त वन्दिनः ।

स्नुतिभिश्च पराध्याभिरूपवारैय शिक्षिताः ॥ ४१ ॥

तानिमाः परिदेवन्ति दुःखाताः परमाङ्गनाः ।

कुपणं वृष्णिद्यार्द्वे दुःख्योकार्दिता स्ट्रणम् ॥ ४२ ॥

रक्तोत्पल्वनानीव विभान्ति कविराणि च ।

सुखानि परमस्त्रीणां परिद्युक्ताणि केशच ॥ ४३ ॥

रक्तोत्पल्वनानीव विभान्ति कविराणि च ।

सुखानि परमस्त्रीणां परिद्युक्ताणि केशच ॥ ४३ ॥

रक्तोत्पल्वनानीव विभान्ति कविराणि च ।

सुखानि परमस्त्रीणां परिद्युक्ताणि केशच ॥ ४३ ॥

रक्तोत्पल्वनानीवि तपनीयनिभानि च ।

रोपरोदनताम्राणि वक्त्राणि कुरुयोपिताम् ॥ ४५ ॥

रवामानां वरवर्णानां गौरीणामेकवाससाम् ।

सुर्योधनवरस्त्रीणां पर्य वृन्दानि केशव ॥ ४६ ॥

असमामरिष्णार्थ निश्चस्य परिदेवितम् ।

इत्रोत्तरसंक्रन्दान्न विज्ञानन्ति योपितः ॥ ४७ ॥

वीरको मांसमसी वीर खिच रहे हैं

और उनकी सोनेकी माला इघर उघर

कैली जाती है । ये देखो, ये भयानक

सियार महास्मा बीरोंके गलेसे हार

निकालकर हघर उघर खींचे फिरवे

हैं । (३१-४०)

जो सी पहिले समयमें रात्रिके पिछले

पहर्मे मारोंके मुखसे स्तुति सुनकर

जागती यी और जो जनेक पूजा और

विश्वसि सुन्त पी, वेही खाल ग्रोक और

विश्वसि सुन्त पी, वेही खाल ग्रोक और

दिश्वसे व्याकुल होत्रयों सिलेक्त सुन्त सुन्त

एता दीघेमिवाच्छ्वस्य विक्रुइय च विलप्य च। विस्पन्दमाना दु।खेन वीरा जहति जीवितम् ॥ ४८ ॥ यहयो दृष्टा शरीराणि कोशन्ति विलपन्ति च। पाणिभिश्चापरा व्रन्ति शिरांसि सृदुपाणयः ॥ ४९ ॥ शिरोभिः पतितैईस्तैः सर्वार्गर्युथशः कृतैः। इतरेतरसम्प्रकैराकीर्णा भाति मेदिनी विशिरस्कानथो कायात् दृष्टा धाताननिन्दितात् । मुखन्यनुगता नार्यो विदेहानि शिरांसि च शिरः कायेन सन्धाय प्रेक्षमाणा विचेतसः। अपइयन्यो परं तत्र नेदमस्येति दुःखिताः ॥ ५२ ॥ वाहरुचरणानन्यान् विशिखोन्माथेतान्पृथक्। सन्द्रधस्योऽसुखाविष्टा मूर्छन्त्येताः पुनः पुनः ॥ ५३ ॥ उत्कृत्य शिरसञ्चान्यान्विजन्धानमृगपक्षिभिः। हट्टा काश्चित्र जानान्त भर्तृन् भरत योषितः॥ ५४ ॥ पाणिभिश्रापरा ब्रन्ति शिरांसि मधुसूद्न । वेक्ष्य भ्रातृन्पितृन्युत्रान्पतींश्च निहतान्परै। याहुभिश्व सल्द्रैश्च शिरोभिश्च सकुण्डलै।।

तक रोकर ऊंचे शांस लेकर और दुःख-से च्याकल होकर इस प्रकार पृथ्वीमें पडी हैं, मानों अभी मर जांयगी।(४६-४८)

कोई अपने पतियोंका श्रीर देखकर रोति है, कोई कोमल हार्थीसे शिर पीट रही है। इस समय यह युद्धभामि कटे हुए शिर, हाथ और श्वरीरोंसे पूर्ण दीखती ये देखों ये स्त्री शरीररहित जिर और शिररहित शरीरोंको देखकर मृच्छित हो रही हैं। कहीं कोई दु।खसे च्याकुल होकर शरीरमें शिर

यह शिर इनका नहीं है । कोई वाणें से कटे हुवे हाथ, पैर और जांघ मिलाकर दुःखसे च्याकुल होरहीं हैं। कोई कुरु-क्रलकी स्त्री स्यार और पक्षियोंसे खाये हुवे शिर हाथमें लेकर अपने पतियोंको नहीं पहिचानती । ( ४९-५४ )

हे मधुसद्वन ! कोई शश्रुओंके हाथसे मरे भाई, पुत्र और पतियोंको पृथ्वीमें पडा देख हाथोंसे शिर पीट रही हैं। इस समय यह रुचिर और मांसके की चड मरी, कटे हुवे खङ्गके सहित,

अगम्यकल्पा पृथिवी मांस्योणितकर्दमा ॥ ५६ ॥ वभूव भरतश्रेष्ठ पाणिभिर्गतजीवितै।। न दुःखेपृचिताः पूर्वं दुःखं गाहन्त्यनिन्दिताः॥ ५७ ॥ भ्रातृभिः पतिभिः पुत्रैरुपाकीर्णा वसुन्धरा । यूथानीव किशोरीणां सुकेशीनां जनार्टन 11 46 11 स्तुषाणां घृतराष्ट्रस्य परुय वृन्दान्यनेकद्याः । इतो दु।खतरं किन्तु केशव प्रतिभाति मे 11 49 11 यदिमाः क्रवेते सर्वा रूपमुचावचं स्त्रियः। नुनमाचरितं पापं मया पूर्वेषु जन्मसु या पर्यामि हतान्तुत्रान पौत्रान् भ्रातृंश्च माधय । एवमार्ता विलपती समाभाष्य जनाद्नम्। गान्धारी पुत्रशोकार्ता ददर्श निहतं सुतम् ॥ ६१ ॥ [४८१]

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्यां संहितायां वैयासिक्यां खीपर्याण खीविलापपर्याण आयोधिनदेशीने पोडशोऽध्यायः॥ १६ ॥

वैश्वम्पायन उपाच–दुर्योधनं हतं दृष्टा गान्धारी ज्ञोककर्दिाता । सहसा न्यपतद्भूमौ छिन्नेव कद्ली वने 11 8 11

शोणित पूर्ण हो गई है कि जानने योग्य नहीं रही । ( ५५-५६ )

अगम्यकल्पा अगम्यकल्पा अगम्यकल्पा अगम्यकल्पा अगम्यकल्पा अगम्यकल्पा अगम्यकल्पा अगम्यकल्पा अगम्यक्षानि के स्तुषाणां घृत इतो दु!स्वतं या पञ्चािम एवमातां वि पान्धारी पुः इति श्रीमहामारते शक्सा आयो वैश्वम्पायन उषाच-दुर्थोधनं हत् सहसा न्यप शोगित पूर्ण हो गई है कि योग्य नहीं रही। (५५-५६) हे यदुक्कुलश्रेष्ठ! यह भूमि श्रितींसे मर गई है, ये निन्दार दु!ख मोगने योग्य नहीं थी, दु!ख मोगने योग्य नहीं थी, दु!ख मोग रही हैं। यह युद्ध-समय हन मरे हुए श्ररीरोंसे ऐ होगई जैसे तारामणसे रात्रिमें पूर्ण होता है। इस समय महार राष्ट्रके वेटोंकी थोडी अवस्थाव सन्दर वालांवाली स्त्रिगेंक अ इयर उधर घूमते फिरते हैं, इससे अधक दु!ख और क्या हे यदुक्तलश्रेष्ठ ! यह भूमि मरे हुए शरीरोंसे भर गई है, ये निन्दारहित स्त्री दुःख भोगने योग्य नहीं थी, परन्तु दुःख भोग रही हैं। यह युद्धभूमि इस समय इन मरे हुए श्वरीरोंसे ऐसी पूर्ण होगई जैसे तारामणसे रात्रिमें आकाश पूर्ण होता है। इस समय महाराज धृत-राष्ट्रके बेटोंकी योडी अवस्थावाली और सुन्दर बालोंबाली स्त्रियोंके अनेक बुंड इघर उधर घूमते फिरते हैं, मेरे लिये इससे अधिक दु:ख और क्या होगा ? में

जो इन ख़ियोंके ऐसे रूप देखती हूं इससे निश्रय होता है कि मैंने पहिले जन्ममें महा अपराध किया है। (५७-६०)

हे कृष्ण ! मेरे सब बेटे और सब पोते मारे गये और इससे और अधिक दुःख क्या होगा ? श्रीकृष्णसे ऐसा कहकर गान्धारी रोने लगी और उसने मरे हुने बेटेको देखा।(६१) [ ४८१ ]

खीपवेंमें सोलह अध्याय समास।

स्तीपर्वमें सतरह अध्याय ।

श्रीवैश्वम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! दुर्योधनको मरा हुआ देख-

पंज्ञां विक्रुद्ध च विल्प्य च ।

प्यानं रुधिराक्षितम् ॥ २ ॥

रि कुपणं पर्यदेवयत् ।

र्गा विल्लापाकुलेन्द्रिया ॥ ३ ॥

निष्कित्रम् ।

सिश्चन्ती शोकतापिता ॥ ४ ॥

नेदं वचनमञ्जवीत् ।

श्वातीनां संक्षये विभो ॥ ५ ॥

पाञ्चलिर्यपस्तमः ।

जियमम्या त्रवीतु मे ॥ ६ ॥

पाञ्चलिर्यपस्तमः ।

जियमम्या त्रवीतु मे ॥ ६ ॥

गई खव्यसनागमम् ।

रो धर्मस्ततो जयः ॥ ७ ॥

गं न वै सुद्धासि पुत्रकः ।

कान् पाप्स्यस्यमरवत्त्रभो ॥ ८ ॥

श्वातीनी वै प्रभो ।

कुपणं हतवान्यवम् ॥ ९ ॥

श्वातीनीत पहिले ही जान लिया था

तव मैंने कहा कि, हे पुरुषसिंह ! जहां

धर्म है वहांही विजय होगी। तुम युद्धमें

श्वस्ते मरकर देवतींके लोकको जावो ।

हे कृष्ण ! मैंने इसका मुक्ते कुछ

श्वात्र नहीं है परन्तु बन्धुरहित

दीन राजा धृतराष्ट्रका शोच करती

है । (५-९) सा तु लब्ध्वा पुनः संज्ञां विक्रुर्य च विलप्य च । दुर्योधनमभिप्रेक्ष्य ज्ञायानं रुधिरोक्षितम् परिष्वज्य च गान्धारी कृपणं पर्यदेवयत्। हा हा पुत्रेति शोकार्ता विललापाकुलेन्द्रिया सुग्दजञ्जविपुलं हारानिष्काविभाषितम्। वारिणा नेत्रजेनोरः सिश्चन्ती शोकतापिता समीपस्यं ह्योकेशमिदं वचनमत्रवीत्। उपस्थितेऽसिन्संग्रामे ज्ञातीनां संक्षये विभो मामयं प्राह वार्ष्णेय प्राञ्जालिर्नेपसत्तमः। असिन् ज्ञातिसमुद्धेष जयमम्या त्रवीत मे इत्युक्ते जानती सर्वमहं खव्यसनागमम्। अञ्चवं पुरुषव्याघ यतो धर्मस्ततो जयः यथा च युध्यमानस्त्वं न वै मुह्यसि पुत्रक। ध्रवं दास्त्रजितान् लोकान् प्राप्स्यस्यमरवत्त्रभो ॥ ८ ॥ इत्येवमह्रवन्पूर्वं नैनं शौचामि वै प्रभो। धृतराष्ट्रं तु शोचामि कृपणं इतवान्धवम्

सा तु लब्धन प् दुर्योधनमिन्ने क्ष परिष्वच्य च गा हा हा पुत्रेति को सुग्रहजञ्जविपुलं वारिणा नेत्रजेने समीपस्यं हुषीने उपस्थितेऽसिन्सं मामयं पाह वाष असिन् ज्ञातिसः इस्युक्ते जानती अञ्चवं पुरुषच्याः यथा च युध्यमा श्चवं वास्त्रजितान इत्येवमञ्चवन्पूर्व धृतराष्ट्रं तु कोच् इस प्रकार पृथ्वीमं गिर पडी जैसे केले का वृक्ष टूट कर गिर पडता है, पि योडे समयमं चैतन्य होकर किषर मीगे हुए दुर्योधनको उठाकर हा पुत्र हा पुत्र! कह कर रोने लगी। इस सम गान्धारीकी सब इन्द्री जोकसे व्याकु हो रही थीं, फिर हार आदि भूपणो युक्त हृदयको आसुओंसे मिगोती इ श्रीकृष्णसे ऐसे वचन बोली।(१-४) हे कृष्ण! जब ये क्षत्रियोंका ना करनेवाला युद्ध होनेवाला था, तव स् राजोंमें श्रेष्ठ दुर्योधनने हाथ जोडक इस प्रकार पृथ्वीमें गिर पडी जैसे केले-का बृक्ष टूट कर गिर पडता है, फिर थोडे समयमें चैतन्य होकर रुधिरसे मीगे हुए दुर्योधनको उठाकर हा पुत्र! हा पुत्र ! कह कर रोने लगी । इस समय गान्धारीकी सब इन्द्री शोकसे व्याकुल हो रही थीं, फिर हार आदि भूपणोंसे युक्त हृदयको आसुओंसे भिगोती हुई शोकसे व्याकुल होकर पास खडे हुए

हे कृष्ण ! जब ये क्षत्रियोंका नाज करनेवाला युद्ध होनेवाला था, तव सब

अपर्षणं युधां श्रेष्टं कृतास्त्रं युद्धदुर्भेदम् । श्रयानं वीरशयने पश्य माधव मे सुतम् 11 09 11 योऽयं मूर्घावसिक्तानामग्रे याति परन्तपः। सोऽयं पांसुषु द्योतेऽच पद्य कालस्य पर्ययम् ॥ ११ ॥ ध्रवं दुर्योधनो वीरो गतिं सुलभतां गतः। तथा ह्यभिमुखः शेते शयने वीरसेविते 11 88 11 यं प्ररा पर्युपासीना रमधन्ति वरस्त्रियः। तं वीरकायने सुप्तं रमयंत्यिकावाः शिवाः ॥ १३ ॥ यं पुरा पर्युपासीना रमयन्ति महीक्षितः। महीतलखं निहतं गृधास्तं पर्युपासते 11 88 11 यं पुरा व्यजनै रम्यैरुपवीजन्ति योषितः। तमच पक्षव्यजनैरुपवीजन्ति पक्षिणः ॥ १५॥ एष शेते महाषाहुर्वेलवान सत्यविकमः। सिंहेनेव द्विपः संख्ये भीमसेनेन पातितः 11 88 11 पदय दुर्योधनं कृष्ण शयानं रुधिरोक्षितम् । निहतं भीमसेनेन गदां सम्मुख्य भारत ॥ १७॥

श्रमणे श हे कृष्ण ! ये देखो महा बलवान् सब शस्त्र विद्या जाननेवाले महा क्रोधी वीर श्रेष्ठ दुर्योधन आज पृथ्वीमें सोते हैं। देखो समयकी गति कैसी कठिन है कि जो शञ्जनाशन दुर्योधन पहिले राजोंके आगे चलते थे, सो आज धृलमें लिपटे हुए पृथ्वीमें पडे हैं। हमें यह निश्रय होता है कि बीर दुर्योघन साधा-रण गतिको नहीं प्राप्त हुवे, ये अवस्य ही स्वर्ग लोकको गये, क्योंकि इस समय तक भी युद्धहीकी ओर मुख करके सोते हैं। जिस चीरके पास पहिले

वीर श्रय्यापर सोते हुए देख भयानक सियारी पास वैठी हैं। जिसके पास पहिले राजा लोग वैठते थे, आज उसही मरे हुए पृथ्वीमें पड़े दुर्योधनके पास गिद्ध वैठे हैं। पहिले समयमें उत्तम पह्वोंसे इवा की जाती थी, आज उस हीको कौने अपने पंखोंकी हवासे शीतल कर रहे हैं। ये महा बलवान् सत्य पराक्रमी महावाह दुर्योधनको युद्धमें भीमसेनने ऐसे मारा जैसे सिंह हाथीको मार डालता है। (१०-१६)

हे कृष्ण ! ये देखो वीर दुर्योधन मीमसेनके हाथसे सरकर गदा लिये

अक्षौहिणीर्भहाबाहुर्दशचैकां च केशव । आनययः पुरा संख्ये सोऽनयान्निधनं गतः एप दुर्योघनः शेते महेष्वासो महाबलः। शाद्ल इव सिंहन भीमसेनेन पातितः 11 28 11 विदुरं हावमन्यैप पितरं चैव मन्दभाक्। वालो वृद्धावमानेन मन्दो मृत्युवशं गतः निःसपत्ना मही यस्य त्रयोदशस्माः स्थिता। स होते निहतो भूमौ पुत्रो मे पृथिवीपतिः अपर्यं कृष्ण पृथिवीं धार्तराष्ट्रानुशासिताम्। पूर्णी हस्तिगवाश्वैश्च वार्ष्णेय न तु तचिरम् तामेवाच महावाहो पश्याम्यन्यानुशासिताम् । हीनां हस्तिगवाश्वेन किं नु जीवामि माधव ॥ २३॥ इदं कष्टतरं पद्य पुत्रस्थापि वधान्मम । यदिमाः पर्युपासन्ते इतान श्रुरान् रणे स्त्रियः ॥ २४ ॥ प्रकीर्णकेशां सुश्रोणीं दुर्योधनशुभाङ्गगाम्। रुक्मवेदीनिभां पर्च कुष्ण लक्ष्मणमातरम् ॥ २५ ॥ नृनमेषा पुरा बाला जीवमाने महीसुजे।

रुचिरमें भींगे पृथ्वीमें सोते हैं; देखो किसी दिन ग्यारह अक्षीहिणी सेना इनके सङ्घ थी सो आज मर कर पृथ्वीमें पहें हैं। जो महा धनुषधारी महा बलवान् दुर्योधन भीमसेनके हाथसे मर कर इस प्रकार पृथ्वीमें पडे हैं जैसे सिंहके डरसे शाईल । इस मूर्ख बालकने विदुर और महाबाह्य धृतराष्ट्रका निरादर किया था, इससे इस अवस्थाको पहुंचा। जिसके वश्रमें शञ्जरहित पृथ्वी तेरह वर्ष तक रही थी, वही महाराज दुर्योधन आज पुछ्वीमें पडे हैं। (१७-२१)

हे कृष्ण । थोडे ही दिन हुए कि हाथी, घोडे और गाडीसे मरी पृथ्वी राजा दुर्योधनकी आज्ञामें चलती थी, से। आज दाथी, घोडे और बलसे हीन होकर द्सरेकी आज्ञामें चलती है। अब हमें जीनेसे क्या सुख है। देखों अनेक स्त्रियां मरे हुए वीरके पास वैठी हुई रोरहीं हैं।( २२-२४)

हे कृष्ण ! ये देखो उत्तम बाल और पतली कमरवाली लक्ष्मणकी दुर्योधनको गोद्में लिये सोनेकी देवीके

भुजावाश्रिल रमते सुभुजस्य मनस्विनी ॥ २६ ॥ कथं तु शतधा नेदं हृद्यं मम दीर्थते। पश्यन्खा निहतं पुत्रं पौत्रेण सहितं रणे 11 20 11 पुत्रं रुधिरसंसिक्तसुपजिघलनिन्दता। दुर्योघनं तु वामोरूः पाणिना परिमार्जती किं नु शोचित भतीरं पुत्रं चैषा मनस्विनी। तथा खंबस्थिता भाति पुत्रं चाप्यभिवीक्ष्य सा॥२९॥ स्वज्ञिरः पञ्चज्ञाखाभ्यामभिह्लायतेक्षणा । पतत्युरसि वीरस्य क्रक्राजस्य माधव 11 30 11 पुण्डरीकनिभा भाति पुण्डरीकान्तरप्रभा । मुखं विमुज्य पुत्रस्य मर्तुश्चैव तपस्विनी 11 38 11 यदि सलागमाः सन्ति यदि वै श्रुतयस्तथा। धुवं छोकानवाप्तोऽयं चपो वाहुबर्ळार्जितान् ॥ ३२ ॥ [५१३]

इति शीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां दैयासिक्यां खीपवीण खीविकापपवीण

द्वींचनदर्शने सहदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

गान्धायुंबाच- पर्य माधव प्रज्ञानमे रातसंख्यान जितक्कमान्। गद्या भीमसेनेन भूयिष्ठं निहतान् रणे इदं दुःखतरं मेऽच यदिमा सुक्तमूर्धजाः।

अश्री विश्वास के प्राप्त के कि मार्थ के क थे, तब यह सुन्दरी उनके पास बैठ कर विलास करती थी । मैं अपने बेटे पोते-को मरा हुवा देखती हूं तो भी मेरे हृदयके सौ हुकड़े नहीं होते, ये देखो निन्दारहित लक्ष्मणकी माता अपने पुत्रका माथा संघती हैं और दुर्योधनको द्दाथसे पोछती हैं। ये इस समय अपने पति और पुत्रका सोच कर रही हैं। ये वहे नेत्रवाली रानी अपने दोनों हाथोंसे शिर पीटती है और दुर्योधनके

गिरी दूसरे कमलके समान दिखती है कभी अपने पुत्रको पूंछती है। यदि वेद और श्रुति सब सत्य है तो राजा दुर्योधनने अवस्पही अपने बाहु वलसे खर्गको जीत लिया।(२५-३२)[५१३]

खीपर्वमें सतरह अध्याय समाप्त ।

स्तीपवैमें अठारह अध्याय | गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये देखो मीमसेनकी गदासे मरे हुवे परिश्रम रहित मेरे सौ बेटे पृथ्वीमें पढे हैं, इससे

स्री इस युद्धभूमिको देखकर दुःखसे

प्रवैजातिकतं पापं मन्ये नाल्पमिवानघ । एताभिर्निरवद्याभिर्मया चैवाल्पमेघया 11 88 11 यदिदं धर्मराजेन घातितं नो जनार्दन। न हि नाशोऽस्ति वार्ष्णेय कर्मणोः शुभपापयोः। प्रत्यग्रवयसः पर्य द्र्शनीयकुचाननाः कुलेषु जाता हीमलः कृष्णपश्माक्षिमुर्धजाः ॥ १३॥ हंसगद्गदभाषिण्यो दुःखञ्चोकप्रमोहिताः। सारस्य इव वाशंखः पतिताः पश्य माधव फुलपद्मप्रकाशानि पुण्डरीकाक्षयोषिताम् । अनवचानि वक्त्राणि तापयत्येष रिश्मवान् ॥ १५॥ ईर्षुणां सम प्रत्राणां वासुदेवावरोधनम् । मत्तमातङ्गदर्भाणां पश्यन्त्यद्य पृथग्जनाः शतचन्द्राणि चर्माणि ध्वजांश्चादित्यवर्षसः। रौक्माणि चैव वर्माणि निष्कानपि च काश्रनान्॥१७॥ रीर्षेत्राणानि चेतानि पुत्राणां मे महीतले । पर्य दीप्तानि गोविन्द पावकान्सुहुतानिव 11 28 11 एष दुःशासनः शेते शूरेणामित्रघातिना । पीतशोणितसर्वाङ्गो युवि भीमेन पातितः 11 99 11

कटा हुआ कुण्डल समेत शिर हाथमें लेकर रोरही है, हमें यह निश्चय होता है कि मैंने और सब स्त्रियोंने पहिले जन्ममें कोई महा पाप किया था, इसीसे धर्मराजेने इस वंशका नाश किया। हे कृष्ण ! पहिले किये हुए पुण्य और पापका अवश्य ही फल होता है। ये देखों बढ़े बढ़े कुलमें उत्पन्न हुए काले बालोंवाली लजावती हंसके समान सुन्दर बोलोंवाली स्त्री शोक और दु:खसे व्याकुल सारसीके समान रोरही

## है।(१०-१४)

हे कृष्ण ! ये देखो इन स्त्रियों के सुखको स्त्रें अपने किरणों से तपा रहा है। हे कृष्ण ! ये देखो महा अभिमानी मतवाले हाथियों के समान बलवान मेरे बेटों के अनेक चन्द्रमायुक्त बाल स्र्यें के समान सोने के कवच सोने की माला पृथ्वीमें इस प्रकार पढे हैं जैसे जलती हुई अगि। हे कृष्ण ! ये देखो शत्रुनाशन वीर भीमसेनके हाथसे मर कर पृथ्वीमें सोते हैं। भीमसेनने

गद्या भीमसेनेन पश्य माधव मे सुतम्। च्तक्केशाननुस्मृत्य द्रौपदीनोदितेन च 11 30 11 उक्ता सनेन पात्राली सभायां चूतनिर्जिता। प्रियं चिकीर्षता भ्रातुः कर्णस्य च जनार्दन ॥ २१ ॥ सहैव सहदेवेन नक्कलेनार्जुनेन च। दासीसृताऽसि पाञ्चालि क्षिप्रं प्रविश नो गृहान्॥२२॥ ततोऽहमञ्जुदं कुष्ण तदा दुर्योधनं रूपम्। सृत्युपाशपरिक्षिप्तं शक्कानिं पुत्र वर्जय 11 23 11 नियोधनं सुदुर्देद्धिं मातुलं कलहाप्रियम्। क्षिप्रमेनं परित्यन्य पुत्र ज्ञाम्यस पाण्डवैः ॥ २४ ॥ न बुद्ध्यसे त्वं दुर्बुद्धे भीमसेनममर्पणम् । वाङ्नाराचैस्तुदंस्तीक्ष्णैकल्काभिरिव कुञ्जरम् ॥ २५ ॥ तानेवं रहसि कुद्धो वाक्काल्यानवधारयन् । उत्ससर्ज विषं तेषु सर्पो गोवृषभेष्विव 11 28 11 एष दुःशासनः शेते विक्षिप्य विपुरी सुजी। निहतो भीमसेनेन सिंहेनेव महागतः 11 29 11

इनके सब धरीरका रुधिर पी लिया, भीमसेनने इसे जुवेमें जीती हुई द्रीपदी के वचनसे मार डाला। (१५–२०)

हे कृष्ण । इसने कर्ण और दुयों-धनको प्रसन्न करनेके लिये जुवेमें जीती हुई द्रीपदीसे कहा था की, हे पात्राली! तू नकल, सहदेन, और अर्जुनके सहित हमारी दासी होगई। अब हमारे घरमें जाकर दासीके काम कर। हे कृष्ण ! मैंने उस ही समय राजा दुर्योधनसे कहा था कि, हे पुत्र ! इस मृत्यु कि फांसमें पढ़े हुवे लडाईके प्यारे दुर्नुद्धि अपने मामा शकुनीको त्याग कर पाण्डवोंसे सन्धि कर छे, अरे दुर्बुद्धे ! तू क्रोधी भीमसेनको नहीं जानता, जैसे कोई मसाल जलाकर हाथीको क्रोधित करता है ऐसे ही तू अपने वचन रूपी तेज बाणोंसे मीमसेनको क्रोध दिलाता है। मैंने एक बार क्रोध करके अपने पुत्रोंको ऐसे ही समझाया था, परन्तु उन्होंने न माना, इसीसे पाण्डवोंने उन्हें इस प्रकार नष्ट कर दिया जैसे विषेला सांप अपने विषसे बैलोंका नाश करता है, ये दुःशा-श्चन अपने बढ़े बढ़े हाथ फैलाये बलवान इस प्रकार पृथ्वीमें पढ़े हैं जैसे सिंहसे मर कर हाथी, महा क्रोधी

अत्यर्थमकरोद्रौद्रं भीमसेनोऽत्यमर्पणः।

दु।शासनस्य यत्कुद्धोऽपिबच्छोणितमाहवे ॥ २८ ॥ [५४१]

इति श्रीमहाभारते० स्त्रीपर्वणि स्त्रीविकापपर्वणि गांधारीवाक्ये अष्टादशोऽध्याय: ॥ १८ ॥ गान्धार्युवाच— एष माधव पुत्रो मे विकर्णः प्राज्ञसम्मतः। भूमौ विनिहतः शेते भीमेन शतधाकृतः गजमध्ये हतः शेते विकर्णो मधुसुद्वन नीलमेघपरिक्षिप्तः शरदीव निशाकरः 11 3 11 अस्य चापग्रहेणैव पाणिः कृतिकणो महान्। कथंचिच्छिचते गृधैरत्तुकामैस्तलत्रवान् 11311 अस्य भार्योऽऽमिषप्रेप्सून् ग्रधकाकांस्तपस्तिनी। वारयत्यनिशं वाला न च शक्नोति माधव 11811 युवा बृन्दारकः शूरो विकर्णः पुरुषर्धभ । सुलोषितः सुलाईश्च शेते पांसुषु माघव 11911 कर्णिनालीकनाराचैर्भिन्नमर्भाणमाहवे । अद्यापि न जहात्येनं लक्ष्मीर्भरतसत्तमम 11 5 11 एष संग्रामशूरेण प्रतिज्ञां पालियष्यता ।

दुर्भुखोऽभिमुखः शेते हतोऽरिगणहा रणे

भीमसेन ये महा घोर कर्म किया जो दुःशासनका रुधिर पिया । (२१-२८) खीपर्वमें अठारह अध्याय समाप्त । [५४१]

स्रीपर्वमें उनीस अध्याय ।

गान्धारी बोली हे कृष्ण ! ये देखो मेरे पुत्र महापण्डित विकर्ण सीमसेनके वाणोंसे सौ इकडे हुए पृथ्वीमें पडे

हे मधुसदन ! ये हाथियोंके झण्डमें पडे हुए विकर्ण ऐसे शोमित होरहे हैं, जैसे गरदकालके मेघोंके बीचमें चन्द्र-मा, ये देखो इसके धनुषाँको

हाथके गांस खानेके छिये गिद्ध काट रहे हैं। हे कृष्ण ! इसकी तपिस्त्रनी स्त्रीं मांस खानेवाले गिद्धोंको बहुत कष्टसे हटाती है, परन्तु हटा नहीं सकती। हे कृष्ण ! जो विकर्ण सुखसे सोने योग्य था, सो आज धृलमें लपटा हुआ पृथ्वी में पडा है, इसके सब मर्मस्थान बाणोंसे कट गये हैं, तौभी तेज नष्ट नहीं ह-आ। (२-६)

11 0 11

हे कृष्ण! ये शत्रुनाशन दुर्मुख युद्धकी ओर मुख किये प्रतिज्ञापालक मीमसेनके हाथसे मरे हुए पडे हैं, उन-

46966666666666666666666 तस्येतद्वद्नं कृष्ण श्वापदैरर्घभक्षितम् । विभात्यभ्यविकं तात सप्तम्यामिव चन्द्रमाः शूरस्य हि रणे कृष्ण पश्याननमथेहशम्। स कथं निहतोऽमित्रैः पांसून् ग्रसति मे सुतः ॥ ९ ॥ यस्याहवसुखे सौम्य स्थाता नैवोपपद्यते। स कथं दुर्भुखोऽमित्रैईतो विव्यलोकजित 11 09 11 चित्रसेनं इतं भूमी शयानं मधुसदन। षार्त्तराष्ट्रमिमं पद्य प्रतिमानं घनुष्मताम् # 88 # तं चित्रमाल्याभरणं युवलः शोककर्षिताः। अव्यादसङ्घेः सहिता रदसः पर्युपासते 11 88 11 स्त्रीणां रुदितनिर्घोषा श्वापदानां च गर्जितम्। चित्ररूपमिदं कृष्ण विचित्रं प्रतिभाति से 11 83 11 युवा बृन्दारको नित्यं प्रवरस्त्रीनिषेवितः। विविंशतिरसौ शेते ध्वस्तः पांसुषु माधव 11 \$8 11 शरसंक्रत्तवर्माणं वीरं विशसने हतम्। परिवार्यासते गृथाः पर्वय कृष्ण विविंशतिस् ॥ १५॥ प्रविद्य समरे शुरः पाण्डवानामनीकिनीम्।

का आधा मुख सियार खा गये हैं, तो भी वह ऐसा दीखता है, जैसे सप्तमीका चन्द्रमा, इस वीरका मुख अभीतक घोमासे नष्ट नहीं हुआ, तो भी न जाने यह श्रुओं के हाथसे मरकर धूलमें क्यों पहा है? जिस वीरके आगे युद्धमें कोई भी वीर खडा न हो सक्ता था, जो अपने बलसे स्वर्गकों भी जीत सकता था, वह दुर्मुख श्रुओं के हाथसे कैसे मारा गया ? (७-१०)

हे कुंष्ण ! जगत्में नीर जिस धनुष-धारीकी उपमा देते थे, वह धतराष्ट्रका वेटा चित्रसेन आज मरकर पृथ्वीमें सोता है। उस विचित्र मालाधारीके पास मांस खानेवाले जन्तुओं के सहित खडी हुई सुन्दर स्त्रियों के रोनेसे और मांस खानेवाले जन्तुओं के शब्दसे यह युद्ध-भूमि इस समय विचित्र दीखती है। (११—१३)

हे कृष्ण ! ये अपनी स्त्रियों के वीचमें पड़े कटे तरुण विधिश्चति धूलमें सोते हैं। इस वाणोंसे कटे हुए वीरके पास सहस्रों गिद्ध बैठे हैं, जिसने पाण्डवोंकी सेनाको व्याकुल कर दिया था, वही

स वीरकायने कोते परः सत्पुरुषोचिते ॥ १६॥
सितोपपन्नं सुनसं सुन्नु ताराधिपोपमम् ।
अतीव क्षुन्नं वहनं कृष्ण पद्य विविकातेः ॥ १७॥
एनं हि पर्युपासन्ते बहुधा वरयोषितः ।
क्रीडन्तमिव गंधर्वं देवकन्याः सहस्रकाः ॥ १८॥
हन्तारं परसैन्यानां क्ष्रुं समितिकोभनम् ।
निवर्हणममित्राणां दुःसहं विषहेत कः ॥ १९॥
दुःसहस्यैतदाभाति कारीरं संवृतं कारैः ।
गिरिरात्मगतेः फुल्लैः कर्णिकारैरिवाचितः ॥ २०॥
क्रातकौम्भ्या स्रजा भाति कवचेन च भास्तता ।
अग्निनेव गिरिः श्वेतो गतासुर्षि दुःसह ॥ २१॥ [५६२]

इतिश्रीमहाभारते स्रोपवंणि स्त्रीविकापपवंणि गोधारीवाक्ये एकोनविंकोऽध्यायः ॥ १९ ॥
गान्धार्युवाच — अध्यर्धगुणमाहुर्यं वले शौर्ये च केशव ।
पित्रा त्वया च दाशाई हमं सिंहमिवोत्करम् ॥ १ ॥
यो विभेद चम्मेको मम पुत्रस्य दुर्भिदाम् ।
स भूत्वा सृत्युरन्येषां स्वयं सृत्युवशं गतः ॥ २ ॥
नस्योपलक्षये कृष्ण काष्णेरमिनतेकसः।

आज महात्माके योग्य शय्यापर सोता है, इसका इंसता हुआ सुन्दर नाक और सुन्दर मोहनाला ग्रुख चन्द्रमाके समान देख रहा है, इसकी खी इसके पास ऐसी बैठी है, जैसे कीडा करते हुए गन्धनोंके पास देवतोंकी सहस्रों कन्या। ये देखो शश्रुओंकी सेनाके नाश करनेवाले महावीर दुः सहका श्रीर लगे हुए बाणोंसे ऐसा दीखता है, जैसे फले हुए कचनारके श्रुशोंसे पर्वत, सोनेकी माला और चमकते हुए कवचसे इसकी शोमा ऐसी दीखती है, जैसे जलती हुई अशि-

के सिंहत सफेट पर्वत की । (१४-२१) खीववैंमें उन्नीस अध्याय समाछ। [५६२.] स्त्रीपवैंमें बीस अध्याय।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! जिसकी जगत्में मनुष्य बल और तेज में आपसे छोटा कहते थे, जो सिंहके समान बल-बान था, उस अकेलेने दुर्योधनके मया-नक चक्रच्यूहको तोड दिया था, सो अमिमन्यु यञ्जुओंके लिये मृत्यु होकर आप मर गये। (१-२)

हे कृष्ण ! उस महातेजस्वी अर्जुन-पुत्रका तेज मरनेपर मी अभीतक शान्त अध्यव र० ] ११ कीवर्ष । १६६० विकर्ष । १६६० विकर्ष । १६६० विकर्ष समान स्वार्ध समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व समानस्व समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व समानस्व समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व समानस्व । १६६० विकर्ष समानस्व समा

काञ्चनाक्ष्य विष्णु सुन्न सुन ॥ १२ ॥ 11 88 11 11 88 11 आर्यामार्य सुभद्रां त्विममांश्च त्रिद्शोपमान्॥ १५ ॥ तस्य शोणितदिग्धान्वै कैशानुचम्य पाणिना ॥ १६॥ 11 60 11 11 28 11 11 88 11 कथं तु पाण्डवानां च पञ्चालानां तु पर्यताम् ॥ २० ॥

उत्तरा पूछती है कि तुम अर्जुनके वेटे और साक्षात् श्रीकृष्णके भानजे थे, सो युद्धमें कैसे मारे गये ? पाप कर्म करने-वाले कृपाचार्य, कर्ण, जयद्रथ, द्रोणा-चार्य और अध्यत्थामाको धिकार है. जिन्होंने मुझे विधवा कर दिया। जिस समय उन सबने अकेले वालक तुमको मिलकर मारा था, उनका मन कैसा होगया था ? पाश्चाल और पाण्डवोंके देखते देखते तुम्हे सनाथ होनेपर भी

प्रभाग २०] ११ बीपर्व | ७००

विकार प्रभाग २० विषय | ११ बीपर्व | ११ बीपर्व | ११ विषय |

उत्तरामपक्रव्येनामातीमातंतराः खयम् विराटं निहतं रष्ट्रा क्रोशन्ति विलपन्ति च। द्रोणास्त्रशरसंकृतं शयानं रुधिरोक्षितम् विरादं वितुद्न्त्येते गृधगोमायुवायसाः। वितुद्यमानं विह्रगैर्विराटमसितेक्षणाः न शक्तुवन्ति विहगान्निवारायितुमातुराः। आसामातपतप्रानामायासेन च योषिताम अमेण च विवर्णानां वक्त्राणां विष्ठुतं वपुः। उत्तरं चाभिमन्युं च काम्योजं च सुदक्षिणम्॥ ३४ ॥ शिश्नेतात् हतान्पर्य रुक्ष्मणं च सुद्रश्नम् । आयोधनशिरोमध्ये शयानं परुष माधव इति श्रीमहाभारते० खीपर्वणि स्त्रीविकापपर्वाणे गांघारीवास्ये विश्वतितसोऽध्याय: ॥ २० ॥

गान्धार्युवाच - एव वैकर्तनः द्येते महेच्वासो महारथः। ज्वारितानस्वत्संख्ये संशांतः पार्धतेजसा पइय वैकर्तनं कर्णं निहत्यातिरथान बहुन्। शौणितौघपरीताई रायानं पतितं सुवि अमर्षी दीर्घरोपश्च महेव्वासो महावलः। रणे विनिहतः शेते शूरो गाण्डीवधन्वना

कुलकी स्त्री उन्हें पकडती हैं, फिर आप ही विराटको रुधिरमें भीगे और द्रोणा-चार्यके बाणसे कटे पृथ्वीमें पडे देख वे आप ही रोती हैं, ये सियार, कीवे और गिद्ध उनका मांस खारहे हैं। ये उनकी सी मांस खानेवालोंको हटा नहीं सकती । और ये सब रानी घाम और परिश्रमसे व्याकुल होरही हैं इनके ग्रस द्ध कर पीले होगये हैं। हे कृष्ण ! ये उत्तरा अभिमन्यु, काम्बोजदेशी सदक्षिण लक्ष्मण और सदर्शन आदि बालक मरे

पडे हैं। ( २९-३५ ) [५९७] खीपर्वमें बीस अध्याय समाप्त । खीपर्वमें इकीस अध्याय ।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये दि-कर्तन पुत्र महा घनुषधारी महारथ कर्ण जलती हुई अग्निके समान अर्जुनके ही वाणरूपी जलसे शान्त होकर पहे, उन्होंने अनेक महारथोंको युद्धमें मारा था, सो आज ये रुधिरमें भीगकर युद्धमें मरे पडे हैं। ये महा क्रोधी महा ध्तुप-धारी बलवान वीर कर्ण अर्जनके हाधसे

A COUNTRE COUN

पंस्पाय र१ ]

प्राचित्र विकास स्वाप्त li 8 il 11911 11 8 11 11 0 11 11911 ततः शरेणापहतं शिरस्ते धनक्षयेनाहवशोभिना युधि ॥ ११ ॥

था, जो जलती हुई प्रलय कालकी अ-विके समान तेजस्वी इन्द्रके समान वीर और हिमाचल पर्वतके समान स्थिर था, सो वीर कर्ण धतराष्ट्र पुत्र दुर्योधनको शरण देकर आज मर कर, इस प्रकार पृथ्वीमें पडे हैं; जैसे वायुसे टूटा हुआ वृक्ष, ये देखो वृषसेनकी मा कर्णकी स्त्री पृथ्वीमें पड़ी हुई रोरही है और कहती है, कि तम्हारे गुरुने जो शाप दिया था इसहीसे पृथ्वीने तुम्हारे रथका पहिया पकड लिया, उसही समय वीर अर्जुनने

<u>PODE PODE DE CONTRACTO DE CONT</u>

कर्णं महाबाहुमदीनसत्वं सुषेणमाता स्दती भृशाती ॥ १२ ॥ अल्पावशेषोऽपि कृतो महात्मा शरिसक्षैः परिभक्षयद्भिः । द्रष्टुं न नः प्रीतिकरः शशीव कृष्णस्य पक्षस्य चतुर्दशोहे॥१३॥ सा वर्तमाना पतिता पृथिन्यामुत्थाय दीना पुनरेव चैषा। कर्णस्य वक्त्रं परिजिद्यमाणा रोस्यते पुत्रवधामितप्ता॥१४॥ [६११]

इति श्रीमहाभारते शतसाहरूयां संहितायां धैयासिक्यां स्त्रीपर्वणि स्त्रीविलापपर्वणि कर्णदर्शनो नामैकविंतातितमोऽध्यायः॥ २१ ॥

गान्वार्युवाच आवन्त्यं भीमसेनेन मक्षयन्ति निपातितम् ।
गृश्रगोमायवः ग्रूरं बहुबन्धुमबन्धुवत् ॥१॥
तं पद्य कदनं कृत्वा ग्रूराणां मधुसूदन ।
ग्रायानं वीरशयने रुषिरेण समुक्षितम् ॥२॥
तं स्गालाश्च कङ्काश्च कव्यादाश्च प्रथग्विधाः ।
तेन तेन विकर्षन्ति पद्य कालस्य पर्ययम् ॥३॥
श्रायानं वीरशयने ग्रूरमाकन्दकारिणम् ।
आवन्त्यमभितो नार्यो रुद्त्यः पर्युपासते ॥४॥
प्रातिपेयं महेष्वासं हतं भह्नेन वाह्निकम्।

ये सुषेणकी माता महापराक्रमी
महावीर कर्णको सोनेका कवच पहिने
पृथ्वीमें पहे देख मूच्छी खाकर गिर
पडी है। देखो मांस खानेवालोंने महातमा कर्णका शरीर थोडा ही छोडा है,
इस समय ये ऐसे भयानक दीखते हैं,
जैसे कृष्णपक्षका चन्द्रमा। यह उनकी
स्त्री उठकर और कर्णका सुख देखकर
रोती है और अपने पुत्रके शोकसे च्याकुल होगई है। (१२-१४) [६११]

की पर्वमें इकीस अध्याय समास । स्त्री पर्वमें बाईस अध्याय ।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये देखो

आवन्ती नगरीके मरे हुने राजाको गिद्ध और सियार खारहे हैं। जगत्में इनके अनेक बन्धु थे, परन्तु इस समय बन्धु-रहित मजुष्यके समान मीमसेनके हाथ-से मारे गये, इस वीरने अनेक वीरोंको युद्धमें मारा था, सो आज आप मर कर और रुधिरमें मीगकर वीर शय्यापर सोते हैं। आज उन्हें ही मांस खानेवाले सियार कींने आदि पक्षी इधर उधर खींचे फिरते हैं। समय बहा कठोर है, आज इस ही वीरकी स्त्री इसके चारों ओर बैठी रोरही है। (१-४)

हे कृष्ण ! ये देखो महा धनुष्धारी

प्रसुप्तमिव शार्द्छं पर्य कृष्ण मनखिनम् अतीवमुखवर्णोऽस्य निहतस्यापि शोभते। सोमस्येवाभिपूर्णस्य पौर्णमास्यां समुद्यतः पुत्रशोकाभितसेन प्रतिज्ञां चाभिरक्षता । पाकशासनिना संख्ये वार्धक्षत्रिर्निपातितः एकाद्शचमुर्भित्वा रक्ष्यमाणं महात्मभिः। सत्यं चिकीर्षता पर्य इतमेनं जयद्रथम् सिन्धुसौवरिभर्तारं दुर्पपूर्ण मनस्विनम् । भक्षयन्ति शिवा गृश्रा जनार्देन जयद्रथम् संरक्ष्यमाणं भार्याभिरतुरक्ताभिरच्यत। भीषयन्त्यो विकर्षन्ति गहनं निम्नमन्तिकात् ॥ १०॥ तमेताः पर्युपासन्ते रक्ष्यमाणं महाभुजम् । सिन्धुसौवीरभर्तारं काम्बोजयवनस्त्रियः यदा कृष्णामुपादाय प्राद्रवत्केकयैः सह। तदैव वध्यः पाण्डूनां जनार्दन जयद्रथः द्रःशलां मानयद्भिस्तु तदा मुक्तो जयद्रथः। कथमच नतां कृष्ण मानयन्ति सा ते पुनः सैषा मम सुता बाला विलपन्ती च दुःखिता।

विद्या करने परभी कर सत्यपालन था, ये महायश्व यग्रखी बाह्निक सोते हुए बार्द्छके समान गणसे मरे हुवे पृथ्वीमें पहे हैं। उनके मरनेपर भी ग्रख ऐसा सुन्दर दीखता है जैसे पूर्णमासीका चन्द्रमा। हे कृष्ण ! देखो पुत्रके शोकसे व्याकुल प्रतिज्ञा पालक अर्जुनके हाथसे मरे हुवे जयद्रथ पहे हुने हैं। महात्मा द्रोणाचार्यके रक्षा करने परभी अक्षोहिणीका व्युह तोड कर सत्यपालन करनेके लिये इन्हें मारा था, ये महायशस्त्री महाअभिमानी ज-

आज उन्हेंदी सियार और गिद्ध खारहे हैं। यद्यपि इनकी भक्त स्त्री उनकी रक्षा कर रहीं हैं तौ भी इनको डराकर गिद्ध और सियार उन्हें खींच कर बनमें ले जाना चाहते हैं। परन्तु काम्बोज वन देशकी स्त्री उनकी रक्षा कर रहीं हैं। जिस समय कैकेयदेशके क्षत्रियोंके समेत द्रौपदीको जयद्रथ ले भागे थे, उसी समय पाण्डव उन्हें मार डालते। परन्तु उस समय उन्होंने दु!श्रलाका मान रखनेके लिये

आत्मना हन्ति चात्मानमाक्रोशन्ती च पाण्डवान्॥१४॥ किं नुदुः स्तरं कृष्ण परं मम भविष्यति । यत्सता विषया बाला स्तुषाश्च निहतेश्वरा हा हा विरद्धःशलां पश्य वीतशोकभयामिव । शिरो भर्तुरनासाच घावमानामितस्ततः वार्यामास् यः सर्वीन्याण्डवान्युत्रगृद्धिनः। स हत्वा विपुलाः सेनाः खयं मृत्युवदां गतः ॥ १७ ॥ तं मत्तिमव मातङ्गं वीरं परमदुर्जयम् । परिवार्य रुद्दन्त्येताः स्त्रियश्चन्द्रोपमाननाः ॥ १८ ॥ [६२९]

इति श्रीमहाभारते० स्रीपर्वणि स्रीविस्तापपर्वणि गांघारीवाक्ये द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

गान्धार्युवाच- एष शक्यो हतः शेते साक्षात्रकुलमातुलः। धर्मज्ञेन इतस्तात धर्मराजेन संयुगे यस्त्वया स्पर्धते नित्यं सर्वत्र पुरुषर्भभ । स एव निहतः शेते मद्रराजो महावलः 11311 येन संगृह्णता तात रथमाधिरथेर्युधि ।

आज दुःशलाको क्यों विसरा दिया। आज वही हमारी पुत्री दुःश्वला अपने पतिको मरा हुआ देख पाण्डवोंको गाली देती है, अपना शिर और छाती पीटती है और रोती है। (५-१४)

मान्धाः

पान्धाः

आज वही ।

आज वही ।

पतिको मराः
देती है, अपः
वेटांकी गृह्वः
और क्या दुः।
और क्या दुः।
अोर क्या दुः।
वेदांकी गृह्वः।
वेदांकी गृह्वः। हे कृष्ण ! इससे अधिक सेरे लिये और क्या दुःख होगा जो मेरी पुत्री और बेटोंकी वह विधवा होकर रो रही हैं । ये देखो दुःशला अपने पतिका शिर न पाकर शोक और मयसे रहित मन-ष्यके समान चारों ओर दौडती है। अकेले जयद्रथने अभिमन्युकी रक्षा कर-नेके लिये आते हुने सब पाण्डवींको रोक दिया था, जिसने पाण्डवोंकी बहुत

सेनाका नाश कर दिया था, सोई जय-द्रथ आज मरे हुए पडे हैं उस महा योद्धा वीरके चारों ओर रोती हुई चन्द्र-माके समान मुखवाली स्त्री इस प्रकार बैठी हैं जैसे मतवाले हाथीके पास हथिनी । (१५-१८) [६२९]

> कीपवेंमें बाइस अध्याय ममाप्त । स्रीपर्वमें तेइस अध्याय।

गान्धारी बोली, हे कृष्ण ! ये सा-खात नकुलके मामा शल्य धर्म जानने-वाले युधिष्ठिरके हाथसे मर कर पृथ्वीमें पढे हैं। ये मद्र देशके महा बलवान राजा सदा अपनेको तुम्हारे समझते थे, इन्होंने

जयार्थं पाण्डुपुत्राणां तदा तेजोवधः कृतः अहो धिक्पइय शल्यस्य पूर्णचन्द्रसदर्शनम् । मुखं पद्मपलाशाक्षं काकैराद्रष्टमत्रणम् अस्य चामीकराभस्य तप्तकाञ्चनसप्रभा। आस्याद्विनिःसृता जिह्वा भक्ष्यते कृष्णपक्षिभिः॥५॥ युधिष्ठिरेण निहतं शल्यं समितिशोभनम्। रुदत्यः पर्युपासन्ते मद्रराजं कुलाङ्गनाः एताः सुसृक्ष्मवसना मद्रराजं नरर्षभम् । कोशंत्योश्य समासाय क्षत्रियाः क्षत्रियर्षमम् श्चाल्यं निपतितं नार्यः परिवार्याभितः स्थिताः। वासिता गृष्टयः पङ्के परिमग्नमिव द्विपम् शल्यं शरणदं शूरं पश्येमं वृष्णिनन्दन । श्रायानं वीरशयने शरैविंशकलीकृतम् एष शैलालयो राजा भगदत्तः प्रतापवान् । गजांक्रशघरः श्रीमान शेते सुवि निपातितः॥ १०॥ यस्य रुक्ममयी माला ज्ञिरस्येषा विराजते। श्वापदैर्भक्ष्यमाणस्य ज्ञोभयन्तीव मूर्घजान् ॥ ११ ॥

विजयके लिये कर्णका तेज नाश किया था, आज उसही श्रव्यके पूरे चन्द्रमाके समान सन्दर और कमलके समान नेत्र-यक्त मुखको कीवे खा रहे हैं। (१-४)

इसके मुखसे जो सोनेक समान जीम निकल आई है उसे पक्षी खा रहे हैं। युधिष्ठिरके हाथसे मरे हुए मद्रराज श्चल्यके चारों ओर वैठी हुई स्त्री रो रही हैं। ये उत्तम क्षत्री कुलमें उत्पन्न हुए पत्ला कपडा पहिननेवाली स्त्री पुरुष सिंह क्षत्रिय श्रेष्ठ शल्यको देख रो रही हैं। शल्यके चारों ओर बैठी स्नी इस प्रकार

रीती हैं, जैसे कीचडमें फसे हाथीके चारें ओर खडी उसी समयकी व्याई हाथिनी, ये ही श्रल्य शरण आयेकी शरण देते थे, वही वीर शल्य बाणोंसे कटे पडे हैं। (५-९)

हे कृष्ण ! ये पर्वत वासी महा प्रता-पवान श्रीमान राजा मगदत्त हाथीका अंक्र्य हाथमें लिये हुए पृथ्वीमें पहे हैं। जिसके शिर पर ये सोनेकी माला विराजमान है जसे वे मांस खानेवाले खाय रहे हैं। इस समय राजा मगदत्तके एतेन किल पार्थस्य युद्मासीत्सुदारूणम्। रोमहर्षणमत्युग्रं शक्तस्य त्वहिना यथा ॥ १२॥ योवयित्वा महाबाहुरेप पार्थ वनञ्जयस् । संशयं गर्मायस्या च क्रन्तीयुत्रेण पातितः ॥ १३॥ यस्य नास्ति समो लोके शौर्ये वीये च कश्चन । स एप निहतः शेते भीष्मो भीष्मकृदाहवे ॥ १४ ॥ पद्य ज्ञान्तनवं कृष्ण ज्ञायानं सूर्यवर्चसम्। युगान्त इव कालेन पतितं स्वीमस्वरात् एष तप्ता रणे राज्य राम्नतापेन वीर्यवास्। नरस्योंऽस्तमभ्येति स्योंऽस्तमिव केशव ॥ १६ ॥ शरतरुपगतं भीष्ममूर्ध्वरेतसमच्युतम् । शयानं वीरशयने पद्य श्रुतिपेविते 11 03 11 कर्णिनालीकनाराचैरास्तीर्य शयनोत्तमम् । आविद्य दोते भगवान् स्कन्द्रः द्यारवर्ण यथा। १८॥ अतृहरूर्णं गाङ्गयित्रिभिर्वाणैः समन्दितम्। उपाघायोपघानारन्यं दत्तं गाण्डीवघन्वना 11 89 11 पालयानः पितुः शास्त्रमृध्वेरेता महायशाः।

HELD OF THE STATE थर्डनके <del>पहा इसका घोर युद्ध हुआ</del> था उस युद्रको देखकर कीरोंके रॉये खडे होते थे। इन दोनोंका ऐसा युद्ध हुआ था, जैसे इन्हरें सङ्ग इत्राहरका; जन्तमें सहावाह्य मगद्व अर्जुनके हाथसे सारे गये अपने बलसे अर्जुनके हृदयमें सन्देह कर दिया था। (१०--१३)

हे इप्न ! बगर्ने जिसके समान कोई देवस्त्री बलबान् और बीर्यवान कोई नहीं है वह भी इस समय मरे पहे हैं। ये नहातेजस्त्री इस समय ऐसे शोमित

गिरे हुए मूर्च। अपने वापरूपी किरणोंसे शबुबोंको तपा कर अब अस्त होना चाहते हैं, उन्होंने जन्म भर अपना बीर्घ नष्ट नहीं किया, सो आज वीर शर शब्यापर सो रहे हैं, नालांक आदि नाणोंकी शुरुयापर सोते हुए भीष्मकी द्योमा इस समय ऐसी दीख़ती है जैसे सरकण्डीके बनमें सोते हुए मगदान् काचिकेयकी। वाणी-की शब्यापर मीध्म सोते हैं, अर्जुनने एक वाणका विकया भी इनको दिया इन्होंने अपने पिताकी आज्ञासे

एप ज्ञान्तनवः शेते माघवाप्रतिमो युधि धर्मात्मा तात सर्वज्ञः पारावर्धेण निर्णये । अमर्खे इव मर्त्यः सन्नेष प्राणानधारयत् नास्ति युद्धे कृती कश्चित्र विद्वान पराकमी। यत्र ज्ञान्तनवो भीष्मः शेतेऽच निहतः शरै।॥२२॥ खयमेतेन ऋरेण एच्छमानेन पाण्डवैः। धर्मज्ञेनाहवे मृत्युरादिष्टः सत्यवादिना ॥ २३॥ प्रनष्टः कुरुवंशश्च पुनर्येन समुद्धतः। स गतः कुरुभिः सार्धं महाबुद्धिः पराभवम् ॥ २४ ॥ धर्मेषु कुरवा कं तु पुरि प्रध्यन्ति माधव। गते देवव्रते खर्ग देवकल्पे नर्राभे ॥ २५ ॥ अर्जुनस्य विनेतारमाचार्यं सालकेस्तथा। तं पश्य पतितं द्रोणं क्ररूणां गुरुमुत्तमम् अस्त्रं चतुर्विषं वेद यथैव त्रिदशेश्वरः। भार्गवो वा महावीर्यस्तथा द्रोणोऽपि माधव ॥ २७ ॥ यस्य प्रसादाद्वीभत्सुः पाण्डवः कर्म दुष्करम् । चकार स हतः शेते नैनमस्त्राण्यपालयन

आज शर शब्यापर सोते हैं, इनके समान जगत्में कोई चीर नहीं हैं, ये धर्मज्ञ सव विद्या जाननेवाले सव विषयोंका निर्णय करनेवाले भीष्म देवर्तोके समान प्राण घारण कर रहे हैं, इनके समान कोई विद्यमान्, पराक्रमी और धर्मात्मा कोई नहीं है, सो आज बर बय्यापर सोते हैं, जब पाण्डवोंने इनको बुलाकर पूछा था कि आपकी मृत्यु कैसे होगी, तव सत्यवादी महात्मा धर्मजाननेवालेने अपनी मृत्यु पहिले ही बता दी थी। उद्धार किया था, सोई महाबुद्धिमान इस -दञ्जाको प्राप्त गए।(१४-२४)

हे कृष्ण ! जब देवतोंके समान भी-ष्म ही स्वर्गको चले गये तब कौरव लोग इस्तिनापुरमें जाकर क्या करेंगे। हे कुष्ण ! सात्यकीके गुरू और अर्जुन आदि कौरवोंके गुरू द्रोणाचार्य मर पडे हैं। ये महाबलवान् परश्चराम और इन्द्रके समान श्रुखविद्याको जानते थे, इन्हींके प्रतापसे अर्जुनने ऐसे ऐसे घोर कर्म

99999999999999999999999999999999866 यं पुरोघाय कुरव आह्वयन्ति सा पाण्डवान् । सोऽयं शस्त्रभृतां श्रेष्ठो द्रोणः शस्त्रैः परिक्षतः॥ २९॥ यस्य निर्देहतः सेनां गतिरग्नेरिवाभवत् । स भूमो निहतः दोते शांताचिरिव पावकः ॥ ३०॥ धनुर्मुष्टिरशीर्णेश्च हस्तावापश्च माधव। द्रोणस्य निइतस्याजौ दश्यते जीवतो यथा वेदा यसाच चत्वारः सर्वाण्यस्त्राणि केशव । अनपेतानि वै श्रुराद्यथैवादौ प्रजापतेः ॥ ३२ ॥ वन्दनाहीविमौ तस्य बन्दिभिर्वन्दितौ शुभौ। गोमायवो विकर्षन्ति पादौ शिष्यशतार्चितौ ॥ ३३ ॥ द्रोणं द्रपद्युत्रेण निहतं मधुसूदन । कृषी कृपणमन्वास्ते दुःखोपहतचेतना ॥ इह ॥ तां पदय रहतीमातां मुक्तकेशीमधोमुखीम्। हतं पतिसुपासन्तीं द्रोणं शस्त्रभृतां वरम् ॥ इदं ॥ बाणैभिन्नतनुत्राणं घृष्टसुन्नेन केशव। उपास्ते वै मुधे द्रोणं जिह्ला ब्रह्मचारिणी 11 38 II वेतकृत्वे च यतते कृषी कृपणमातुरा ।

| Reconstruction of the construction of the c हैं. शस्त्रोंने भी उनकी रक्षा नहीं करी। इन्हींके आश्रयसे कौरव लोग पाण्डवों-को युद्ध करनेके लिये ललकारते थे, वेही ग्रस्त जाननेवालोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य आज शस्त्रोंसे कटे हुए पृथ्वीमें पडे हैं। जिन्होंने अग्निके समान तेज धारण करके पाण्ड-वोंकी सेनाको असा किया था, वेही द्रोणाचार्य आज बुजती हुई आग्रेके समान मरे हुए पृथ्वीमें पहे हैं। इस समय भी उनके घतुषकी मुठी नहीं खुठी और करहरथीं भी नहीं छुटी, ये अभी भी जीते हुएके समान दीखते हैं।ये ब्रह्माके

समान चारों वेद और शस्त्र विद्याको जानते थे, देखो जिन द्रोणाचार्यके चर-णोंमें सैकडों शिष्य प्रणाम करते थे उन्ही प्रणाम करने योग्य सुन्दर चर-णोंको सियार खींचते किरते हैं, ये देखो, धृष्टशुम्नके हाथसे द्रोणाचार्यके पास दुःखसे मरी हुई कृपी बैठी है, देखो शक्कधारियोंमें श्रेष्ठ अपने पति मरे हुए द्रोणाचार्यके पास बाल खोले नीचा सुख करे रोती हुई कृपी बैठी है, धृष्टशुम्न के बाणोंसे श्ररीरका कवच कट गया है अब जटाधारिणी ब्रह्मचारिणी, सुकु-

दिष्ट्या नैनं महाराज दारुणं भरतक्षयम् । क्रुरुसंकन्दनं घोरं युगान्तमनुपश्यसि 11811 दिष्टया यूपध्वजं पुत्रं वीरं भूरिसहस्रदम् । अनेकक्रतुयज्वानं निहतं नानुपश्यसि 11911 दिष्ट्या स्तुषाणामाक्रन्दे घोरं विलपितं बहु। न श्रृणोषि महाराज सारसीनामिवार्णवे 11 8 11 एकवस्त्रार्धसंवीताः प्रकीणी सितसूर्वजाः। स्तुषास्ते परिघावन्ति इतापत्या इतेश्वराः 11011 श्वापदैर्भक्ष्यमाणं स्वमहो दिष्ट्या न पर्श्यास । छिन्नबाहुं नरव्याघमर्जुनेन निपातितम् 161 शलं विनिहतं संख्ये भूरिश्रवसमेव च। स्तुषाश्च विविधाः सर्वी दिष्ट्या नाचेह पश्यसि ॥९॥ दिष्ट्या तत्काश्चनं छत्रं यूपकेतोर्भहात्मनः। विनिकीर्ण रथोपस्ये सौमदत्तेन पर्यसि 11 09 11 अमृस्तु सूरिश्रवसो भार्याः सात्यिकना हतम्। परिवार्यानुशोचन्ति भर्तारमस्तिक्षणाः एता विलप्य करूणं भर्तृशोकेन कर्शिताः। पतन्त्रभिमुखा भूमौ कृपणं वत केशव 11 22 11

बहुत समझा रही है, कहती हैं, हे महा-राज ! अपने प्रारब्धहीसे इस मयानक कुरुकुल नाजको देखा, अपने प्रारव्धहीसे अनेक यह करनेवाले अपने पुत्र भूरि-श्रवाकी मृत्यु न देखी, अपने प्रारव्ध-हीसे सारसियोंके समान रोती हुई अपने बहुओंके शब्द नहीं सुनते हैं, महाराज ये आपके बेटेकी बहू एक साढी पहिने, बाल खोले, अनाथ होकर इधर उधर रोती फिरती हैं, अपने प्रारब्धहीसे सि-यारोंसे खाये जाते हुए अर्जुनके वाणसे

हाथ कटे भूरिश्रवाकी नहीं देखते, आप प्रारब्धहीसे राती हुई बहू स्त्रीका शब्द नहीं सनते । अपने पारव्धहीसे महात्मा भुरिश्रवाका शोकका भरा हुवा छत्र रथसे गिरता हुआ न देखा। (१-१०)

ये मुन्दर नेत्रवाली भूरिश्रवाकी स्त्री अपने मरे हुवे पतिके चारों ओर वैठी सोच कर रही है, जो पतिके शोकसे व्याकुल दीन स्वरसे रौती हुई भूरिश्रवा-की स्त्री पृथ्वीमें गिरती हैं। और कहती

विस्ताय २४]

हर्व विषे ।

हर्व विषे ।

हर्व विषे ।

हर्व विषे ।

हर्व विषे विस्तार विषे सिंद मकरोत्क थम ।

हर्व विस्तार पाय कर्क कृतवानिय साखकिः ।

हर्क सुक्त विस्ता हु शुरस्य यज्वनः ॥ १४ ॥

एको द्वास्यां हतः शेषे त्वस्यमंण वार्षिकः ।

एको द्वास्यां हतः शेषे त्वस्यमंण वार्षिकः ।

हिं तु वश्यित वै सत्सु गोष्टीषु च समासु च ॥१६ ॥

अपुण्यमयशस्य च कर्मेदं साखिकः स्वयम् ।

हिं तु यश्यवजस्येताः स्त्रियः कोशन्ति माघव ॥ १६ ॥

भायो यृण्व्वजस्येताः स्त्रियः कोशन्ति माघव ॥ १६ ॥

भायो यृण्व्वजस्येताः स्त्रियः कोशन्ति ॥ १७ ॥

अयं सरसनोत्क प्रेणं मित्राणामभयप्रदः ।

प्रदाता गोसहस्त्राणां क्षित्राणामभयप्रदः ॥ १८ ॥

अयं सरसनोत्कर्षो पीनस्तनविमदेकः ॥ १० ॥

विस्त तु वश्यसि संसत्सु कथासु च जनार्दन ।

अर्जुनस्य महत्कर्म स्वयं वा स किरीटसृत् ॥ २१ ॥

हस्येवं गईपित्वेषा तृष्णीमास्ते वराङ्गना ।

तोमतामनुशोचन्ति सपत्न्यः स्वामिव स्तुवाम् ॥२२॥

को यज्ञ करनेवालं आपका हाथ छलते

काट लिया। इससे भी अधिक पापकर्म

सारा, इस यश्चनाशक अध्ये भरे कर्मको करनेवालं आपका हाथ

वीर्त अर्जुनने कृष्णके देखते हस्य किस्ता कारेवालं कोरे सहस्तं जी
वीर्त अर्जुनने कृष्णके देखते देशते के यक्ष अर्वेत व्या कर्वेत, इतना कर्वकरः स्वर्वस्थव्य स्वरं स्व

\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*

गान्धारराजः शकुनिवेंलवान् सत्यविक्रमः। निहतः सहदेवेन भागिनेयेन मातुरुः ॥ २३ ॥ यः पुरा हेमदण्डाभ्यां व्यजनाभ्यां सा वीज्यते । स एव पक्षिभिः पक्षैः शयान उपवीज्यते यः स्वरूपाणि क्ररुते शतशोऽथ सहस्रशः। तस्य मायाविनो माया दरधाः पाण्डवतेजसा ॥२६॥ मायया निकृतिप्रज्ञो जितवान् यो युधिष्ठिरम्। सभायां विपुरुं राज्यं स पुनर्जीवितं जितः ॥ २६॥ शक्तन्ताः शक्रनिं कृष्ण समन्तात्पर्युपासते । कैतवं मम पुत्राणां विनाशायोपशिक्षितम् एतेनैतन्महद्वैरं प्रसक्तं पाण्डवैः सह। वधाय मम पुत्राणामात्मनः स्गणस्य च यथैव मम प्रत्राणां लोकाः शस्त्रजिताः प्रभो । एवमस्यापि दुर्बुद्धेर्लोकाः शस्त्रेण वै जिताः कथं च नायं तत्रापि पुत्रान्मे आतृभिः सह। **विरोधये**हजुप्रज्ञानमृजुर्मधुसृदन ॥ ३० ॥ ७०१]

इति श्रीमहामारतेo स्रोपर्वणि स्त्रीविरुापपर्वणि गांधारीवाक्ये चतुर्विद्योऽध्याय: ॥ २४ ॥

ये रानी चुप होगई हैं, भृरिश्रवाकी स्त्री सब रोरही हैं। (११-२२)

जो महापराक्रमी शकुनी अपने भानजे सहदेवके हाथसे मरे हुए पहे हैं, पहिले अनेक मनुष्य सोनेके दण्डेवाले पह्नासे इना करते थे, आज उनको ही कोवे अपने पह्नोंसे हवा कर रहे हैं, जो अपनी मायासे सेकडों सहस्रों रूप बनाता था, उस छलीकी माया सहदेवके तेजसे म्स होगई, जिस छलीने समामें युधिष्ठिरको जीता था और उनका सब राज्य है लिया था. वही शक्कनी आज मर

पृथ्वीमें पढा है, जिस छलीने मेरे पुत्रों का नाश करनेहीके लिये छल सीखा था सोई उस ही छलसे शकुनीको आज गिद और कीवे खा रहे हैं, इस ही दुष्टके कारणसे मेरे पुत्र और पाण्डवोंमें वैर हुआ था, इसहीसे मेरे प्रत्र और बान्धवोंके सहित मारा गया। जैसे मेरे ·पुत्र अस्त्रोंसे मरकर स्वर्गको गये हैं, ऐसे ही यह दुईद्धिं मरकर स्वर्गको गया।ऐसा नहीं कि यह दुष्टबुद्धि वहां भी कोमल ब्रद्धिनाले मेरे वेटोंमें वैर करादे। २३-३०)

द्रोणेन द्रुपदं संख्ये पश्य माघव पातितम्। महाद्विपरिवारण्ये सिंहेन महता हतम् पाञ्चालराज्ञो विमलं पुण्डरीकाक्ष पाण्डुरम् । आतपत्रं समाभाति शरदीव निशाकरः एतास्तु द्रुपदं वृद्धं स्तुषा भार्याश्च दुःखिताः । दध्वा गच्छन्ति पाञ्चाल्यं राजानमपसव्यतः ॥ १९॥ धृष्टकेतुं महात्मानं चेदिपुङ्गवमङ्गनाः। द्रोणेन निहतं शुरं हरन्ति हृतचेतसः 11 90 11 द्रोणास्त्रप्रभिहसैष विमर्दे मधुसुद्रन । महेष्वासो हतः शेते नचा हत इव द्रुमः एष चेदिपतिः श्रुरो घृष्टकेतुर्महारथः। श्रोते विनिहतः संख्ये हत्वा शत्रून् सहस्रशः॥ २२ ॥ वितुद्यमानं विद्दगैस्तं भाषीः पर्युपाश्चिताः । चेदिराजं हृषीकेश हतं सबलवान्धवम् ॥ ३३ ॥ दाशाहेत्त्रजं वीरं शयानं सत्यविक्रमम्। आरोप्याङ्के रुदन्त्येताश्चेदिराजवराङ्गनाः 11 88 11 अस्य पुत्रं हृषीकेश सुवक्त्रं चारुक्कुण्डलम्।

करते हैं। हे कृष्ण ! जैसे वनमें सिंहसे मरकर मतवाला हाथी मिरता है, ऐसे ही द्रोणाचार्यके वाणोंसे मरे हुए महा-राज द्रुपद पृथ्वीमें पडे हैं। महाराज द्रुपदका कमलके समान सफेद छत्र ऐसा दीखता है, जैसे शरद कालमें चन्द्रमा। दुःखसे मरी वृद्धे राजा द्रुपदकी स्त्री और वेटॉकी वहू राजा द्रुपदकी जलाकर और जनकी चिताकी प्रदक्षिण करके लीटी आती हैं। (१५-१९)

हे कृष्ण ! ये देखो चन्दनीक राजा धृष्टकेतुकी स्त्री अपने वीर पतिको द्रोणाचार्यके नाणोंसे मरा हुआ देख रो रही है। इस हीने महाधलुषधारी द्रोणा-चार्यके नाणोंको नाश किया था, अन्तर्मे उनहींके नाणोंसे इस प्रकार मारे गये, जैसे नदी बढनेसे युख ट्रट जाता है, इस ही महारथने युद्धमें सहस्रों वीरोंको मारा था, इस समय उसे पक्षी खारहे हैं, और इसकी स्त्री भी पास नेटी है। जो महापराकमी नीर तुम्हारी फूफीका पीता था, सो आज नान्धन और सेनाके सहित मारा गया। इसकी स्त्री इसे गोदमें ठेकर रोरही है। हे कृष्ण! ये प्रशासिक समरे पद्दय निकृत्तं बहुधा शरैः ॥ २५ ॥
पितरं त्नमाजिस्यं युष्यमानं परैः सह ।
नाजहातिपतरं वीरमवाणि मधुसुद्द ॥ २६ ॥
एवं ममाणि पुत्रस्य पुत्रः पितरमन्त्रगात् ।
हुर्योधनं महावाहो छक्ष्मणः परविरहा ॥ २७ ॥
विन्दानुविन्दावावन्त्यो पिततो पद्म माधव ।
हिमानते पुष्पिता शालै महना गलिताविव ॥ २८ ॥
काञ्चनाङ्गरवर्माणो वाणवङ्गयनुधरौ ।
काञ्चनाङ्गर्वणमानस्याक्तां ॥ २९ ॥
अवध्याः पाण्डवाः कृष्ण सर्व एव त्व्या सह ।
ये सुत्ता होणभीत्माम्यां कर्णाहेकर्तनात्कृपात् ॥३०॥
हुर्योधनाङ्गर्ह्रोणसुतात्सैन्धवाब जयद्रधात् ।
सोमदत्ताद्विकर्णांच ज्ञूत्वकृत्वन्तमणः ॥ ३१ ॥
ये हन्युः शक्ववेगेन देवानिष नरवभाः ।
त इमे निहताः संच्ये पर्य कालस्य पर्ययम् ॥३२ ॥
तातिभारोऽस्ति दैवस्य भुवं माधव कश्चन ।

देखो सुन्दर इण्डल और सुन्दर मुखवाला पृष्टकृत्वा पुत्र होणाचार्यके
वाणा पृष्टकृत्वा पुत्र होणाचार्यके
वाणा भूष्टकृत्वा पुत्र होणाचार्यके
वाणा प्रश्चेति वह्न सर्वे हुष्
सन्त सर्वे हिमे साणा सहिने हुष्
वन्द जोर कन्य पहिने बाण, खङ्ग
वन्द जोर कन्य पहिने बाण, खङ्ग
वन्द जोर कन्य पहिने बाण, खङ्ग
वारण किसे, निमेल माला पहिने हुष्
वेलके समान बांख और स्पाने ठलेन
निवासी तिन्द और अनुविन्द इस प्रकार

श्वाय २५] ११ लोग्वं। १५ लोग्वं। १५ लोग्वं। १६ लां १६ लोग्वं। १६ लां १६ लोग्वं में पुत्रा भार्मान्ता जादिन ॥ १६ लोग्वं में पुत्रा भार्मान्ता जादिन ॥ १६ लोग्वं में पुत्रा भार्मान्ता जादिन ॥ १६ लां १६ लोग्वं में पुत्रा भार्मान्ता जादिन ॥ १६ लां १६ लोग्वं में पुत्रा लोग्वं में पुत्रा भार्मान्ता लादिन ॥ १८ लां १६ लोग्वं में पुत्रा लोग्वं में पुत्रा लोग्वं में पुत्रा लोग्वं लोग्वं । १६ लां १

<del>,</del> तेन त्वां दुरवापेन शप्से चक्रगदाघरम् यस्मात्परस्परं बन्तो ज्ञातयः कुरूपाण्डवाः । उपेक्षितास्ते गोविन्द् तस्माङ्जातीन्वधिष्यसि ॥४३॥ त्वमध्युपस्थिते वर्षे पद्त्रिंशे मधुस्दन । ः हतज्ञातिईतामात्यो हतपुत्रो वनेचरः 11 88 11 अनाथवद्विज्ञातो होकेष्वनभिहिन्सतः। कुत्सितेनाम्युपायेन निधनं समवाप्यसि 11 84, 11 तवाप्येवं इतसुता निहतज्ञातिवान्धवाः। ब्रियः परिपतिच्यन्ति चर्यता भरतस्त्रियः 11 88 11 वैशस्यायन उवाच-तचल्रुक्तवा वचनं घोरं वासुदेवो महामनाः । उवाच देवीं गान्धारीमीषद्भ्युत्समयन्निव 11 63 11 जानेऽहमेतद्प्येवं चीर्णं चरसि क्षत्रिये। दैवादेव विनइयन्ति बृष्णयो नात्र संशयः 11 88 11 संहर्ती वृष्णिचक्रस्य नान्यो मद्वियते शुभे। अवध्यास्ते नरैरन्यैरपि वा देवदानवैः 11 86 11 परस्परकृतं नाशं यतः प्राप्स्यन्ति यादवाः । इत्युक्तवित दाशाहें पाण्डवास्त्रस्वेतसः॥ वभृदुर्भेश संविद्रा निराशाखापि जीविते ॥ ५० ॥ [७५१]

इति श्रीमहामारते रातसाहरूयां संहितायां वैदासिक्यां सीपर्वति सीविसापरवंति गांधारीहापदाने पंचविंशोऽच्यादः ॥३५॥ ॥ समाप्तं च सीदिलापरवे ॥

ANNOROUS DE MONTO DE MONTO DE LA MONTO DE LA MONTO DE MO नाश देखते रहे । इस लिये उस कर्मका फल मोगो। मैंने जो अपने पविकी सेवा से तप किया हो तो उससे मेरा वचन सत्य होय, तुमने कीरव और पाण्डबीका युद्ध करनेथे न रोका, इससे तुम भी अपनी जातिका नारा करोगे। हे कृष्ण! अवसे छत्तीसर्वे वर्ष अपने बेटे, पाते-जाती और बन्धुवासे हीन होकर अनायके समान वनमें दृष्ट रुपायसे मारे जानोंते।

वैष्ठे ये इस्इलकी स्त्री रोती फिरती हैं ऐसेही तुम्हारी स्त्री पुत्र और बान्धवींसे हीन होकर रोवेंगी । (३९-४६)

श्रीवैशम्पायन स्नीन बोले, देवी गाः न्यारीके ऐसे भयानक वचन सुनकर श्रीकृष्ण इंसकर बोले, हे गान्वारी ! तुम जो कहती हो सो पहिले ही हमने विचार लिया था, प्रारव्धहीसे यदुवंशिः योंके नाशका समय आगया

# व्हार्य । वहर्ष्ट्र । वहर्ष्ट्र । वहर्ष्ट्र साथ मनः क्षाः । हर्षे निषमं गताः ॥१॥ नमीर्षुमत्यन्तमानिनम् । हुरुकृतं साथ मन्यसे ॥२॥ ह्रामां शासनातिगम् । वहर्ष्ट्र साथ मन्यसे ॥३॥ गायाधातुमिहेच्छासे ॥३॥ गायाधातुमिहेच्छासे ॥३॥ गायाधातुमिहेच्छासे ॥३॥ गायाधातुमिहेच्छासे ॥३॥ गायाधातुमिहेच्छासे ॥३॥ वहर्षे योऽतीतमनुशोचति । वहर्षे योऽतीतमनुशोध्यम् । वहर्षे योऽतीतमनुशोध्यम् । वहर्षे योऽतीतमनुशोध्यम् । वहर्षे योऽतीतमनुशोध्यम् । वहर्षे योऽतीत्वा । १०॥ वहर्षे योऽतीत्वा । वहर्षे योधिष्ठस्म ॥७॥ वहर्षे योधिष्ठस्म । वहर्षे योधिष्ठस्म । वहर्षे योधिष्ठस्म ॥७॥ वहर्षे योधिष्ठस्म । वहर्षे योधिष्ठस्म ॥७॥ वहर्षे योधिष्ठस्म ॥०॥ वहर्षे योधिष्ठस्म ॥०॥ वहर्षे योधिष्ठस्म ॥०॥ वहर्षे योधिष्ठस्म । वहर्पे योधिष्ठस्म । वहर्षे योधिष्ठस्म । वहर्ये योधिष्ठस्म । वहर्ये योधिष्ठस्म । वहर्ये योध अथ श्राद्धपर्व । श्रीमगवानुवाचु- उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गान्धारि मा च शोके मनः क्रथाः। तवैव ह्यपराधेन क्रुरवो निषनं गताः यत्त्वं पुत्रं दुरात्मानमीर्षुमत्यन्तमानिनम्। दुर्योघनं पुरस्कृत्य दुष्कृतं साधु मन्यसे निष्ट्ररं वैरएरुषं बृद्धानां शासनातिगम्। कथमात्मकृतं दोषं मय्याघातुमिहेच्छासि मृतं वा यदि वा नष्टं योऽतीतमनुशोचति । दुःखेन रुभते दुःखं द्वावनथौं प्रपद्यते तपोर्थीयं ब्राह्मणी घत्त गर्भ गौर्वोहारं घावितारं तुरङ्गी। शुद्धा दासं पशुपालं च वैद्या वधार्थीयं क्षत्रिया राजपुत्री॥५॥ वैज्ञम्पायन उवाच तच्छ्रुरुत्वा वास्तुदेवस्य पुनरुक्तं वचोऽपियम् । तृष्णीं बभूव गान्धारी शोकन्याकुळळोचना धृतराष्ट्रस्तु राजिषैनिगृद्यावुद्धिजं तमः।

पर्यपृच्छत धर्मज्ञो धर्मराजं युधिष्ठिरम्

मेरे सिवाय देवता और दानव भी नहीं मार सकते। वे परस्पर लडके नष्ट हो जायगे। श्रीकृष्णके ऐसे वचन सुन पाण्डवींने घवडाकर अपने जीनेकी आशा छोड दी। (४७—५०)[७५१] स्त्रीपर्वमें पचीस अध्याय समाप्त । स्त्रीविलापपर्वे समाप्त ।

> स्त्रीवर्वमें छन्त्रीस अध्याय । (३) श्राद्धपर्वे ।

श्रीकृष्ण बोले, हे गान्धारी ! अब तम उठो शोक मत करो; ये कुरुवंशका नाश तुम्हारे ही अपराधसे हुआ है, तुमने पहिले महाअभिमानी दुरात्मा निष्ठर लडाईके प्यारे और बढोंकी बाजा

अवश्य विश्व स्वाप्त । [ क्ष्य प्रवर्ष विश्व स्वाप्त स युधिष्ठिर ज्याच—द्ञायुतानामयुतं सहस्राणि च विंजातिः। धृतराष्ट्र उवाच—युधिष्ठिर गतिं कां ते गताः पुरुषसत्तम । युधिष्ठिर उवाच- यैर्ह्नतानि कारीराणि इष्टैः परमसंयुगे ।

ये त्वत्र निहता राजन्नन्तरायोधनं प्रति। यथा कथाश्चित्युरुवास्ते गतास्तूत्तरान् कुरून् धृतराष्ट्र उवाच – केन ज्ञानवलेनैवं पुत्र पश्यसि सिद्धवत् । तन्मे वद महाबाहो श्रोतव्यं यदि वै मया 11 86 11 युधिष्टिर उवाच- निदेशाद्भवतः पूर्वं वने विचरता मया। तीर्थयात्राप्रसङ्गेन संप्राप्तोऽयम्बग्रहः 11 28 11 देवर्षिलीमशो दष्टस्ततः पाप्तोऽसम्यनुस्मृतिम् । दिव्यं चक्षरि प्राप्तं ज्ञानयोगेन वै पुरा ध्तराष्ट्र उवाच - अनाधानां जनानां च सनाधानां च भारत। कचित्तेषां शरीराणि घक्ष्यसे विधिपूर्वकम् न येषामस्ति संस्कर्ता न च येऽत्राहिताग्रयः। वयं च कस्य क्र्यामा बहुत्वात्तात कर्मणाम् ॥ २२ ॥ यान्सुपर्णाश्च गृञ्राश्च विकर्षन्ति यतस्ततः। तेषां त कर्मणा लोका भविष्यन्ति युधिष्ठिर ॥ २३॥ वैश्वम्पायन उवाच-एवमुक्तो महाराज कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः। आदिदेश सुधर्माणं घीम्यं सूतं च सञ्जयम् ॥ २४॥ विदुरं च महावृद्धिं युगुत्सुं चैव कौरवम्।

मुख दिये वीर क्षत्री धर्मसे मरे हैं, वे नि।सन्देह ब्रह्मलोकका गए, जो डरोंके भीतर मारे गए उनका जनम उत्तर क्ररुदेशमें होगा। (१२--१७)

राजा धृतराष्ट्र बोले, हे पुत्र ! तुम कौनसे ज्ञानके बलसे सिद्धके समान उन्हें देख रहे हो। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे राजन् ! में जब आपकी आज्ञासे वनमें घूमता था, तब तीर्थवात्राके समय देवपि लोमश मेरे पास आये थे, उन्हींकी कुपा और योगसे यह शक्ति होगई है। महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे

ଞ୍ଚଳକଟ ଉପକଟ ଓ ଅପର୍କ ଷ୍ଟର୍କର ବର୍ଷ କଳେ ଅନ୍ତର୍ଗ କଳେ ଅନ୍ତର୍ଗ କଳେ ଅନ୍ତର୍ଗ କଳେ ଅନ୍ତର୍ଗ ଅନ୍ତର୍ଗ ଅନ୍ତର୍ଗ ଅନ୍ତର୍ଗ ଅନ୍ତର ନ ନ ନ କଳାକ ଅନ୍ତର୍ଗ ଷ୍ଟର୍ଗ ଷ୍ଟର୍କର ବର୍ଷ କଳେ ଅନ୍ତର୍ଗ କଳେ ଅନ୍ତର୍ଗ କଳେ ଅନ୍ତର୍ଗ युधिष्ठिर ! अब तुम विधिपूर्वक अनाथ और सनाथ श्वत्रियोंके शरीर जलावोगे ना ? जिनका संस्कार करनेवाला कोई नहीं है और जो आहितापि नहीं हैं ऐसे ही बहुत हैं। जिन्हें गिद्ध और सियार खींच रहे हैं, उनकी गति कर्मके अनु-सार होवे । (१८-२३)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महा-राज । घृतराष्ट्रकी ऐसी आज्ञा सुन क्रन्तिपुत्र युधिष्ठिरने दुर्योधनके पुरोहित सुधर्मा, अपने पुरोहित घौम्य, सञ्जय,

हानारतं।

हिन्द्रसेनसुलांश्रेव मृत्यात् स्वायः ॥ १५ ॥ सवतः सारयन्त्वेषां प्रेतसार्थण्यशेषतः।
यथा चानाथविकिश्रिच्छरीरं न विनद्यति ॥ १६ ॥ श्वासनाद्धमराजस्य क्षत्ताः स्वायः स्वयः।
सुधर्मा धौम्यसिक इन्द्रसेनाद्यस्तथः ॥ १७ ॥ चन्द्रनागुरुकाष्ठानि तथा कालीयकान्युतः।
पृतं तैलं च गन्धांश्र क्षीमाणि वसनानि च ॥ १८ ॥ समाहृत्य महाहीणि दान्दणां चैय सञ्चयानः।
स्थांश्र महाहीणि दान्दणां च ॥ १२ ॥ विताः कृत्वा प्रयत्नेन यथा सुल्यात्रशियानः।
स्वायानसुरुव्ययाः शास्त्रहृष्टेन कर्मणा ॥ १० ॥ हुर्योपनं च राजानं आतृश्रस्य शताधिकानः।
श्रास्त ग्रं च राजानं भ्रिश्रवसमेव च ॥ ११ ॥ सहसासिकं राजानं क्षेमधन्यां च सुरुयवं व पार्थिवम् ॥ १२ ॥ वृह्ननं सोमदत्तं च सुज्यांश्र शताधिकानः।
स्वायानसुरुव्यांश्र शक्तां च पार्थिवम् ॥ १२ ॥ वृह्ननं सोमदत्तं च सुज्यांश्र शताधिकानः।
सुपामन्युं च विकान्तमुत्तमोजसमेव च ॥ १४ ॥ वृह्मनं सोमदत्तं च सुज्यांश्र शक्तां विता वनाकरः, साः सोसिकं त्र सुरुवेन कर्ते। (१४-१६)
सहाराज ग्रंथिहिरको आञ्चाते विदुरः, सज्ञ सुर्था करेते। दश्वरः, श्रम्भा लिले विधिके अस्तरः, सुप्ता ग्रंभा त्र स्वर्णः, सुप्ता स्वरंभा स्वर्णः, सुरुवेन, रुप्ता सुप्ता सु

और श्रम्नोंकी चिता बनाकर, सावधान होकर, शास्त्रमें लिखी विधिके अनुसार सव राजोंको कमसे फूका। सौ भाइयोंके सहित राजा दुर्योधन, श्रत्य, भूरिश्रवा, जयद्रथ, अभिमन्यु, सुदर्शन, लक्ष्मण, राजा धृष्टकेतु, बृहह्रल, सोमद्त्र, सैकडॉ सुझग, राजा क्षेमधन्त्रा, विराट, द्रुपद,

99999999999999999999999999999999999 कर्ण वैकर्तनं चैव सहपुत्रममर्पणम्। केकयांश्र महेष्वासांख्रिगताश्च महारधान 11 38 11 घटोत्कचं राक्षसेन्द्रं बक्तम्रातरमेव च। अलम्बुषं राक्षसेन्द्रं जलसन्धं च पार्थिवम् एतांश्चान्यांश्च सुबहून्पार्थिवांश्च सहस्रकाः। घृतधाराहुतैदींग्रैः यावकैः समदाह्यम् ॥ ईट ॥ पितृमेधाश्च केषाश्चित्प्रवर्तन्त महात्मनाम् । सामभिश्चाप्यगायनत तेऽन्वशोचन्त चापरैः साम्रामुचां च नादेन स्त्रीणां च रुदितखनः।। कइमलं सर्वभूतानां निशायां समप्यत 118011 ते विध्माः प्रदीप्ताश्च दीष्यमानाश्च पावकाः। नभसीवान्वदृश्यन्त ग्रहास्तन्वभ्रसंवृताः ये चाष्यनाथास्तत्रासन्नानादेशसमागताः। तांश्च सर्वान्समानाय्य राज्ञीन्कृत्वा सहस्रकाः॥ ४२ ॥ चित्वा दारुभिरव्यग्रैः प्रभूतैः खेहपाचितैः। दाहयामास तान्सर्वान्विदुरो राजशासनात्॥ ४३॥ कारियत्वा कियास्तेषां क्रकराजो युधिष्ठिरः। भृतराष्ट्रं पुरस्कृत्य गङ्गामभिमुखोऽगमत् ॥ ४४ ॥ [७९५] इति श्रीमहाभारते श्राद्वपर्वणि कुरूणामीध्वेदेहिके पहुविश्वोऽध्याय: ॥ २६ ॥

उत्तमीजा,कीशल्य,द्रीपदीके पुत्र,शक्कनी, अचल, वृपक, राजा मगदत्त, पुत्रोंके सहित कर्ण, महाधनुपधारी कैकेय, राक्षसराज घटोत्कच, बकासुरका माई अलम्बुप और जलसिन्धु आदि सहसों राजोंको घीके धारासे जलती हुई अग्निमं फूक दिया, किसी महात्माका पिताके समान कर्म किया, बाह्मण साम और ऋगवेदकी ऋचा पढने लगे। उस रा-त्रीमें स्त्रियोंके रोनेके शब्दसे मिला

हुआ वेदका शब्द भी मयानक हुआ, वे धृंआरहित जलती हुई चिता आकाश्वतक दिखाई देने लगी, और जो अनेक
देखोंसे आये हुए अनाथ क्षत्री वहां मरे
हुए पढे थे, विदुरने राजाकी आज्ञासे
उन सबको इकहा करके चिताओं में घी
डालकर जला दिया। इस प्रकार राजा
श्विधिर उनको फूककर राजा ख्वराष्ट्रको आगे करके गङ्गाको चले। (२७-४४)
धार्यर्वम ब्र्बास अथाय समास। (७१५)

यस्य नास्ति समो वीर्ये प्रथिव्यामपि पार्थिवः ॥१०॥ योऽचुणीत यशः श्ररः प्राणैरपि सदा सुवि । कर्णस्य सत्यसङ्घस्य संग्रामेष्वपलायिनः क्ररुध्वमुदकं तस्य भ्रातुरक्किष्टकर्मणः। स हि वः पूर्वजो भ्राता भास्करान्मय्यजायत ॥ १२ ॥ कुण्डली कवची शूरो दिवाकरसमप्रभः। श्रुत्वा तु पांण्डवाः सर्वे मातुर्वेचनमप्रियम् कर्णमेवानुशोचन्तो भूयः क्वान्ततराऽभवत्। ततः स पुरुषच्याघः क्रुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः 11 88 11 उवाच मातरं वीरो निःश्वसन्निव पन्नगः। यः शरोर्मिध्वेजावर्तो महाभुजमहाग्रहः 11 29 11 तलशब्दानुनदितो महारथमहाहृदः। यस्येषुपातमासाच नान्यस्तिष्ठेद्धनञ्जयात् 11 88 11 कथं पुत्रो भवत्याः स देवगर्भः पुराऽभवत् । यस्य बाह्यतापेन तापिताः सर्वतो वयम् 11 63 11 तमग्रिमिव वस्त्रेण कथं छादितवत्यसि ।

सब पाण्डवींसे लडता था, जो दुर्योध-नका सेनापति था, जिसके समान जग-तमें कोई राजा बलवान नहीं था, जो कमी युद्धको छोडकर नहीं भागता था, जो जगत्में यशको प्राणोंसे मी अधिक प्यारा मानता था, वह कर्ण तुम्हारा बढा माई था। पहिले सूर्यके तेजसे वही सूर्य समान तेजस्थी कवच और कुण्डल धारण किये मेरे गर्भसे उत्पन्न हुआ था, इसलिये तुम लोग उसे भी जल दो।(६-१३)

. अपनी भाताके ऐसे कठोर वचन

कुल होगये। तब पुरुषसिंह युधिष्ठिर सांपके समान लम्बा खांस लेकर अपनी मातासे बोले. ये बाणरूपी तरङ्ग ध्वजारूपी बडी बडी तरङ्ग, बडे बडे हाथरूपी ग्राहतालीके शब्दरूपी शब्द और रथ-रूपी मौरसे युक्त कर्णरूपी समुद्र पहिले तम्हारे देवरूपी गर्भसे कैसे उत्पन्न हुए थे, जिसके वाणोंको अर्जुनके सिवाय और कोई नहीं सह सक्ता था, जिसके बाहबलसे हमलोग सदा डरते रहते थे, जिसके बाहुबलसे धृतराष्ट्रके पुत्र राज्य करते थे, उस अग्निरूपी वीर्यको तुमने

यस्य बाहुबलं भीत्यं घार्तराष्ट्रैस्पासितम् 11 86 11 डपासितं यथाऽसाभिर्वलं गाण्डीवधन्वनः। भूमिपानां च सर्वेषां वलं वलवतां वरः 11 99 11 नान्यं ज्ञन्तीसुतात्कर्णाद्गृहाद्रधिनां रथी । स नः प्रथमजो भ्राता सर्वशस्त्रभृतां वरः 11 20 11 असृत तं भवत्यग्रे कथमद्भतविक्रमम्। अहो भवत्या मंत्रस्य गृहनेन वर्थ हताः 11 38 11 निधनेन हि कर्णस्य पीडितास्तु सवान्धवा।। अभिमन्योर्विनाशेन द्वीपदेयवधेन च । २२ ॥ पाञ्चालानां विनादोन क्ररूणां पतनेन च। ततः शतगुणं दुःखमिदं मामस्प्रशङ्गश्रम् ॥ २३ ॥ कर्णमेवातुक्रोचामि दह्याम्यग्नाविवाहितः। नेह सा किंचिदपाप्यं भवेदपि दिवि स्थितम् ॥ २४ ॥ न चेदं वैशसं घोरं कौरवान्तकरं भवेतु। एवं विलप्य वहुलं घर्मराजो युधिष्ठिरः। 11 29 11 च्यरुद्च्छन्नकै राजंश्रकारास्योदकं प्रभुः। ततो विनेदुः सहसा श्चियस्ताः खलु सर्वेदाः॥ २६॥ अभितो या स्थितास्तत्र तस्मित्रदक्कर्मणि। तत आनाययामास कर्णस्य सपरिच्छदाः 11 29 11 स्त्रियः क्रस्पनिर्धीमान् त्रातुः प्रेम्णा युधिष्टिरः।

बाणोंको महारथ कर्णके सिवाय और कोई राजा नहीं सह सक्ता था, यह सब शस जाननेवालोंमें श्रेष्ठ इस लोगोंके वंडे भाई थे, उस महा वलवानको तुम-ने पहिले कैसे उत्पन्न किया था, तुमने यह कथा आज तक हम लोगोंसे नहीं कही, इसलिये हमारा नाश होगया। कणें, अभिमन्यु द्रौपदीके पांचीं पुत्र

दुःख हुआ है और सब दुःखसे सौ
गुना यह दुःख होगया। इस समय हम
कर्णके योकसे ऐसे न्याकुल होगये हैं
जैसे कोई अग्निसे जलता है, यदि हम
पहिले इस बातको जानते, तो यह कुरुकुलका नाश न होता। (१३-२५)

धर्मराज युधिष्टिरने इस प्रकार धीरे धीरे रो। कर कर्णको जल दिया। फिर राजा युधिष्टिरने कर्णकी सब स्त्रियोंको

स ताभिः सह धर्मात्मा पेतक्रलमनन्तरम् ॥ २८॥ चकार विधिवद्धीमान्धर्भराजी युधिष्ठिरा। पापेनासौ मया श्रेष्ठो भ्राता ज्ञातिर्निपातितः ॥ २९॥ अतो मनासि यहुत्रं स्त्रीणां तन्न भविष्यति । इत्युक्तवा स तु गङ्गाया उत्तताराकुलेन्द्रियः ) भ्रातृभिः सहितः सर्वेर्गङ्गातीरसुपेयिवान् ॥ ३० ॥ [ ८२५ ]

इति श्रीमहाभारते वातसाहरूयां संहितायां वैवासिक्यां स्नीपर्वणि स्नीविकापपर्वणि

कर्णगृदज्ञत्वकथने सप्तविद्योऽध्यायः ॥ २० ॥

समाप्तिसदं खोपवं । भतः परं शांतिपर्व भविष्यति।

तस्यायमाद्यः श्लोकः ।

वैशम्पायन उवाच-कृतोदकास्ते सुहृदां सर्वेषां पाण्डुनन्दनाः । विदुरो धृतराष्ट्रश्च सर्वीश्च भरतस्त्रियः

बुलाकर माईके ओरसे उनका सब कर्म किया। फिर बोले कि 'इस कुन्तीकी गुप्त-ता के कारण हमने अपने वहे माई कर्ण को मार डाला, इस लिये इम जाप देते हैं कि स्त्रियोंके मनमें इसके बाद कोई बात गुप्त न रहेगी।" ऐसा

कहकर सप माईयोंके समेत महाराज युधिष्ठिर ज्याकल होकर गङ्गासे निकले और तटपर बैठे । (२५-३०) [८६५]

खीपर्व समाप्त !

| ०६                       |                                         | महाभारत ।                                        |
|--------------------------|-----------------------------------------|--------------------------------------------------|
| eeeeeee                  | 699999999999999999999999999999999999999 | 999999999999999999999999999999999                |
|                          |                                         |                                                  |
|                          |                                         |                                                  |
|                          | आदित                                    | त। श्लोकसंख्या—                                  |
|                          | १ आदिपर्व                               | १०७८                                             |
|                          | २ सभापर्व                               | २७६२                                             |
|                          | ३ वनपर्व                                | ११८९२                                            |
|                          | ४ विराटपर्व                             | <b>२२६२</b>                                      |
|                          | ५ उद्योगपर्व                            | ६५९०                                             |
|                          | ६ भीष्मपर्व                             | 6,690                                            |
|                          | ७ द्रोणपर्व                             | 98%9                                             |
|                          | ८ कर्णपर्व                              | 6020                                             |
|                          | ९ शल्यपर्व                              | 2027                                             |
|                          | १० सौधिकपर्व                            | 29 O P                                           |
|                          | ११ स्त्रीपर्व                           | \$26<br>\$0.5                                    |
|                          | _                                       |                                                  |
|                          | ₹                                       | वियाग ५८०९९                                      |
|                          |                                         |                                                  |
|                          |                                         | •                                                |
|                          |                                         | ,                                                |
|                          |                                         |                                                  |
|                          |                                         |                                                  |
|                          |                                         |                                                  |
| )<br> <br>  <del> </del> | 269999999999999999999999999999999999999 |                                                  |
|                          | <del></del>                             | ; <b>eec666666666666666666666666666666699</b> }; |
|                          |                                         |                                                  |

# भू भीपर्वकी विषयसूची ।

अध्याय

विषय

पृष्ठ

अध्याय

विषय

पृष्ठ

(१) जलप्रदानिक पर्व।

१ जनमेजयके पूछनेपर वैश्वम्पाय-नके द्वारा धृतराष्ट्रका विलाप वर्णन और सञ्जयका यथायोग्य वार्ता कहके उन्हें धीरज देना । ३

२ धतराष्ट्रको विदुरका घीरज देना। ९

३-७ धृतराष्ट्रका विदुरके निकट तत्वकथा सुननेकी इच्छा तथा विदुरके द्वारा तत्त्वज्ञानकी कथाका वर्णन । १६ ▼ ८ धृतराष्ट्रके शोकित होनेपर वेद-च्यास सुनिका दैवोपाख्यान कहके उनका शोक द्र करना । २२

९ विदुरका फिर धतराष्ट् को घीरज देके उनका शोक दूर करना २७

१० धतराष्ट्रका गान्धारी प्रभृति रोती हुई स्त्रियोंको सङ्ग लेकर वरे हुए पुत्र पौत्रादिके प्रेतकार्य निभानेके लिये वाहन पर चढके नगरसे बाहिर हो-ना।

११ कुपाचार्य, कृतवर्मा और अञ्च-त्थामाको धृतराष्ट्र तथा गान्धारीसे मेंट होनी और रात्रिके समय शिविरमें सोये हुए पाश्चालादि वीरोंके मारनेका दृता-न्त कहके उनके समीपसे प्रस्थान करना । ३९

१२ युधिष्ठिरादिका धतराष्ट्रके समी-प जाके उनसे मिछना और धतराष्ट्रके द्वारा छोइमय भीमका विनाशादि। ४२

१३ कुष्णके वचनसे धृतराष्ट्रका क्रोध ग्रान्त होना। ४५

१४ गान्धारीको व्यासदेवका उपदेश । ४८

१५ मीमसेनसे गान्धारीकी वार्चा५१ गान्धारीकी कोघदृष्टिसे युधिष्ठिरका कुनख होना, गान्धारीका पाण्डवोंको धीरज देना, द्रौपदी, कुन्ती और गान्धारीके मिलन समयमें परस्पर विलाप करना और दिन्यदृष्टिसे गान्धारीका युद्धभूमि देखना

( २ ) स्त्रीविलापपर्व ।

'n

१६ घतराष्ट्रका राजरानियोंको सङ्ग लेकर युद्धभूमि देखनेके लिये जाना, राज रानियोंका रोदन तथा मुर्चिछत होना

और श्रीकृष्णको उनकी दुर्दशा दिखाके
गान्धारीका विलाप करना तथा आभिमन्युको मरा हुआ देखके उत्तराका विलाप।
१७-२५ क्रोधसे आर्च गान्धारीका
कृष्णको शाप देना और कृष्णका उसे
अनुमोदन करना।
६४
इ श्राद्धपर्व।
२६ कृष्णका गान्धारीकी निन्दा
करना, धृतराष्ट्रके पूछनेपर युधिष्टिरका

भरी हुई सेनाकी गिनती बताना और स्वर्ग निशेषमें गये हुए वीरोंका च्यान्त कहना तथा युद्धमें मरे हुए पुरुषोंका दाह करना। ९७ २७ मरे हुए पुरुषोंका तर्पण, कर्णका तर्पण करनेके निमित्त कुन्तीके द्वारा पाण्डवोंको कर्णका परिचय मिलना।१०२ युधिष्ठिरका निलाप पूर्वक कर्णका तर्पण करना, और स्त्री पर्वकी समाप्ति।

